प्राचीन और मध्यकालीन हिन्दी काव्य

MASTER OF ARTS HINDI LANGUAGE AND LITERATURE

M23HD02DC

Self Learning Material

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

Vision

To increase access of potential learners of all categories to higher education, research and training, and ensure equity through delivery of high quality processes and outcomes fostering inclusive educational empowerment for social advancement.

Mission

To be benchmarked as a model for conservation and dissemination of knowledge and skill on blended and virtual mode in education, training and research for normal, continuing, and adult learners.

Pathway

Access and Quality define Equity.

प्राचीन और मध्यकालीन हिन्दी काव्य

Course Code: M23HD02DC
Semester-I

Discipline Core Course
MA Hindi Language and Literature
Self Learning Material

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

Documentation

M23HD02DC
प्राचीन और मध्यकालीन हिन्दी काव्य
Semester I

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from Sreenarayanaguru Open University. Printed and published on behalf of Sreenarayanaguru Open University by Registrar, SGOU, Kollam.

www.sgou.ac.in

ISBN 978-81-966843-1-0

Academic Committee

Dr. Jayachandran R. (Chair)
Dr. P.G Sasikala
Dr. Pramod Kovapurath
Dr. R. Sethunath
Dr. Jayakrishnan J.
Dr. B Ashok
Dr. Vijayakumar B.

Development of the content

Dr. Sudha T., Krishna Preethi A.R.

Review

Content : Dr. Jayakrishnan J.
Format : Dr. I.G. Shibi
Linguistics : Dr. Jayakrishnan J.

Edit

Dr. Jayakrishnan J.

Scrutiny

Dr. Sophia Rajan, Dr. Karthika M.S., Dr. Indu G. Das, Dr. Sudha T., Krishna Preethy A.R.

Co-ordination

Dr. I.G. Shibi and Team SLM

Design Control

Azeem Babu T.A.

Production

November 2023

Copyright

© Sreenarayanaguru Open University 2023

Message from Vice Chancellor

Dear,

I greet all of you with deep delight and great excitement. I welcome you to the Sreenarayanaguru Open University.

Sreenarayanaguru Open University was established in September 2020 as a state initiative for fostering higher education in open and distance mode. We shaped our dreams through a pathway defined by a dictum ‘access and quality define equity’. It provides all reasons to us for the celebration of quality in the process of education. I am overwhelmed to let you know that we have resolved not to become ourselves a reason or cause a reason for the dissemination of inferior education. It sets the pace as well as the destination. The name of the University centers around the aura of Sreenarayanaguru, the great renaissance thinker of modern India. His name is a reminder for us to ensure quality in the delivery of all academic endeavors.

Sreenarayanaguru Open University rests on the practical framework of the popularly known “blended format”. Learner on distance mode obviously has limitations in getting exposed to the full potential of classroom learning experience. Our pedagogical basket has three entities viz Self Learning Material, Classroom Counselling and Virtual modes. This combination is expected to provide high voltage in learning as well as teaching experiences. Care has been taken to ensure quality endeavours across all the entities.

The university is committed to provide you stimulating learning experience. The post graduate programme in Hindi has a unique blend of language and literature. The focus of the programme is on enhancing the capabilities of the learners to undergo a deeper comprehension of the sociology of the forms in literature although the required credits are in place to learn other aspects of Hindi literature. Care has been taken to expose the students to recent trends in Hindi literature. We assure you that the university student support services will closely stay with you for the redressal of your grievances during your studentship.

Feel free to write to us about anything that you feel relevant regarding the academic programme.

Wish you the best.

Regards,
Dr. P.M. Mubarak Pasha

01.11.2023

Contents

BLOCK-01 प्राचीन काव्य एवं भक्ति आन्दोलन........ 01

इकाई : 1 आदिकालीन साहित्य-सिद्ध, नाथ, जैन और रासो साहित्य-अमीर खुसरो- विद्यापति पदावली 2 पद (Detailed Study)........ 02

इकाई : 2 मध्यकालीन धार्मिक दर्शन........ 11

इकाई : 3 भक्ति आंदोलन, भक्तिकाव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ........ 16

इकाई : 4 सन्त काव्य आल्वार सन्त, निर्गुण भक्ति- ज्ञानाश्रयी प्रेमाश्रयी........ 21

BLOCK-02 निर्गुण भक्ति काव्य........ 27

इकाई : 1 निर्गुण भक्ति का स्वरूप........ 28

इकाई : 2 कबीर........ 37

इकाई : 3 हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा........ 48

इकाई : 4 मल्लिक मुहम्मद जायसी........ 54

BLOCK-03 सगुण भक्ति काव्य........ 70

इकाई : 1 वैष्णव भक्ति का उदय, वैष्णव भक्ति के प्रतिष्ठापक आचार्य - रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, विष्णुस्वामी, निंबार्काचार्य, श्री वल्लभाचार्य........ 71

इकाई : 2 रामकाव्य धारा-रामकाव्य संप्रदाय, रामकाव्य- प्रमुख कवि, प्रवृत्तियाँ........ 78

इकाई : 3 कृष्ण भक्ति काव्य, विविध संप्रदाय, अष्टछाप, प्रमुख कृष्ण भक्त कवि-सूरदास, नंददास, मीरा और रसखान, कृष्ण भक्ति काव्य-प्रवृत्तियाँ........ 86

इकाई : 4 तुलसीदास, तुलसी-प्रमुख रचनाएँ, तुलसी की समन्वय साधना, रामचरितमानस, अयोध्या काण्ड(6-10) 97

BLOCK-04 रीतीकालीन काव्य........ 119

इकाई : 1 रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ, प्रमुख कवि, रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ........ 120

इकाई : 2 केशवदास (3 Dohas) Detailed Study........ 129

इकाई : 3 बिहारी (5 Dohas) Detailed Study........ 137

इकाई : 4 भूषण (3 Dohas) Detailed Study........ 148

प्राचीन काव्य एवं भक्ति आन्दोलन

BLOCK-01

Block Content

Unit 1: आदिकालीन साहित्य-सिद्ध, नाथ, जैन और रासो साहित्य-अमीर खुसरो- विद्यापति पदावली 2 पद (Detailed Study)

Unit 2: मध्यकालीन धार्मिक दर्शन

Unit 3: भक्ति आंदोलन, भक्तिकाव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ

Unit 4: सन्त काव्य आल्वार सन्त, निर्गुण भक्ति-ज्ञानाश्रयी प्रेमाश्रयी

इकाई : 1

आदिकालीन साहित्य-सिद्ध, नाथ, जैन और रासो साहित्य-अमीर खुसरो- विद्यापति पदावली 2 पद

Detailed Study

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- आदिकालीन साहित्य से परिचित होता है
- सिद्ध, नाथ और जैन साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त करता है
- रासो साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त करता है
- अमीर खुसरो से परिचित होता है
- विद्यापति और उनके पदावली के बारे में समझता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के आरंभिक काल को आदिकाल कहा जाता है। हिन्दी साहित्य का आदिकाल आचार्य शुक्ल के अनुसार संवत 1050 वि. से लेकर संवत 1375 वि. तक माना जा सकता है। इस समय की रचनाएँ साहित्य के विकास के अध्ययन के लिए अत्यंत आवश्यक है। परंतु अधिकांश आदिकालीन ग्रंथों का उपलब्ध न होना, प्रमाणिकता में संदिग्धता, काल निर्धारण में सामंजस्य न बैठना आदि कठिनाईयों के कारण साहित्य को विद्वानों, आचार्यों द्वारा व्यवस्थित धारणा बना लेना बहुत ही कुशलता का कार्य है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

सिद्ध साहित्य, नाथ साहित्य, रासो काव्य, वीरकाव्य, डिंगल-पिंगल भाषा

Discussion / चर्चा

आदिकालीन साहित्य में होने वाली प्रवृत्ति तत्कालीन परिस्तिथियों के संदर्भ में देखी जानी चाहिए। आदिकालीन साहित्य में श्रृंगार व वीर रस का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। उस समय होने वाले युद्धों से वीर रस का वर्णन व राजाओं द्वारा राजकन्याओं से होने वाले विवाह से श्रृंगार रस का वर्णन स्वाभाविक रूप से हुआ है। इसके अलावा सामन्तों की स्तुतिगान किन्तु व्यापक राष्ट्रीयता का अभाव, इतिहास कम कल्पना अधिक, युद्धों का सजीव वर्णन, वीरगाथाओं की भाषा का डिंगल होना, प्रबन्धात्मकता और मुक्तकात्मकता, प्रकृति चित्रण, रासो ग्रन्थ, छन्दों का बहुआयामी प्रयोग आदि तत्कालीन साहित्य की विशेषताएँ हैं।

1.1.1 आदिकालीन साहित्य

> ▶ हिन्दी साहित्य का सबसे विवादग्रस्त काल

हिन्दी साहित्य के इतिहास में लगभग 8 वीं शताब्दी से लेकर 14 वीं शताब्दी के मध्य तक के काल को आदिकाल कहा जाता है। हिन्दी साहित्य का आदिकाल जिसे वीरगाथाकाल, चारणकाल, सिद्ध सामन्त युग, बीजवपन काल, वीरकाल आदि अनेक संज्ञाओं से विभूषित किया है। इस काल में एक तरफ संस्कृत के ऐसे बड़े-बड़े कवि उत्पन्न हुए जिनकी रचनाएँ संस्कृत काव्य-परम्परा की चरम सीमा पर पहुँच गयी थी तो दूसरी ओर अपभ्रंश के कवि अत्यन्त सरल एवं सहज भाषा में अपने मार्मिक भाव प्रकट कर रहे थे। वस्तुतः इस काल में जहाँ एक ओर सिद्ध, नाथ और जैन साहित्य का निर्माण हुआ और धर्माश्रय प्राप्त होने के कारण वह फूलता-फलता रहा।

1.1.1.1 सिद्ध साहित्य

> ▶ आदिकालीन हिन्दी साहित्य का एक प्रमुख रूप

बौद्ध धर्म के दो शाखाएँ हो गयी थीं: हीनयान और वज्रायान। वज्रायानों को सिद्ध कहा गया है। भारतीय साधना के इतिहास में 8 वीं शताब्दी में सिद्धों की सत्ता देखी जाती है। वज्रायान तत्त्व के प्रचार के लिए जनभाषा में जिस साहित्य को लिखा गया वह सिद्ध साहित्य कहलाता है। राहुल सांकृत्यायन और हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 84 सिद्धों का उल्लेख किया है। जिसमे सरहपा, शबरपा, कण्हपा, लूइपा, डोम्भिपा, कुक्कुरिपा आदि हैं। जिनमें 23 सिद्धों की रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। सिद्ध कवियों की रचनाएँ मुख्यतः दो काव्य रूपों में मिलती हैं- 'दोहाकोश' तथा 'चर्यपाद'। 'दोहा' संग्रह को 'दोहाकोश' के नाम से तथा चर्यापाद को 'चर्यागीत' के नाम से जाना जाता है। सिद्धों ने पुरानी रूढ़ियों परम्पराओं और बाह्य आडम्बरों, पाखण्डों का जमकर विरोध किया है। इसिलिए इन्होंने वेदों, पुराणों, शास्त्रों को खुलकर निंदा की है। वर्ण व्यवस्था, ऊँच-नीच और ब्राह्मण धर्मों के कर्मकाण्डों पर प्रहार करते हैं।

1.1.1.2 नाथ साहित्य

> ▶ संत-साहित्य पर नाथों का गहरा प्रभाव

नाथ संप्रदाय के प्रवर्तक मत्स्येन्द्रनाथ एवं गोरखनाथ माने गए हैं। सिद्ध साहित्य में आई विकृतियों के विरोध में नाथ साहित्य का जन्म हुआ। नाथों की साधना प्रणाली "हठयोग" पर आधारित है। नाथ सम्प्रदाय में नौ नाथ आते हैं। गोरखनाथ नाथ साहित्य के आरम्भकर्ता माने जाते हैं। गोरखनाथ की रचनाओं का संकलन 'गोरखबानी' है। उनके द्वारा रचित 40 रचनाएँ मानी जाती हैं। गोरखनाथ ने अपने शिष्यों को नारी से दूर रहने का उपदेश दिया। 'शिव' ही आदि नाथ है। इनके अतिरिक्त मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ एवं जालंधर नाथ प्रमुख हैं।

1.1.1.4 जैन साहित्य

> ▶ जैन धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु

आदिकाल की उपलब्ध सामग्री में जैन साहित्य के सर्वाधिक ग्रन्थ हैं। भारत के पश्चिम क्षेत्र में जैन साधुओं ने अपने मत का प्रचार हिन्दी कविता के माध्यम से किया। जैन कवियों ने आचार, रास, पाश, चरित, फागु आदि विभिन्न शैलियों में साहित्य लिखा। जैन साहित्य का सर्वाधिक लोकप्रिय रूप "रास" ग्रन्थ माने जाते हैं। रास एक तरह का गेयरूपक है। हिन्दी में रास काव्य का प्रवर्तन शालिभद्र सूरि द्वारा लिखित 'भारतेश्वर बाहुबली रास' से माना जाता है।

1.1.1.5 रासो साहित्य

'रासो काव्य' आदिकालीन कविता की मुख्य धारा है। इस में वीरता एवं श्रृंगार प्रधान दोनों प्रवृत्तियों का चित्रण किया गया है। इस युग के महत्वपूर्ण रासो काव्यों में पृथ्वीराज रासो,

खुमान रासो, बीसलदेव रासो, परमाल रासो आदि प्रमुख हैं। रासो काव्यों के लेखक राजाओं की वीरता की प्रशंसा राज दरबार में रहकर करते थे तथा अपने काव्य के माध्यम से उन्हें प्रेरित किया करते थे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी 'रासक' को एक शब्द भी मानते हैं और काव्य-भेद भी उनके अनुसार जो काव्य रासक छन्द में लिखे जाते थे, वे ही हिन्दी में 'रासो' कहलाने लगे।

▶ चारण कवियों द्वारा रचित

1.1.2 आदिकालीन साहित्य की विशेषताएँ

हिन्दी साहित्य के आरंभिक काल को आदिकाल कहने से उस व्यापक पृष्ठभूमि का बोध होता है जिस पर आगे का साहित्य खड़ा है। भाषा की दृष्टि से हम इस काल के साहित्य में हिन्दी के आदि रूप का बोध प्राप्त कर सकते हैं, आदिकाल की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1.1.2.1 वीर रस की प्रधानता

आदिकालीन साहित्य रचने वाले कवि प्रायः दरबारी कवि थे। इन कविगणों ने अपने सुख के लिए नहीं बल्कि अपने स्वामी के सुख के लिए काव्य की रचना की है। प्रायः तत्कालीन सभी राजपूत राजाओं के दरबारों में आश्रित चारण या भाट रहते थे जो अवसर आने पर अपने राजाओं की प्रशंसा व उनके युद्ध कौशल का चित्रण करते थे। वीररस परिपूर्ण थे इनकी रचनाएँ।

▶ वीरगाथात्मकता

1.1.2.2 युद्धों का सजीव चित्रण

वीरगाथा काव्य में वीर रस के साथ-साथ कवियों ने युद्ध कौशल की प्रस्तुति अनेक रूपों में की है। आदिकाल के दरबारी कवियों का प्रमुख उद्देश्य अपने आश्रय दाता व राजा की शूरवीरता तथा पराक्रम को दर्शाना रहा है। युद्धों का चित्रण इस काल में मुख्य विषय रहा, वह वर्णन सुंदर सजीव एवं यथार्थ है। इसका कारण यह है कि आश्रयदाताओं के साथ कवि भी तलवार लेकर रणभूमि में उतरते थे। अतः कवियों ने युद्धों को अपनी आँखें से देखा था। इसलिए इन कवियों ने सैन्यबल, युद्ध सामग्री, योद्धाओं की आशा-निराशा, उत्साह तथा विभिन्न मनोदशाओं का वास्तविक वर्णन किया है।

▶ आश्रय दाता की शूरवीरता तथा पराक्रम को दर्शाना

1.1.2.3 ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण

इस युग में ऐतिहासिक व्यक्तियों के आधार पर चरित काव्य लिखने का चलन हो गया था। जैसे – पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो, कीर्तिलता आदि। लेकिन इनमें प्रामाणिकता का अभाव है। इस काल के कवियों ने अपने आश्रयदाताओं का अपनी कल्पना से अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया है। जिसमें न ऐतिहासिक तथ्य है न सत्यता। इन कवियों के चरित्रनायक ऐतिहासिक तो है लेकिन कवियों द्वारा दिये गये घटनाओं के क्रम, विभिन्न नामावली, संवत तथा तिथियाँ संदिग्ध है। जिसमें ऐतिहासिकता का अभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

▶ प्रामाणिकता का अभाव

1.1.2.4 श्रृंगार एवं अन्य रसों का समावेश

आदिकाल में वीर एवं श्रृंगार रस के अलावा सभी रस का प्रयोग हुआ है। युद्ध का वर्णन होने से वीर रस की योजना इन में अनायास ही हो गई है। वीरों के मनोभाव एवं अदम्य उत्साह का जैसा हृदयग्राही वर्णन रासो काव्य में किया गया है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। पृथ्वीराज रासो में ऐसे अनेक मर्मस्पर्शी स्थल है जहां वीर रस का पूर्व परिपाक हुआ है। कुछ युद्ध शौर्य प्रदर्शन के लिए तथा सुंदर राजकुमारियों से विवाह करने के निमित्त लड़े जाते थे। इस कारण

▶ वीर रस के साथ -साथ श्रृंगार रस का वर्णन

श्रृंगार रस के भावपूर्ण वर्णनों का समावेश भी इन काव्य ग्रंथों में हो गया है। राजकुमारियों की सौंदर्य का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया गया है। वीरगाथात्मकता इस काल की प्रधान प्रवृत्ति है। यह अधिकांशतः रासो काव्य के अंतर्गत मिलती है।

1.1.2.5 डिंगल एवं पिंगल भाषा का प्रयोग

▶ वीर रचनाओं में डिंगल भाषा और कोमल भावों के लिए पिंगल भाषा का प्रयोग

आदिकालीन साहित्य में डिंगल भाषा (राज्यस्थानी मिश्रित अपभ्रंश भाषा) का प्रयोग हुआ है। इस काल के रासो ग्रंथ पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो, बीसलदेव रासो, खुमान रासो आदि में डिंगल भाषा का प्रयोग अधिक मात्रा में पाया जाता है। वीर रस के कठोर भावों को व्यक्त करने के लिए डिंगल भाषा का उपयोग होता था। इसे उँचे स्वर में पढ़ना पडता था। कोमल भावों की अभिव्यक्ति के लिए पिंगल भाषा (ब्रज मिश्रित अपभ्रंश भाषा) का प्रयोग होता था। इस में कोमल शब्दों का प्रयोग होता था।

1.1.2.6 आश्रयदाताओं की प्रशंसा एवं उनका गान

▶ कविगण आश्रयदाताओं की प्रशंसा एवं उनका स्तुति गान करना

रासो ग्रंथों के रचयिता चारण कहे जाते थे और अपने आश्रयदाता राजाओं की प्रशंसा में काव्य रचना करना अपना परम कर्तव्य मानते थे। अपने चरित्र नायक की श्रेष्ठता एवं प्रतिपक्षी राजा की हीनता का वर्णन अतिशयोक्ति में करना इन चारणों की प्रमुख विशेषता थी। दरबारी कवि होने के कारण इन कवियों ने आश्रय दाता की शौर्य, यश एवं वैभव का कल्पनिक एवं अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया है। 'पृथ्वीराज रासो' एवं 'खुमान रासो' इसी कोटि की प्रशंसापरक रचनाएँ है। इसमें कवि ने अपने चरित्र नायक को राम, कृष्ण, युधिष्ठिर अर्जुन और हरिश्चंद्र से भी श्रेष्ठ बताते हुए विशेष दृष्टि से उनकी महत्ता प्रतिपादित की है।

1.1.3 अमीर खुसरो

▶ अमीर खुसरो खड़ी बोली के आदि-कवि

अबुल हसन अमीर खुसरु चौदहवीं सदी के आसपास दिल्ली के पास रहने वाले एक प्रमुख कवि (शायर), गायक और संगीतकार थे। खुसरो को हिन्दुस्तानी खड़ीबोली का पहला लोकप्रिय कवि माना जाता है। वे अपनी पहेलियों और मुकरियों के लिए जाने जाते हैं। सबसे पहले उन्हीं ने अपनी भाषा को हिन्दवी का उल्लेख किया था। वे फारसी के कवि भी थे। उनको दिल्ली सल्तनत का आश्रय मिला हुआ था। उनके ग्रंथो की सूची लम्बी है। साथ ही इनका इतिहास स्रोत रूप में महत्त्व है। अमीर खुसरो निज़ामुद्दीन औलिया के शिष्य थे।

1.1.1.4 विद्यापति

▶ मैथिली भाषा के सर्वोपरि कवि

भारतीय साहित्य की भक्ति परंपरा के प्रमुख कवियों में से एक और मैथिली भाषा के सर्वोपरि कवि के रूप में जाने जाते हैं। इनका संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश एवं मातृ भाषा मैथिली पर समान अधिकार था और उनकी रचनाएँ संस्कृत, अवहट्ट, एवं मैथिली तीनों में मिलती हैं। इनके काव्यों में मध्यकालीन मैथिली भाषा के स्वरूप का दर्शन किया जा सकता है। मिथिलांचल के लोकव्यवहार में प्रयोग किये जाने वाले गीतों में विद्यापति की श्रृंगार और भक्ति रस में पगी रचनाएँ हैं। 'पदावली' 'कीर्तिपताका' और 'कीर्तिलता' इनकी अमर रचनाएँ हैं। मैथिल कवि कोकिल विद्यापति, तुलसी, सूर, कबीर, मीरा आदि कवियों से पहले के कवि हैं।

विद्यापति की प्रसिद्धि का मूल आधार उनकी रचना 'पदावली' है। पदावली में भक्ति विषयक पद भी हैं और श्रृंगार विषयक पद भी। इसलिए विद्वानों ने यह प्रश्न उठाया कि विद्यापति भक्त कवि हैं या श्रृंगार कवि? विद्यापति को भक्त कवि मानने वालों में जार्ज ग्रियर्सन, बाबू श्याम सुंदरदास, तथा बाबू ब्रजनंदन सहाय आदि आते हैं। लेकिन दूसरी ओर आचार्य

▶ पदावली में भक्ति विषयक पद

रामचन्द्र शुक्ल, बाबूराम सक्सेना, डॉक्टर रामकुमार वर्मा और बच्चन सिंह जैसे विद्वानों ने विद्यापति को श्रृंगारिक कवि कहा है।

1.1.4.1 विद्यापति का सौन्दर्य वर्णन

हिन्दी साहित्य जगत में विद्यापति का अद्वितीय स्थान है। अभिनव जयदेव की उपाधि से विभूषित विद्यापति आदिकाल के मुख्य कवियों में से एक हैं। विद्यापति की मुख्य तीन रचनाओं में 'कीर्तिलता', 'कीर्तिपताका' (अवहट्ठ भाषा) और 'विद्यापति पदावली' (मैथिली भाषा) में हैं। विद्यापति को सर्वाधिक प्रतिष्ठा पदावली से मिली। पदावली में राधा-कृष्ण के माध्यम से नायक-नायिका के रूप-सौन्दर्य और उनके श्रृंगार वर्णन की अद्भुत झाँकी यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत करते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने विद्यापति के पदावली में नायक-नायिका के श्रृंगार वर्णन के सम्बन्ध में लिखा है –"आध्यात्मिक रंग के चश्मे आजकल बहुत सस्ते हो गए हैं। उन्हें चढ़ाकर जैसे कुछ लोगों ने 'गीत गोविन्द' के पदों को आध्यात्मिक संकेत बताया है, वैसे ही विद्यापति के इन पदों को।" अर्थात विद्यापति श्रृंगारी कवि हैं न कि भक्त कवि। अगर उन्हें कोई भक्त कवि की संज्ञा दी जाती है तो वह आध्यामिक रंग के चेश्मे से देखते हैं। क्योंकि पदावली में अलौकिक जगत के राधा-कृष्ण को आधार बनाकर, लौकिक जगत में व्याप्त यहाँ के नायक-नायिकाओं के प्रेम सम्बन्ध और उनके वयः संधि का वर्णन किया गया है। इसीलिए आलोचकों के बीच "विद्यापति भक्त कवि हैं या श्रृंगारी कवि" यह बहस का मुद्दा है।

▶ 'विद्यापति पदावली' की भाषा-मैथिली

पदावली

पदावली में राधा-कृष्ण के माध्यम से नायिका के वयः संधि, नख-शिख, सद्यः स्नाता का जितनी सूक्ष्मता से गहराई में जाकर नायिका के रूप-सौन्दर्य का वर्णन किया गया है, उससे इन्हें भक्ति कवि कम, श्रृंगारी कवि ज्यादा कहा जाना चाहिए। एक श्रृंगारी कवि होने के कारण विद्यापति के काव्य में नायिका के रूप-सौन्दर्य का अद्भुत चित्रण देखने को मिलता है। विद्यापति शैव थे, 'पदावली' में राधा-कृष्ण की लीलाओं का वर्णन है जिनके आधार पर श्यामसुन्दर दास ने उन्हें परम वैष्णव कृष्ण भक्त कवि माना है, किन्तु पदावली में राधा-कृष्ण की भक्तिभाव की अपेक्षा उनके मांसल, मादक तथा मुक्त श्रृंगार के प्रसंग अधिक हैं। जिनकी मादकता को कवि निराला ने 'नागिन की लहर' कहा है।

▶ राधा-कृष्ण की श्रृंगार का वर्णन

1) सरस बसंत समय भल पाओल, दखिन पवन बह धीरे॥
सपनहु रूप बचन एक भाखिएए, मुख सो दुरि करु चीरे॥
तोहर बदन सम चान होअर्थिनहिं, जइयो जतन विहि देला।
कए बार काटि बनाओल नव कए, तइओ तुलित नहिं भेला॥
लोचन-तूअ कमल नहिं भए एक, से जग के नहिं जाने॥
से फेरि जाए नुकेलाइ जलमय, पंकज निज अपमाने॥
भनइ विद्यापति सुनु बर यौवति, ई सब लछमी समाने।
राजा सिबसिंघ रूपन रायन लखिमा दे पति भाने।

शब्दार्थ

सरस = रसमय

पाओल	=	पाया
बहु	=	बहता है
सपनेहु	=	स्वप्न में
रूप बचन एक भाखिए	=	एक व्यक्ति ने कहा
दुरि करु	=	दूर करो
चीरे	=	वस्त्र, अंचल
तोहर	=	तुम्हारे बदन मुख
चान	=	चन्द्रमा
होअथि नाहिं	=	नहीं हो सकता
जाइयो	=	यद्यपि
जतन	=	यत्न
विहि	=	विधाता
कए बेरि	=	कितनी बार
नव कए	=	नूतन करके
तइओ	=	तथापि
तूल	=	तुल्य
नुकेलाइ	=	छिप गया

प्रसंग - नायिका अपनी सखी से अपने सौन्दर्य की प्रशंसा कर रही है।

नायिका की सौन्दर्य वर्णन

व्याख्या - रसमय वसन्त का अच्छा समय उपस्थित हो गया और मलयपवन धीरे-धीरे बहने लगा। नायिका कहती है कि स्वप्न में ही किसी पुरुष ने आकर मुझ से कहा-अरी मुख पर से अंचल तो हटाओ। यद्यपि विधाता अनेक भी प्रयत्न करें फिर भी तुम्हारे मुख के समान चन्द्रमा नहीं हो सकता है। विधाता ने अनेक बार काट-छांट कर चन्द्रमा का निर्माण किया तो भी वह तुम्हारे मुख-तुल्य नहीं हुआ। संसार में यह कौन नहीं जानता है कि कमल तुम्हारे नेत्रों की समानता नहीं कर सकता, फिर वही कमल निज अपमान से लज्जित होकर पानी में जाकर छिप गया। कवि विद्यापति कहते हैं - हे श्रेष्ठ युवती! सुनो ये सब लक्ष्मी के समान हैं। लखिमादेवी के पति राजा शिवसिंह इस रहस्य को जानते हैं। इस पद की नायिका रूपगर्विता नायिका है।

विशेषण - व्यतिरेक और अतिशयोक्ति का संकर प्रयोग हुआ है।

2) बिरह व्याकुल बकुल तरुतर, पेखल नन्द-कुमार से।
नील नीरज नयन सयं सखि, ढरह नीर अपार रे।।
पेखि मलयज-पंख मृगमद, तामरस घनसार रे।
निज पानि-पल्लव मूंदि लोचन, धरनि पड़ असंभार रे।।
बहइ मंद सुगंद सीतल, मंद माल्या-समीर रे।
जनि प्रलयकालक प्रबल पावक, दहइ सून सरीर रे।।
मानि-मनि तजि सुदरि चलु जहं, राए रसिक सुजान रे।

सुखद स्त्रुती अति सरस दंडक, कवि विद्यापति भान रे।।

शब्दार्थ

बिरह व्याकुल	=	वियोग-व्यतित
बकुल	=	मौलीश्री/एक पुष्प विशेष
पेखल	=	देखा
नीरज	=	कमाल
सयं उसे, ढरइ	=	गिरता है
अपार	=	अत्यधिक
मलयज	=	चन्दन
तामरस	=	कमल
पानि-पल्लव	=	पल्लव सदृश हाथ
धरनि	=	धरणी
असंभार	=	बेधड़क
बहइ	=	बहती है
जनि	=	मानो
प्रलयकालक	=	प्रलयकालीन
प्रबल	=	भीषण /भयानक
पावक	=	अग्नि
दहइ	=	जलाती है
सुदरि	=	रमणी
जहं	=	जहाँ
सुखद	=	आनंददायक
स्त्रुती	=	सुनने में
दंडक	=	एक छन्द का नाम

प्रसंग – राधा ने मान किया है जिस कारण कृष्ण विरह से व्याकुल हैं। कृष्ण की दूती अथवा राधा की सखी कृष्ण की विरह-दशा का वर्णन करती हुई राधा से मान छोड़ने और कृष्ण से मिलने का आग्रह करती है।

व्याख्या - हे राधे ! बकुल वृक्ष के नीचे वियोग से व्यथित कृष्ण को मैंने देखा। उनके नील कमल तुल्य नेत्रों से अत्यधिक अश्रुपात हो रहा था। घिसे चंदन, कस्तूरी, कमल एवं कपूर को देख-देख कर वे अपने सुकोमल हाथों से आँखों को मूंद कर पृथ्वी पर बेधड़क गिर पड़ते थे। शीतल, मन्द, सुगन्ध मलयानिल जब बहता था तो ऐसा मालूम होता था कि मानो वह प्रलयकालीन भीषण अग्नि की तरह उनके शून्य शरीर को जला रहा हो। (काम-पीड़ितों के लिए उपर्युक्त वस्तु दुःखदायी होती है)। अधिक कम्पन से उनकी चमकदार मुक्ता-माला टूट कर पृथ्वी पर इस प्रकार गिर पड़ी मानो वायु द्वारा आन्दोलित तमाल वृक्ष से फूल गिरे हों। हे सुन्दरी! मान को छोड़ कर प्रियतम के पास चलो।

▶ कृष्ण का विरह वर्णन

> विद्यापति की रागात्मकता, सौन्दर्य के प्रति समर्पण, भावुक दृष्टि

विशेषण : वृत्त्यनुप्रास तथा लुप्तोपमा, रूपक, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग किया है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

आदिकाल में रासो साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। आदिकालीन साहित्य में तत्कालीन सामाजिक जीवन का सम्पूर्ण चित्रण हमें मिलते हैं। हिन्दी का प्रथम महाकाव्य आदिकाल के रासो ग्रंथ 'पृथ्वीराज रासो' को माना जाता है। अमीर खुसरो की पहेलियाँ खड़ी बोली हिन्दी में लिखी गई है। अभिनव जयदेव की उपाधि से विभूषित विद्यापति आदिकाल के मुख्य कवियों में से एक हैं। विद्यापति की मुख्य तीन रचनाओं में 'कीर्तिलता', 'कीर्तिपताका', अवहट्ठ भाषा और 'विद्यापति पदावली' मैथिली भाषा में हैं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. आदिकालीन साहित्य के बारे में टिप्पणी लिखें।
2. सिद्ध साहित्य से आप क्या जानते हैं? सिद्धों की संख्या कितनी है?
3. नाथ और जैन साहित्य के बारे में टिप्पणी लिखें।
4. रासो साहित्य के बारे में अनुच्छेद लिखें।
5. अमीर खुसरो कौन है? हिन्दी साहित्य में उनका स्थान निर्धारित कीजिए?
6. पठित पद के आधार पर विद्यापति के बारे में लेख लिखें।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 2

मध्यकालीन धार्मिक दर्शन

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- भारत में भक्ति के उदय से परिचित होता है
- पूर्व मध्ययुगीन भारत में धार्मिक विकास की प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त करता है
- मध्ययुगीन भारत की सामाजिक परिस्थिति समझता है
- सांस्कृतिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि को जानता है

Background / पृष्ठभूमि

भारतीय धर्म साधना में भक्ति भावना अहम स्थान रखती है। 'भक्ति' शब्द का अर्थ विभिन्न शब्दकोशों में 'अनुराग', 'पूजा', 'उपासना' आदि हैं। भक्ति के उद्‌भव एवं विकास पर विचार करने से पूर्व मध्यकालीन भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों पर प्रकाश डालना नितांत आवश्यक है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकाल को दो खंडों में विभक्त किया गया है- पूर्व मध्यकाल एवं उत्तर मध्यकाल। पूर्व मध्यकाल को 'भक्तिकाल' एवं उत्तर मध्यकाल को 'रीतिकाल' कहा जाता है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

स्वर्णकाल, वर्ण व्यवस्था, अद्वैतवाद, एकेश्वरवाद

Discussion / चर्चा

हिन्दी साहित्य के इतिहास में 14 वीं शताब्दी से लेकर 17वीं शताब्दी के बीच (आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 1348 ई. से 1643 ई.) के समय को 'भक्ति काल' के नाम से जाना जाता है, इस दौरान मुख्य रूप से भक्ति विषयक काव्य रचे गए। भक्तिकाव्य की निर्मित लंबी परंपरा रही है और इस युग में जो भक्तिकाव्य रचा गया उसकी विशिष्ट धार्मिक, दार्शनिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि है।

1.2.1 मध्यकालीन भारत में भक्ति का उदय

किसी भी काल के साहित्य का निर्माण तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप ही होता है।

मध्यकालीन भारत में भक्ति का उदय उस समय की राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित रही। मध्यकाल की समयावधि 1375 वि.सं से 1700 वि.सं तक की मानी जाती है। मुस्लिम शासकों के बर्बर शासन से कुंठित एवं उनके अत्याचारों से त्रस्त हिन्दू जनता ने ईश्वर की शरण में अपने को अधिक सुरक्षित महसूस कर भक्ति मार्ग का सहारा लिया। हिन्दू एवं मुस्लिम जनता के आपस में सामाजिक एवं सांस्कृतिक संपर्क से दोनों के मध्य सद्भाव, सहानुभूति एवं सहयोग की भावना का विकास हुआ। इस कारण से भी भक्ति के उदय में सहयोग मिला। सूफी संतों की उदार एवं सहिष्णुता की भावना तथा एकेश्वरवाद में उनकी प्रबल निष्ठा ने हिन्दुओं को प्रभावित किया; जिस कारण से हिन्दू, इस्लाम के सिद्धांतों के निकट सम्पर्क में आये। हिन्दुओं ने सूफियों की तरह एकेश्वरवाद में विश्वास करते हुए ऊँच-नीच एवं जाति-पाँति का विरोध किया। तत्कालीन भारतीय समाज की शोषणकारी वर्ण व्यवस्था के कारण निचले वर्णों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। भक्त-संतों द्वारा दिये गए सामाजिक सौहार्द और सद्भाव के संदेश ने लोगों को प्रभावित किया।

▶ मध्यकाल की समयावधि 1375 वि.सं से 1700 वि.सं तक

1.2.2 मध्यकालीन भारत की सामाजिक परिस्थिति

मध्यकाल में विदेशी आक्रमणों, सामन्ती प्रवृत्तियों के विकास और तीव्रगति से बौद्ध धर्म के पतनोन्मुख होने की परिस्थितियों में जाति व्यवस्था को नियमित करने एवं क्रियान्वित करने के प्रयास दिखाई पड़ते हैं। सम्पूर्ण रूप से देखने पर स्पष्ट होता है कि पूर्व मध्यकाल में जाति व्यवस्था द्रुतगति से कठोर हो गयी थी और पर्याप्त रूप से इसका विस्तार भी हुआ। जाति व्यवस्था के विस्तार के प्रमुख कारणों में विदेशी एवं देशी तत्वों का समायोजन, कर्मकाण्डीय एवं क्षेत्रीय पृथकत्व एवं कायस्थ जैसे कुछ व्यावसायिक समूहों का ठोस रूप धारण करना प्रतीत होता है। भक्तिकाल का समाज सामंती समाज था। सुख-सुविधा राजा और सामंतों तक केंद्रित था। आम जनता बदहाली की दशा में गुजर-बसर कर रही थी। समाज में जाति और धर्म का बहुस्तरीय बँटवारा था। जाति व्यवस्था के मानदंड अत्यंत कठोर थे।

▶ भक्त संतों ने आडम्बर त्याग, मूर्ति-पूजा का विरोध, एकेश्वरवाद, जाति-व्यवस्था की आलोचना

1.2.3 मध्यकालीन भारत की राजनैतिक परिस्थिति

हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल तक उत्तरी भारत में मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना हो चुकी थी। किन्तु इन दिनों मुगलों और अफगानों में परस्पर संघर्ष जारी हुआ। इस समय मुसलमानों ने हिन्दुओं से संबंध स्थापित कर अपना शासन दृढ़ करना शुरू किया। आचार्य शुक्ल जैसे प्रबुद्ध विचारक भी यह स्वीकार करते हैं कि देश में मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर हिन्दू जनता के हृदय में गौरव, गर्व और उत्साह के लिए वह अवकाश न रह गया। उसके सामने ही उसके देव मन्दिर गिराए जाते थे, देव-मूर्तियाँ तोड़ी जाती थीं और पूज्य पुरुषों का अपमान होता था और वे कुछ भी नहीं कर सकते थे। आगे चलकर जब मुस्लिम साम्राज्य दूर तक स्थापित हो गया, तब परस्पर लड़ने वाले स्वतन्त्र राज्य भी न रह गये। इतनी भारी राजनीतिक उलट-फेर के पीछे हिन्दू जन समुदाय पर बहुत दिनों तक उदासीनता छाई रही।

▶ मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर देश के हिन्दू जनता निरुत्साहित

राजनीतिक दृष्टि से भक्ति काल को दो भागों में बांटा जा सकता है। पहले भाग में दिल्ली पर तुग्लक और लोधी वंश के शासकों ने शासन किया और दूसरे भाग में मुगल वंश के शासकों ने। पहले भाग के अंतर्गत शासक अत्याचारी, सत्तालोलुप और घोर सांप्रदायिक थे जबकि दूसरे भाग के शासकों में अपेक्षाकृत रूप से कुछ उदारवादी दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं; विशेषतः अकबर के शासनकाल में सांप्रदायिक सद्भाव अपने चरम पर था। मोहम्मद

गौरी द्वारा जीते गए प्रदेशों पर बरबन, अलाउद्दीन खिलजी आदि ने तलवार के बल पर अपना राज्य स्थापित किया। उन्होंने दक्षिण भारत में भी अपने साम्राज्य का विस्तार किया। अलाउद्दीन खिलजी ने कुछ आर्थिक व प्रशासनिक सुधार अवश्य किए लेकिन उनका प्रभाव केवल राजधानी के आसपास के क्षेत्रों तक ही रहा। अन्य शासक केवल युद्ध और लूटपाट में लगे रहे।

- ▶ राजनैतिक दृष्टि से भारत की सामाजिक दशा अव्यवस्थित

1.2.4 मध्यकालीन भारत की धार्मिक परिस्थिति

मध्कालीन भारत के संतों ने लोगों के सामने कर्मकांडों से मुक्त जीवन का ऐसा लक्ष्य रखा, जिसमें ब्राह्मणों द्वारा लोगों के शोषण का कोई स्थान नहीं था। भक्ति आंदोलन के कई संतों ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल दिया, जिससे इन समुदायों के मध्य सहिष्णुता और सद्भाव की स्थापना हुई। भक्तिकालीन संतों ने क्षेत्रीय भाषाओं की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भक्ति आंदोलन के प्रभाव से जाति-बंधन की जटिलता कुछ हद तक समाप्त हुई। फलस्वरूप दलित व निम्न वर्ग के लोगों में भी आत्मसम्मान की भावना जागी। भक्तिकालीन आंदोलन ने कर्मकांड रहित समतामूलक समाज की स्थापना के लिये आधार तैयार किया।

- ▶ तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियाँ भक्ति आंदोलन के सूत्रपात

राजनीतिक एवं सामाजिक परिवेश के अनुरूप ही धार्मिक परिवेश का होना स्वाभाविक था। भक्तिकाल के प्रारंभ में हिन्दू धर्म अनेक संप्रदायों और मत-मतांतरों में बुरी तरह विभक्त था। वैष्णव, शैव, शाक्त, स्मार्त, सिद्ध, नाथ और वाममार्गी एक-दूसरे की जान लेने पर उतारू रहते थे। इसी समय इस्लाम का प्रभाव भी भारतीय धर्मो पर पड़ना शुरू हो गया था। शासक वर्ग हिन्दू धर्म पर अनेक प्रकार के अत्याचार करके उनके पवित्र ग्रंथों और पूजा-स्थलों को नष्ट करने पर तुला हुआ था। इस काल में बौद्ध धर्म और जैन धर्म के प्रति भारत में लोगों की रुचि कम होने लगी थी। हिन्दू धर्म भी निरंतर पतन की ओर अग्रसर था। सभी हिन्दू संस्थाएँ शोषण तंत्र बन कर रह गई थीं। मिथ्या बाह्य आडंबर, मंत्र-तंत्र, अवतारवाद आदि के कारण धर्म के प्रति लोगों की एक नई दृष्टि विकसित होने लगी थी। परिणाम स्वरूप अपने-अपने विश्वासों के आधार पर इस काल में राम काव्य, कृष्ण काव्य तथा संत काव्य धारा का विकास हुआ। मुस्लिम शासकों के प्रभाव के कारण सूफी काव्य धारा विकसित हुई।

- ▶ हिन्दुओं और मुसलमानों में धर्म का बाह्याडम्बर

1.2.5 मध्यकालीन भारत की सांस्कृतिक परिस्थिति

भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र है-समन्वय की चेष्टा। भक्तिकाल में निरंतर होने वाले बाह्य आक्रमणों का एक परिणाम यह भी हुआ कि बाह्य आक्रांता अपने साथ अपनी संस्कृति भी लेते आए, जो कालांतर में भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बनती चली गई। मध्यकालीन धर्म-साधना में प्रायः सभी पूर्ववर्ती प्रमुख धर्म-साधनाएँ किसी-न-किसी रूप में अवश्य पाई जाती हैं। इनमें शैव, शाक्त और भागवत धर्म-साधनाएँ उल्लेखनीय हैं। विभिन्न धर्मो अथवा संप्रदायों के बीच अनेक उपधर्मो का बनना मध्यकाल की मानो विशेषता ही बन गई थी। मध्यकाल में रुचि और संस्कार में समन्वय की चेष्टा दिखाई देती है। शैवों एवं वैष्णवों का समन्वय भी इस काल में प्रबल हुआ। समन्वयात्मकता की यह प्रवृत्ति वास्तु एवं मूर्ति-कलाओं में भी लक्षित होती है। हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों की निकटता के परिणाम स्वरूप चित्र, संगीत और साहित्य-कलाओं में भी दोनों संस्कृतियों के उपकरणों का समावेश हुआ। इस काल के नायक-नायिकाओं के नयनाभिराम चित्रों में, भारतीय व ईरानी संगीत के सम्मिश्रण में तथा 'आदिग्रंथ' में प्राप्त राग-रागनियों और शैलियों में इस समन्वय की झलक प्राप्त होती है।

- ▶ मध्यकालीन समाज में हिन्दू-मुस्लीम एकरूपता का दर्शाना

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

उत्तर भारत की राजनीतिक परिस्थितियों ने भक्ति के प्रचार- प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान किया। मुस्लीम शासकों की धर्मांधता और क्रूर धार्मिक नीति ने भी उत्तर भारत में हिन्दू जनता में भक्ति भाव को दृढ़ता प्रदान की। भक्तिकाल के प्रारंभ में हिन्दू धर्म अनेक संप्रदायों और मत-मतांतरों में बुरी तरह विभक्त था। भक्तिकाल में निरंतर होने वाले बाह्य आक्रमणों का एक परिणाम यह भी हुआ कि बाह्य आक्रांता अपने साथ अपनी संस्कृति भी लेते आए, जो कालांतर में भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बनती चली गई।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. भक्तिकालीन धार्मिक परिस्थितियों पर टिप्पणी लिखें।
2. भक्तिकालीन सामाजिक परिस्थितियाँ क्या-क्या हैं ?
3. 'मध्यकालीन भारत में भक्ति का उदय'-विषय पर टिप्पणी लिखें।
4. पूर्व मध्यकालीन राजनैतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों पर प्रकाश डालिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 3

भक्ति आंदोलन, भक्तिकाव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- भक्ति आंदोलन के विकास एवं महत्व के बारे में जानकारी प्राप्त करता है
- मध्यकालीन भक्ति आंदोलन की विशेषताओं से परिचित होता है
- भक्ति आंदोलन के परिणामस्वरूप समाज में आए परिवर्तन के बारे में जानकारी प्राप्त करता है

Background / पृष्ठभूमि

भक्ति आन्दोलन के विकास की स्थिति कुछ-कुछ वैसी ही है, जैसी हमारे भारतीय इतिहास की है, हमारे सामने आज जो हमारा इतिहास है उस पर विदेशी विद्वानों की छाप है। इसमें जातीय गौरव को कम करके दिखाया गया है। इसी प्रकार भक्ति आन्दोलन को भी कुछ विद्वान विदेशी प्रभाव की देन मानते हैं तो कुछ विद्वान राजनीतिक प्रभाव की देन और कुछ विद्वान भारतीय चिन्तन की देन। डॉ. ग्रियर्सन की मान्यता है कि भारतीय भक्ति आन्दोलन ईसाई धर्म के प्रभाव की छाया में विकसित हुआ। मुस्लिम एकेश्वरवाद की शंकराचार्य के अद्वैत पर छाया स्वीकार करते हुए डॉ. ताराचन्द, डॉ. हमायूं कबीर और डॉ. आबिद हुसैन आदि विद्वान यहाँ तक कहने में नहीं हिचकते कि भारतीय भक्ति आन्दोलन मुस्लिम संस्कृति की छाया में ही पनपा है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

भक्तिकालीन साहित्य, सधुक्कड़ी भाषा, आलवार-नयनार संत, भक्तिमार्ग की भावना

Discussion / चर्चा

हिन्दी साहित्य में भक्ति आंदोलन के उदय पर सर्वप्रथम ग्रियर्सन ने विचार किया। उन्होंने इसकी दो स्थापनाएँ दी हैं। एक, भक्ति आंदोलन को उन्होंने अचानक पैदा होने वाला आंदोलन माना। भक्ति आंदोलन की जो लहर दक्षिण से आई उसी ने उत्तर भारत की परिस्थिति के अनुरूप हिन्दू-मुसलमान दोनों के लिए एक सामान्य भक्तिमार्ग की भी भावना कुछ लोगों में जगाई। किसी भी समय की परिस्थितियाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करती हैं। चाहे व्यक्ति कोई भी कार्य कर रहा हो उस कार्य पर उस समय की स्थिति का प्रभाव अवश्य पड़ता है।

1.3.1 भक्ति आंदोलन का काव्य पर प्रभाव

साहित्य समाज का दर्पण है। इसलिए समाज में जो कुछ परिवर्तन आते हैं उनका पूरा पूरा चित्रण तत्कालीन साहित्य में परिलक्षित होना स्वाभाविक है। मध्यकाल में यूरोप और भारत में धार्मिक पुनर्जागरण की लहर आरम्भ हो चुकी थी और इसका दोनों देशों में प्रमुख कारण इस्लाम का आक्रमण और इससे अपनी धर्म संस्कृति की रक्षा करना था। इस्लाम के धर्मान्ध शासकों ने मंदिरों पर आक्रमण किये, धर्मान्तरण किये तथा हिन्दू समाज कुछ न कर सका क्योंकि वह स्वंय अपनी ही विकृतियों के कारण निर्बल और निराश था। भक्त संत कवियों ने संदेशात्मक एवं सुधारात्मक रचनाओं द्वारा साधारण जनमानस में भक्ति का प्रभाव डाला। संत कवि आडम्बर त्याग, मूर्ति-पूजा का विरोध, एकेश्वरवाद, जाति-व्यवस्था की आलोचना, हिन्दू जाति में एकता, लोकभाषा और मानव सेवा आदि विशेषताओं को अपनाकर भारतीय समाज को शक्तिशाली बनाने में सफलता प्राप्त किया। भक्ति आंदोलन के प्रमुख सन्त रामानुजाचार्य, रामानन्द, चैतन्य, कबीर, वल्लभाचार्य आदि थे। भक्ति धारा न केवल उत्तर भारत में बल्कि दक्षिण भारत में भी व्यापक रूप में बहने लगी।

- संत कवियों ने लोकमंगलकारी दृष्टि से काव्य सृजन

1.3.2 मध्यकालीन काव्य पर सामाजिक प्रभाव

लोकभाषाओं को प्रश्रय देना भक्तिकाव्य की सर्वमहती विशेषता है। सभी सन्त एवं भक्त कवियों ने अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के सक्षम माध्यम के रूप में लोक प्रचलित भाषा के विभिन्न रूपों का सफल प्रयोग किया। यद्यपि तुलसी नाना पुराण एवं निगमागमों में पारंगत पंडित थे और उनका संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार था किन्तु उन्होंने अपने साहित्य का सृजन अवधी तथा ब्रज भाषा में किया। सूर आदि कृष्णभक्त कवियों की भाषा लोकप्रचलित ब्रज भाषा है। कबीर आदि सन्त कवियों ने सधुक्कड़ी भाषा के माध्यम से अपना संदेश जनसामान्य तक पहुँचाया। जायसी आदि के प्रेम काव्यों में लोकप्रचलित अवधी व्यवहृत हुई है। वर्ण्य विषय को जनसामान्य तक पहुँचाकर उसे लोकप्रिय बनाने के लिए जन भाषाओं का उपयोग अतीव उपयोगी व हितकर सिद्ध हुआ। उक्त काव्य में लोकगीतों और लोककथाओं को यथेष्ट सम्मान मिला। लोकपरिचित दृष्टान्तों, रूपकों, प्रतीकों तथा लोकोक्तियों का यथायोग्य प्रयोग किया गया। अपनी-अपनी अनुभूतियों को जनमानस तक पहुँचाने के लिए लोकप्रचलित भाषा शैली का प्रयोग करना भक्ति काव्य के प्रणेताओं का प्रमुख उद्देश्य रहा है।

- संत कवियों द्वारा अपने संदेश को लोगों की भाषा में प्रचारित

1.3.3 दक्षिण आचार्यो का योगदान

मध्यकाल में भक्ति आंदोलन की शुरुआत सर्वप्रथम दक्षिण के आलवार तथा नयनार संतों द्वारा की गई। बारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में रामानंद द्वारा यह आंदोलन दक्षिण भारत से उत्तर भारत में लाया गया। इस आंदोलन को चैतन्य महाप्रभु, नामदेव, तुकाराम, जयदेव ने और अधिक मुखरता प्रदान की। भक्ति आंदोलन का उद्देश्य था- हिन्दू धर्म एवं समाज में सुधार तथा इस्लाम एवं हिन्दू धर्म में समन्वय स्थापित करना। अपने उद्देश्यों में यह आंदोलन काफी हद तक सफल रहा। भक्तिकाल में उत्तर भारत में अनेक धार्मिक संप्रदायों- रामानंद संप्रदाय, संत संप्रदाय, वल्लभ संप्रदाय आदि का जन्म हुआ। इन संप्रदायों का साहित्य तथा दार्शनिक विचारधारा सरल एवं सुगम था। सभी अपने-अपने दृष्टिकोण का प्रचार-प्रसार जनता की भाषा में कर रहे थे। जाति-वर्ण-व्यवस्था आदि से संबंधित उनके विचार अत्यंत उदार थे। भक्ति और धर्म का मार्ग सब के लिए खुल चुका था। डॉ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने भक्तिकाल की धार्मिक

> ▶ भक्ति का मूल स्रोत दक्षिण भारत से

परिस्थितियों के विषय में लिखा है- "देश में ज्यों-ज्यों अराजकता कम होती गई, जीवन में स्थिरता आती गई, त्यों-त्यों धार्मिक आंदोलन भी अत्यंत तीव्रता के साथ समाज में अपना प्रभाव प्रकट करने लगे।"

> ▶ धार्मिक दृष्टि से भक्तिकाल परिवर्तन का काल

धार्मिक दृष्टि से भक्तिकाल में दो मत-संत और भक्त प्रचारित हुए। निर्गुणवादियों को 'संत' तथा सगुणवादियों को 'भक्त' कहा गया। एक ओर निर्गुणी संतों और सूफियों ने धार्मिक सहिष्णुता का मार्ग प्रशस्त किया, तो दूसरी ओर सगुणवादी रामभक्ति शाखा तथा कृष्णभक्ति शाखा ने मिलकर मानवीय धर्म को अधिक विस्तृत परिवेश प्रदान किया। अतः यह सहज ही कहा जा सकता है कि इस काल में जहाँ आध्यात्मवादी दृष्टिकोण को प्रश्रय मिला, वहीं विशुद्ध मानवीय धर्म को भी बल प्राप्त हुआ।

1.3.4 भक्ति आंदोलन की विशेषताएँ:-

भक्ति आंदोलन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. भक्ति आंदोलन के सन्तों ने मूर्ति पूजा का खण्डन किया।
2. इसके कुछ सन्तों ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल दिया।
3. भक्ति आंदोलन के नेता सन्यास मार्ग पर बल नहीं देते थे। उनका कहना था कि यदि मानव का आचार-विचार एवं व्यवहार शुद्ध हो, तो वह गृहस्थ जीवन में रहकर भी भक्ति कर सकता है।
4. भक्ति आंदोलन के संत सारे मनुष्य मात्र को एक समझते थे। उन्होंने धर्म, लिंग, वर्ण व जाति आदि के भेदभाव का विरोध किया।
5. यह आन्दोलन मुख्य रूप से सर्वसाधारण का आन्दोलन था। इसके सारे प्रचारक जनसाधारण वर्ग के ही लोग थे।
6. भक्ति आन्दोलन के प्रचारकों ने अपने विचारों का प्रचार जनसाधारण की भाषा तथा प्रचलित साधारण बोली में किया।
7. यद्यपि यह आन्दोलन विशेष रूप से धार्मिक आन्दोलन था, लेकिन इसके अनेक प्रवर्तकों ने सामाजिक क्षेत्र में विद्यमान कुरीतियों को दूर करने की कोशिश की।
8. भक्ति आदोलन के सारे नेता विश्व बन्धुत्व की भावना एवं एकेश्वरवाद के समर्थक थे।
9. भक्ति आंदोलन के सन्तों ने धार्मिक अन्धविश्वासों तथा बाह्म आडम्बरों का विरोध कर हिन्दू धर्म को सरल एवं शुद्ध बनाने का प्रयत्न किया। उन्होनें चरित्र की शुद्धता एवं आचरण की पवित्रता पर बल देकर सच्चे हृदय से भक्ति करना ही मुक्ति का साधन बताया।

> ▶ भक्ति आंदोलन के संतों द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

भक्ति आंदोलन के प्रभाव से जब कभी भी हिन्दू धर्म में आंतरिक जटिलताएँ बढी तब प्रतिक्रिया स्वरूप धर्म सुधार आन्दोलन या धार्मिक क्रांतियाँ हुईं। भक्तिकालीन संतों ने क्षेत्रीय भाषाओं की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया। हिन्दी, पंजाबी, तेलुगू, कन्नड़, बंगला आदि भाषाओं में इन्होंने अपनी भक्तिपरक रचनाएँ कीं। भक्ति आंदोलन के प्रभाव से जाति-बंधन की जटिलता कुछ हद तक समाप्त हुई।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. भक्ति आंदोलन से काव्य में आए परिवर्तन के बारे में टिप्पणी लिखिए।
2. भक्ति आंदोलन में दक्षिण आचार्यों के योगदान क्या-क्या हैं?
3. भक्ति आंदोलन की विशेषताओं के बारे में परिचय दीजिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 4 सन्त काव्य आल्वार सन्त, निर्गुण भक्ति-ज्ञानाश्रयी प्रेमाश्रयी

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- संत काव्य परंपरा से परिचित होता है
- निर्गुण भक्ति मार्ग से अवगत होता है
- ज्ञानाश्रयी शाखा से जानकारी प्राप्त होता है
- प्रेमाश्रयी शाखा से जानकारी प्राप्त होता है

Background / पृष्ठभूमि

सामान्यतः सदाचार के लक्षणों से युक्त व्यक्ति को संत कहा जाता है। डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने संत का संबंध 'शांत' से माना है और इसका अर्थ- निवृति मार्गी या वैरागी बताया है। हिन्दी साहित्य में निर्गुणोपासक ज्ञानाश्रयी शाखा के कवियों को संत कहा जाता है। संत काव्य का दार्शनिक आधार है शंकराचार्य एवं उपनिषदों द्वारा प्रतिपादित अद्वैत दर्शन, नाथ पंथ, सूफी धर्म एवं इस्लाम। उपनिषदों में निरूपित ब्रह्म, जीव, जगत एवं माया के स्वरूप को संत कवियों ने ज्यों का त्यों ग्रहण किया।

Keywords / मुख्य बिन्दु

संत काव्य परंपरा, आलवार संत, निर्गुण भक्ति, ज्ञानाश्रयी, प्रेमाश्रयी

Discussion / चर्चा

भारतीय संत-परम्परा का इतिहास काफी प्राचीन है। संत कवियों की परम्परा का आरम्भ बारहवीं शताब्दी में जयदेव से होता है। उनके निर्गुण भाव के पद आदिग्रन्थ में संकलित हैं। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में संत ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम आदि संत इस परम्परा को आगे बढ़ाते है। इसके बाद कबीरदास के गुरु रामानंद आते है। लेकिन हिन्दी में संत काव्य की परंपरा के सूत्रपात का श्रेय कबीरदास को है। संत कवियों ने धर्म को उत्तुंग शिखर से उतारकर ठोस ज़मीन पर लोक जीवन से जोड़ दिया और इसके साथ ही धर्म को मनुष्यता से जोड़कर उच्चतर धरातल पर प्रतिष्ठित किया।

1.4.1 संत काव्य परंपरा

निर्गुण काव्यधारा की एक शाखा को संत काव्य धारा कहा जाता है। इस काव्य धारा को ज्ञानाश्रयी काव्यधारा भी कहा जाता है। संत काव्य में ज्ञान की महत्ता को प्रतिपादित किया गया है। यह ज्ञान वेद-पुराणों या कुरान से नहीं, अपितु चित की निर्मलता एवं हृदय की पावनता से प्राप्त किया जाता है। अधिकांश विद्वान मानते हैं कि वह व्यक्ति जिसने 'सत' रूपी परमतत्व को प्राप्त कर लिया हो, वही संत है। संत काव्य-परंपरा के प्रमुख कवि हैं– नामदेव, कबीरदास, रैदास, नानक, दादू दयाल, रज्जब दास, मलूक दास, सुंदर दास आदि। संत कवियों में सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्तित्व महात्मा कबीर का ही था। उनके नाम पर हिन्दी में 61 रचनाएँ उपलब्ध हैं, किन्तु उसमें अधिकांश अप्रामाणिक है। प्रामाणिक समझी जानेवाली रचनाओं में डॉ. श्यामसुन्दर दास द्वारा सम्पादित 'संत कबीर', डॉ. रामकुमार वर्मा द्वारा सम्पादित- 'संत कबीर' और कबीर पंथियों के साम्प्रदायिक ग्रंथ 'बीजक' का उल्लेख किया जा सकता है।

▶ संत काव्य में ज्ञान की महत्ता

1.4.2 आलवार संत

आलवार (तमिल शब्द का अर्थः 'भगवान में डूबा हुआ') तमिल कवि एवं सन्त थे। इनका काल 6 छठी से 9 वीं शताब्दी के बीच रहा। उनके पदों का संग्रह 'दिव्य प्रबन्ध' कहलाता है जो 'वेदों' के तुल्य माना जाता है। आलवार सन्त भक्ति आन्दोलन के जन्मदाता माने जाते हैं। तमिल भाषा में आलवार भक्तों को वैष्णव भक्त कहा जाता है। तमिल प्रान्त में बौध्दों और जैनों का विरोध करने के लिए शैवों (नयनार) और वैष्णवों (आलवार) ने मिलकर एक धार्मिक क्रांति की। आस्तिक भावों का प्रचार करके भक्ति भावना को जगाना इनका उद्देश्य था। आलवारों ने वेद, उपनिषद्, गीता से गृहीत भक्ति भावों को गीतों के माध्यम से जनता तक पहुँचाया। आलवारों की संख्या 12 मानी जाती है- 1. सरोयोगी, 2. भूतयोगी, 3. भ्रान्तयोगी, 4. भक्तिसार, 5. शठकोप, 6. मधुर कवि, 7. कुलशेखर, 8. विष्णुचित, 9. गोदा, 10. भक्तान्घ्रिरेनु, 11. मुनिवाहन, 12. परकाल। इनके तमिल नाम भिन्न हैं। इनके लिखे 4000 पदों का संकलन 'दिव्य प्रबन्धम' नाम से किया गया है।

▶ भक्ति आंदोलन का प्रारंभ दक्षिण भारत के आलवार भक्तों से

1.4.3 निर्गुण भक्ति

इस शब्द का अर्थ है - विशिष्टता रहित या गुण रहित। जैसे निर्गुण भक्ति का अर्थ है ईश्वर के निराकार स्वरूप की उपासना। इसमें निर्गुण भक्ति ईश्वर की पूजा के अमूर्त रूप को संदर्भित करती है भक्ति की इस शाखा के अनुयायी का मानना था कि ईश्वर निराकार और दिव्य है। निर्गुण भक्ति के महत्वपूर्ण बिंदु-

1. ईश्वर को निर्गुण, निराकार, घट-घटव्यापी, सूक्ष्म माना गया है।
2. निर्गुणोपासना में भक्ति का आलंबन निराकार है, फलतः वह जनसाधारण के लिए ग्राह्य नहीं है।
3. निर्गुण भक्ति का सम्बन्ध सामान्यतः ज्ञान मार्ग से जोड़ा जाता है।
4. इस भक्ति में 'गुरु' को विशेष महत्त्व प्राप्त है।
5. निर्गुण एवं निराकार ब्रह्म से भावात्मक सम्बन्ध जोड़कर रहस्यवाद को काव्य में स्थान निर्गुण परम्परा के भक्त कवियों ने दिया।
6. ईश्वर के नाम की महत्ता पर निर्गुण भक्त कवियों ने भी बल दिया है।

7. इस भक्ति में माधुर्य भाव का समावेश होने पर रहस्यवाद का उदय होता है।
8. नाथ पंथियों से उन्होंने शून्यवाद, गुरु की प्रतिष्ठा, योग प्रक्रिया को ग्रहण किया है।
9. संत कवियों ने वैदिक साहित्य, वैदिक परम्पराओं एवं बाह्याचारों की आलोचना बौध्द धर्म के प्रभाव से की है।
10. संतों ने नाम जप पर विशेष बल दिया। नाम ही भक्ति और मुक्ति का दाता है। वे मानसिक भक्ति पर बल देते है, जो पूर्णतः आडम्बरविहीन होती है।
11. जाति, वर्ण के अंतर को दूर करके मानव मात्र की एकता का प्रतिपादन करते हुए सामाजिक समरसता लाने का प्रयास किया।
12. इस भक्ति में सहज साधना पर भी बल दिया गया, जिसने धार्मिक जीवन की दुरूहताओं को कम किया।
13. हृदय की पवित्रता, आचरण की पवित्रता, वासनाओं से मुक्ति गुरु कृपा से ही संभव है ऐसा निर्गुणोपासकों का विश्वास है।
14. निर्गुण एवं निराकार ब्रह्म से भावात्मक सम्बन्ध जोड़कर रहस्यवाद को काव्य में स्थान निर्गुण परम्परा के भक्त कवियों ने दिया।
15. संतों ने नाम जप पर विशेष बल दिया। नाम ही भक्ति और मुक्ति का दाता है। वे मानसिक भक्ति पर बल देते है, जो पूर्णतः आडम्बरविहीन होती है।

> ▶ शुक्ल द्वारा भक्तिकाल को निर्गुण धारा और सगुण धारा में बांटना

1.4.4 ज्ञानाश्रयी शाखा

ज्ञानाश्रयी शाखा के भक्त-कवि 'निर्गुणवादी' थे और नाम की उपासना करते थे। गुरु का वे बहुत सम्मान करते थे और जाति-पांति के भेदों को नहीं मानते थे। वैयक्तिक साधना को वे प्रमुखता देते थे। मिथ्या आडंबरों और रूढियों का विरोध करते थे। लगभग सभी संत अनपढ़ थे, लेकिन अनुभव की दृष्टि से बहुत ही समृध्द थे। प्रायः सभी सत्संगी थे और उनकी भाषा में बहुत सी बोलियों का घोलमेल था, इसीलिए इस भाषा को सधुक्कड़ी कहा गया। साधारण जनता पर इन संतों की वाणी का ज़बरदस्त प्रभाव पड़ा। इन संतों में प्रमुख कबीरदास थे। अन्य मुख्य संत कवि नानक, रैदास, दादूदयाल, सुंदरदास तथा मलूकदास हैं।

> ▶ प्रमुख संत कवि कबीरदास

ज्ञानाश्रयी शाखा को 'निर्गुण काव्यधारा' या 'निर्गुण सम्प्रदाय' नाम भी दिया गया है। इस शाखा की विशेषता यह थी कि इसने अधिकत्तर प्रेरणा भारतीय स्रोतों से ग्रहण की। इसमें ज्ञानमार्ग की प्रधानता थी। इसलिए पं. रामचंद्र शुक्ल ने इसे 'ज्ञानाश्रयी शाखा' कहा है। इस

- ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि संत कवि नाम से जानना

शाखा के कवियों ने भक्ति-साधना के रूप में योग-साधना पर बहुत बल दिया है। इस शाखा के प्रतिनिधि कवि कबीरदास हुए हैं।

ज्ञानाश्रयी शाखा की विशेषताएँ

- निरक्षर कवि
- जाति-व्यवस्था का विरोध
- पाखंड विरोध
- हिन्दू-मुस्लिम एकता
- माया से बचने का उपदेश
- गुरु की महत्ता
- रहस्यात्मकता
- काव्य-रचना तथा भाषा

- ज्ञानाश्रयी शाखा के भक्त-कवि निर्गुणवादी और नाम की उपासक

1.4.5 प्रेमाश्रयी संत काव्य धारा

धर्म का प्रवाह कर्म, ज्ञान और भक्ति इन तीन धाराओं में चलता है। इन तीनों के सामंजस्य से धर्म अपनी पूर्ण सजीव दशा में रहता है। किसी एक के भी अभाव से वह विकलांग रहता है। कर्म के बिना लूला लंगड़ा, ज्ञान के बिना अन्धा और भक्ति के बिना हृदयविहीन या निष्प्राण रहता है। कालदर्शी भक्त कवि जनता के हृदय को सँभालने और लीन रखने के लिए दबी हुई भक्ति को जगाने लगे। क्रमशः भक्ति का प्रवाह ऐसा विकसित और प्रबल होता गया कि उसकी लपेट में केवल हिन्दू जनता ही नहीं, देश में बसनेवाले सहृदय मुसलमानों से भी न जाने कितने आ गये। प्रेमस्वरूप ईश्वर को सामने लाकर भक्त कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को मनुष्य के सामान्य रूप में दिखाया और भेद-भाव के दृश्यों को हटाकर पीछे कर दिया। इसी समय हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल का प्रारम्भ हुआ जो कि साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आदिकाल के बाद आए इस युग को पूर्व मध्यकाल भी कहा जाता है। पूर्व मध्यकाल की समयावधि 1375 वि. सं. से 1700 वि. सं. तक मानी जाती है। यह हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठ काल था। इस समय भक्ति की दो धाराएँ समानांतर चलती रहीं। भक्ति के उत्थान काल के भीतर हिन्दी भाषा की कुछ रचना पहले कबीर की मिलती हैं। संक्षेप में भक्ति-युग की चार प्रमुख धाराएँ मिलती हैं।

- प्रेमाश्रयी शाखा के लगभग सभी कवि मुस्लिम

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

ज्ञानाश्रयी शाखा और प्रेमाश्रयी शाखा दोनों धाराएँ निर्गुण मत में आती हैं। कृष्णभक्ति शाखा और रामभक्ति शाखा दोनों सगुण मत के अंतर्गत आती हैं। ज्ञानाश्रयी शाखा के भक्त-कवि निर्गुणवादी थे और नाम की उपासना करते थे। गुरु का वे बहुत सम्मान करते थे और जाति-पाँति के भेदों को नहीं मानते थे। कुछ विद्वानों का विचार है कि सन्तों में यह गुरुवाद सूफियों की खिलाफत से आया है। गुरु के बिना ज्ञान नहीं और ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. संत काव्य परंपरा पर टिप्पणी लिखें।
2. निर्गुण भक्ति के महत्वपूर्ण बिंदु क्या-क्या हैं?
3. ज्ञानाश्रयी शाखा की विशेषताएँ लिखिए।
4. प्रेमाश्रयी संत काव्य धारा से तात्पर्य क्या है?

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

निर्गुण भक्ति काव्य

BLOCK-02

Block Content

Unit 1 : निर्गुण भक्ति का स्वरूप

Unit 2 : कबीर

Unit 3 : हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा

Unit 4 : मलिक मुहम्मद जायसी

इकाई : 1

निर्गुण भक्ति का स्वरूप

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- निर्गुण भक्ति के स्वरूप के बारे में जानकारी प्राप्त करता है
- निर्गुण भक्तिधारा के प्रमुख काव्य से परिचित होता है
- निर्गुण भक्तिधारा के प्रमुख कवि कबीरदास, नानक, दादू, रैदास, मलूकदास, संुदरदास, धर्मदास, आदि के बारे में जानता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल [1375-1700] में एक काव्यधारा विशेष का प्रवर्तन हुआ जिसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'निर्गुण ज्ञानाश्रय शाखा', डॉ हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने 'निर्गुण-भक्ति-साहित्य' तथा डॉ रामकुमार वर्मा ने 'संत-काव्य-परंपरा' का नाम दिया है। 'ज्ञानाश्रयी' शब्द से यह भ्रांति उत्पन्न होती है कि इस धारा के कवियों ने 'ज्ञान तत्व' को सर्वाधिक महत्व दिया होगा, जबकि वास्तव में 'प्रेम के ढाई अक्षरों' के सम्मुख इन्होंने संसार के सारे ज्ञान को तुच्छ बताया है। वस्तुतः इस काव्याधारा के कवियों का एक विशेष दृष्टिकोण है जो 'संत' शब्द द्वारा भली प्रकार व्यंजित होता है। अतः इस धारा को 'संत काव्य' की संज्ञा देना प्रथम दो नामों की अपेक्षा अधिक उचित है। 'सत्' क्या है यह जानना और इसके लिए हर प्रयास करना निर्गुण भक्ति है। बुद्धि की शुद्धता करना, जागृति में स्थिर रहना निर्गुण भक्ति है। सम्पूर्ण जीवन शैली शुद्धता से जीना और सदा जागृत रहने का प्रयास करना होगा। निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति, ब्रह्मानंद की अनुभूति भक्ति द्वारा ही संभव है। निर्गुण भक्ति का मूल तत्व है अनादि, अजन्मा, अनंत ब्रह्मा का नाम जप।

Keywords / मुख्य बिन्दु

निर्गुणोपासना, समाज सुधार, रहस्यवाद, उदात्त मानव मूल्य, दादू पंथ

Discussion / चर्चा

निर्गुण भक्ति का अर्थ है -ईश्वर के निराकार स्वरूप की उपासना। इसमें निर्गुण भक्ति ईश्वर की पूजा के अमूर्त रूप को संदर्भित करती है। कुछ विद्वान निर्गुण भक्ति को भक्ति का उच्चतम रूप बताते हैं। ब्रह्म को निर्गुण कहने का अभिप्राय उसकी गुणहीनता से नहीं है। 'निर्गुण' का अर्थ है, गुणातीत। वह परमात्मा गुणों से परे हैं। उस निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति

ब्रह्मानन्द की अनुभूति भक्ति द्वारा ही संभव है। निर्गुण का प्रयोग उपनिषद काल में ही दिखाई देता है। पंडितों का मानना है कि यह विशिष्ट देवता के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। उनके लिए शास्त्र- ज्ञान और मंदिर के दरवाज़े बंद थे। निर्गुण भक्त अपने अंदर में ही ब्रह्मा का साक्षात्कार करता था। शुक्लजी ने निर्गुण काव्यधारा को पुनः दो भागों में विभक्त किया है -ज्ञानाश्रय और प्रेमाश्रय।

2.1.1 निर्गुण भक्ति का विकास

लौकिक प्रेम द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की अभिव्यक्ति ने निर्गुण भक्ति के विकास में अहम भूमिका निभायी। निर्गुण भक्त कवियों ने ईश्वर को निर्गुण-निराकार तो माना, किंतु उसकी उपासना का भी एक मार्ग ढूँढ लिया। उन्होंने भक्ति की उपासना का मार्ग योग और साधना पद्धति में खोजा था। नाथ और सिद्ध इसी परंपरा में आते हैं। साधना का यह मार्ग सामान्य जनता को आकृष्ट नहीं कर सका।

- सामाजिक समानता और धर्म का अधिकारी

2.1.2 निर्गुण भक्ति मार्ग की विशेषताएँ

'निर्गुण' अर्थात् गुणातीत, निराकार, अशरीरी, अजन्मा, अव्यक्त, इंद्रियातीत। ब्रह्म की उपासना को लेकर चलनेवाले भक्ति मार्ग को 'निर्गुण भक्ति मार्ग' और उसके साहित्य को 'निर्गुण भक्ति काव्य' कहा गया है। निर्गुण कवि हिन्दू और मुसलमान का भेद भुलाकर मानवता के उदात्त मूल्यों की स्थापना में लगे हुए थे। निर्गुण भक्ति मार्ग की विशेषताएँ इस प्रकार हैं।

- निर्गुण ब्रह्म की उपासना
- धार्मिक सामाजिक रूढ़ियों का विरोध
- मानव-मात्र की एकता
- रहस्यवाद

- समाज में फैले हुए विभिन्न आडंबरों, रूढियों, अंधविश्वासों आदि का पर्दाफाश किया और जनता को सच्चे एवं अच्छे मार्ग की ओर अग्रसर किया।

2.1.3 निर्गुण भक्तिधारा के प्रमुख काव्य एवं विशेषताएँ

निर्गुण काव्य को 'संत काव्य' कहते हैं। संत काव्य में गीतों की प्रधानता है। कविता करना संतों का उद्देश्य न था। वह सुधार, प्रचार, और साधना की अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र थी। इसके लिए प्रबंध-पटुता की आवश्यकता भी नहीं थी। पद या गीत ही सबसे सरल साधन थे। संतों का काव्य-संबन्धी शास्त्र ज्ञान शून्य था। समस्त संत काव्य में पद या गीत 'सबद' के नाम से मिलते हैं। उपदेश की बातें 'साखी' 'छन्द' में कही गयी है।

- जन-जन में जीवन को पवित्र बनानेवाली काव्य

संत काव्य देश की राजनीतिक, धार्मिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के फलस्वरूप विरचित भावात्मक एवं अनुभूति का काव्य है। इसका प्रेरणा स्रोत था- सामान्य मानव का हित साधन। संत साहित्य आध्यात्मिक अनुभूतियों का लेखा-जोखा मात्र नहीं है, उसमें तत्कालीन जनजीवन का प्रतिबिंब भी विद्यमान है।

रस:- निर्गुणोपासक संत कवियों ने काव्य और उसके अवयवों को काव्यशास्त्रीय दृष्टि से नहीं देखा। काव्य की आत्मा, रस निष्पत्ति आदि की उन्होंने चिंता नहीं की। वस्तुतः काव्य के माध्यम से उन्होंने अपने अनुभूति को जनता तक पहुंचाने का प्रयास किया। संतों ने अधिकतर साखियों, सवैये एवं गेय पदों की रचना की है।

- काव्य में ओज, माधुर्य और प्रसाद तीनों गुणों का समन्वय

भाषा:- संत काव्य की भाषा जनसामान्य की भाषा है। वस्तुतः तत्कालीन परिवेश के अनुरूप संत वाणी की रचना मुख्यतः जनता के अशिक्षित, उपेक्षित और पिछड़े हुए वर्गों के लिए हुई थी। अतः संतों की भाषा आवश्यकतानुसार सरल, कृत्रिमताविहीन और सहज है।

▶ युगांतकारी कवि के क्रांतिकारी व्यक्तित्व के अनुरूप

संक्षेप में कह सकते हैं कि संत काव्य वह प्रकाश स्तंभ है जो निराश, वासना, प्रतिशोध और प्रतिहिंसा में भटकते हुए मानव समाज को शताब्दियों से प्रकाश दे रहा है और भविष्य में भी मार्ग प्रदर्शित करता रहेगा।

यह साहित्य अपनी सरलता, जीवन दर्शन की गंभीरता और तटस्थता बोध के कारण अत्यंत प्रभावशाली है।

2.1.4 निर्गुण भक्तिधारा के प्रमुख कवि

निर्गुण भक्ति

ज्ञानाश्रयी (प्रमुख कवि)	प्रेमाश्रयी (प्रमुख कवि)
कबीर	मलिक मुहम्मद जायसी
रैदास/रविदास	कुतुबन
धर्मदास	मंझन
गुरुनानक	उसमान
दादूदयाल	शेखनबी
सुंदरदास	कासीम शाह
मलूकदास	नूर मुहम्मद

कबीर, नानक, दादू, रैदास, मलूकदास, सुंदरदास, धर्मदास आदि निर्गुणभक्ति धारा के प्रमुख कवि हैं। निर्गुण संतों की विचारधारा के बीज सिद्ध व नाथ कवियों की रचनाओं में मिलते ही हैं। आदिकाल में नामदेव ने ही इस दिशा में योग दिया था। कबीरदास अपने युग के एकछत्र सम्राट रहे हैं। लेकिन रामानन्द ने ही संत काव्य और रामकाव्य का पथ-प्रदर्शन किया था। भक्तिकालीन निर्गुण कवियों में कबीर, दादू, नानक, रैदास, सुंदरदास, मलूकदास आदि आते हैं।

2.1.4.1 कबीरदास

संत-कवि कबीरदास का जन्म 15वीं शताब्दी के मध्य में काशी (वाराणसी, उत्तर प्रदेश) में हुआ था। कबीरदास हिन्दी साहित्य के क्रांतिकारी एवं समाज सुधारक कवि हैं जिन्होंने समाज को रूढिग्रस्त मान्यताओं एवं परंपराओं से मुक्त कराकर एक स्वस्थ समाज बनाने की सफल कोशिश की है। कबीर के गुरु स्वामी रामानंद थे। कबीर निर्गुण ब्रह्म में विश्वास रखते थे। उनका मानना था कि ईश्वर तमाम गुणों से ऊपर है, उसके गुणों का वर्णन नहीं किया जा सकता। वह सर्वशक्तिमान तथा कण-कण में व्याप्त है। उनका ईश्वर अगम और अगोचर है, अजन्मा और निर्विकार है तथा उसे कहीं बाहर ढूंढने की आवश्यकता नहीं बल्कि वह तो प्रत्येक के हृदय में विराजमान है। कबीर की वाणी को 'बीजक' नाम से संकलित किया है, जिसके तीन भाग हैं- साखी, सबद और रमैनी। उनके काव्य में हिन्दी, खड़ीबोली, पंजाबी, भोजपुरी, उर्दू, फ़ारसी और मारवाड़ी जैसी भाषाओं का मिश्रण है। उसे सधुक्कड़ी कहते हैं।

> ▶ निम्न वर्गों में आत्मसम्मान की अग्नि फैलाये

2.1.4.2 गुरु नानक

सोलहवीं शाताब्दी के आरम्भ में गुरु नानक देव जी के द्वारा सिक्ख धर्म की स्थापना की गई थी। ज्ञान प्राप्ति के बाद उन्होंने देश के लगभग अनेक भागों में यात्रा की और मक्का तथा बग़दाद भी गए। उनका प्रमुख उपदेश था ईश्वर एक है, उसी ने सबको बनाया है। हिन्दू, मुस्लिम सभी एक ही ईश्वर की संतानें हैं। ईश्वर के लिए सभी एक समान हैं। नानक की वाणी ने हमेशा मनुष्य को मानवता का संदेश दिया है। साथ ही साथ उसे समाज में जीवनयापन करने के लिए नैतिकता की भी शिक्षा दी है। इसके प्राण में एकत्व, सहानुभूति, सहयोग, करुणा और मानव प्रेम है। यह आदमी से आदमी को जोड़ने का कार्य करता है।

> ▶ किसी जाति या संप्रदाय विशेष से अप्रभावित

2.1.4.3 दादूदयाल

दादू दयाल हिन्दी के भक्तिकाल में ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख सन्त कवि थे। इन्होंने एक निर्गुणवादी संप्रदाय की स्थापना की, जो 'दादूपंथ' के नाम से जाना जाता है। उन्होंने हिन्दू और इस्लाम धर्म में समन्वय स्थापित करने के लिए अनेक पदों की रचना की। दादू ने कई साखी और पद लिखे हैं। आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं साखी, पद, हरडेवानी, अंगवधू आदि। दादू के उपदेश मुख्यतः काव्य सूक्तियों और ईश्वर भजन के रूप में हैं, जो 5,000 छंदों के संग्रह में संग्रहीत है, जिसे बानी (वाणी) कहा जाता है। ये अन्य संत कवियों, जैसे कबीर, नामदेव, रविदास और हरिदास की रचनाओं के साथ भी किंचित परिवर्तित छंद संग्रह पंचवाणी में शामिल हैं। यह ग्रंथ दादू पंथ के धार्मिक ग्रंथों में से एक है।

▶ 'ब्रह्मा संप्रदाय' या दादू पंथ की स्थापना

2.1.4.4 रैदास

रविदास, जिन्हें रैदास भी कहा जाता है(15वीं या 16वीं शताब्दी में फले-फूले), रहस्यवादी कवि जो उत्तर भारतीय भक्ति आंदोलन के सबसे प्रसिद्ध संतों में से एक थे।

रविदास का जन्म वाराणसी में एक अछूत चमड़े का काम करने वाली जाति के सदस्य के रूप में हुआ था, और उनकी कविताएँ और गीत अक्सर उनकी निम्न सामाजिक स्थिति के इर्द-गिर्द घूमते हैं। इस धारणा पर आपत्ति जताते हुए कि जाति किसी व्यक्ति के ईश्वर के साथ संबंध में एक मौलिक भूमिका निभाती है, रविदास ने अपनी दीनता की तुलना ईश्वर के ऊंचे स्थान से की: उन्होंने कहा, ईश्वर उनसे बेहतर है, जैसे रेशम एक कीड़ा है, और उससे भी अधिक सुगन्धित, जैसे कि अरंडी के तेल के पौधे के लिये चन्दन। ईश्वर के संबंध में, सभी व्यक्ति, चाहे उनकी जाति कुछ भी हो, 'अछूत' हैं, और 'जिस परिवार में भगवान का सच्चा अनुयायी होता है वह न तो उच्च जाति का होता है, न ही निम्न जाति का, न ही प्रभु का, न ही गरीब का।' रविदास का करिश्मा और प्रतिष्ठा ऐसी थी कि कहा जाता है कि ब्राह्मण

(पुरोहित वर्ग के सदस्य) उनके सामने झुकते थे। सत्यानुभव से वे अध्यात्म पथ पर बढे; उन्होंने राम-गोविन्द का गुण गाकर अपनी भक्ति प्रकट की। रैदास की भक्ति उनकी बड़ी ही सरल भाषा में व्यक्त हुई है। वे भी कबीर की तरह किसी भी कटूक्ति पर व्यंग्य नहीं करते थे। वे केवल अपनी अभिव्यक्ति की चिंता लिए रहते थे। वे भी वैष्णव रस 'पिया' की बात, कबीर की ही पद्धति पर करते थे। प्रेम की पीड़ा क्या होती है, कबीर की तरह रैदास भी करते हैं।

- चमारों और सवर्ण हिन्दुओं का भेदभाव तथा शोषण

2.1.4.5 मलूकदास

दिल के अंदर खोजने वाले 'निर्गुण मत' के नामी संतों में प्रमुख हैं संत मलूकदास। इनके दोहे मानवीय मूल्यों को स्थापित करने तथा सामाजिक सरसता को बनाये रखने में आज भी बहुत प्रासंगिक है। मलूक दास ने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज को जागरूक बनाने का प्रयत्न किया वे किसी भी जाति या धर्म के व्यक्तियों के साथ भेदभाव नही करते थे वह सभी को एक नजर से देखते थे। इनकी दो पुस्तकें प्रसिद्ध हैं 'रत्नखान' और 'ज्ञानबोध'। आत्मबोध, वैराग्य, प्रेम आदि पर इनकी बानी बड़ी मनोहर है। इनकी भाषा सुव्यवस्थित और सुंदर है।

- मानवीय मूल्य एवं सामाजिक सरसता बनाये रखना

> अजगर करे ना चाकरी,पंछी करे ना काम,
> दास मलूका कह गए, सबके दाता राम !
>
> \- मलूकदास

सुंदरदास

ज्ञान मार्ग के अनुयायी सुन्दरदासजी ने अद्वैत मत का प्रतिपादन किया है। उनका ब्रह्म अद्वैत है, वह ज्ञानमय है और सर्वश्रेष्ठ शक्ति वाला है। सुंदरदास ने भारतीय तत्त्वज्ञान के सभी रूपों को शास्त्रीय ढंग से हिन्दी-भाषा में प्रस्तुत कर दिया है। सुंदरदास की छोटी-बड़ी कुल 42 रचनाएँ प्रसिद्ध हैं। संत जी ने गुरू महिमा, गुरू उपदेश, भ्रम निवारण, रामनाम, ब्रह्म का वास्तविक अर्थ, आत्मा का सच्चा स्वरूप ज्ञान, संसार और उसका स्वरूप आदि पर गहन विचार प्रकट किये हैं। संत सुन्दरदास जी ने "अधीरता" पर सर्वाधिक छन्द लिखे हैं। इन्होंने इससे दूर रहने के लिए कहा है कि अधीरता तृष्णा को जन्म देती है।

- शास्त्रीय ढंग से भारतीय तत्वज्ञान प्रस्तुत करना

धर्मदास

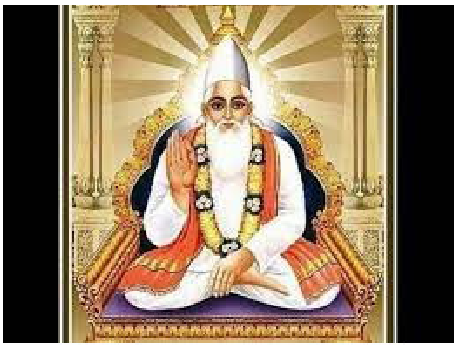

धर्मदास (1433-1543) कबीर पंथ के सबसे बड़े प्रचारक थे। उनका जन्म बाघेलखंड के बंधोगढ़ नामक स्थान में एक वैश्य कुल में हुआ था। प्रारंभ से ही उनका ध्यान भजन, पूजन, तीर्थयात्रा और दान-पुण्य की ओर था। कबीर के शिष्य बनने के बाद वे निर्गुण ब्रह्म का चिंतन करने लगे। सारी संपत्ति उत्पीड़ितों और सतनाम शासकों ने लूट ली। उनकी रचनाएँ ही उपलब्ध हैं। 'प्रसन्नता' उनका मुख्य काव्य है। उनकी बानी में प्रेम, धूर्तता और दास्य-भक्ति की प्रधानता है। इनकी भाषा प्राच्य भाषा से प्रभावित है।

▶ कबीरदास के प्रमुख शिष्य और कबीर पंथ के प्रवर्तक

धनी धर्मदास संत कबीर की निर्गुण काव्य धारा के प्रमुख संत है तथा संत परम्परा को आगे बढ़ाने में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। धनी धर्मदास संत कबीर के प्रधान शिष्य और कबीर पंथ के प्रवर्तक माने जाते हैं। डॉ. राम रतन भटनागर के मतानुसार 'छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के प्रवर्तक धर्मदास है।' संत कबीर की समस्त वाणी-वचनों को संग्रहीत और लिपिबद्ध करने का महान कार्य धनी धर्मदास ने ही किया था। धर्मदास जी अत्यन्त विनम्रतापूर्वक संत कबीर से जीव, जगत, आत्मा, परमात्मा से सम्बन्धित प्रश्न पूछते जाते थे। धनी धर्मदास कबीर वाणी के संग्रह के साथ, स्वयं भी अनेक भक्ति पदों की रचना की है, जो यत्र-तत्र स्फुट पदों के रूप में उपलब्ध है। संत कवि धनी धर्मदास का सम्पूर्ण काव्य सद्गुरू की उपासना का काव्य है। उनके काव्य की भाषा पूर्वी हिन्दी है, जिसमें कहीं-कहीं उर्दू, फारसी के शब्द भी पाये जाते हैं। धर्मदास जी के पद लोक मंगल की भावना से प्रेरित, लोक काव्य के अधिक निकट है।

▶ धनी धर्मदास का काव्य विशुद्ध हृदय की सहज अभिव्यक्ति है, हार्दिक भावों का सहज प्रकाशन है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

हिन्दी साहित्य इतिहास में भक्तिकाल के निर्गुण भक्तिधारा का विशेष स्थान है। निर्गुण संत कवियों ने समाज में व्याप्त अंधविश्वासों को तोड़कर सत्य, अहिंसा, प्रेम, करुणा, संयम, सदाचार आदि को बनाए रखने की कोशिश की। ये कविगण निर्गुण ब्रह्म की उपासना पर बल देते हैं। निर्गुणवादी संत कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता स्थापित करने के उद्देश्य से एकेश्वरवाद का समर्थन किया तथा बहुदेववाद का विरोध। ज्ञानमार्गी संत कवियों ने गुरु की महत्ता पर अधिक बल दिया है। ज्ञानमार्गी शाखा के कवि जाति-पाँति में विश्वास नहीं रखते थे। संत कवियों की भाषा स्वतंत्र और आडम्बर रहित थी।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. निर्गुण काव्य की विशेषताएँ लिखिए?
2. निर्गुण काव्याधारा के कवियों के बारे में टिप्पणी लिखो।
3. निर्गुण भक्ति मार्ग की विशेषताएँ क्या-क्या हैं?

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिंदी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिंदी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 2

कबीर

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- निर्गुण कवि कबीरदास के बारे में जानता है
- भारतीय भक्ति साधना में कबीर का स्थान समझता है
- कबीरदास के दस चर्चित दोहों से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

मध्यकालीन समाज में जब चारों तरफ जाति-पाँति, छुआछूत, धार्मिक पाखंड, अंधश्रद्धा से भरे कर्मकांड, मुल्ला-मौलवी तथा पंडित-पुरोहितों के ढोंग और साम्प्रदायिक उन्माद का बोलबाला था तब समाज सुधारक कबीरदास का आगमन ज़रूरी था। समाज में फैली कुरीतियों, कर्मकांड, अंधश्रद्धा, अंधविश्वास, आडम्बरों तथा सामाजिक बुराइयों की कड़ी आलोचना करते हुए उन्होंने समाज में प्रेम, सद्भावना, एकता और भाईचारे की भाव जगाई। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि मनुष्य को स्थान विशेष के कारण नहीं बल्कि उसके कर्मों के अनुसार ही गति मिलती है। संत कबीरदास जी ने सांप्रदायिक सद्भाव का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करते हुए समाज के दलित शोषित और कमजोर वर्ग की आशाओं और आकांक्षाओं को अपनी वाणी दी।

Keywords / मुख्य बिन्दु

काव्य के सूत्रधार, कबीर पंथ, स्वानुभूति, उलटबासियाँ

Discussion / चर्चा

कबीरदास के विचार दो-दो पंक्तियों के दोहों में समेटते हैं, जिन्हें 'कबीर के दोहे' के नाम से जाना जाता है। उनके ये दोहे आज भी लोगों के मुख से सुनने को मिलते हैं, जो हमारे लोकजीवन के इर्द-गिर्द ही घूमते नजर आते हैं और मनुष्य को जीवन की नई प्रेरणा देते हैं। वे धार्मिक एकता के प्रतीक और अंधविश्वास तथा धर्म व पूजा के नाम पर आडम्बरों के घोर विरोधी रहे।

2.2.1 कबीर द्वारा नवीन धर्म की स्थापना

कबीरदास के अनुसार, जीवन जीने का तरीका ही असली धर्म है जिसे लोग जीते है ना

कि वे जो लोग खुद बनाते हैं। उनके अनुसार कर्म ही पूजा है और जिम्मेदारी ही धर्म है। वे कहते थे कि अपना जीवन जीयो, जिम्मेदारी निभाओ और अपने जीवन को शाश्वत बनाने के लिये कड़ी मेहनत करो। कभी भी जीवन में सन्यासियों की तरह अपनी जिम्मेदारियों से दूर मत जाओ। उन्होंने पारिवारिक जीवन को सराहा है और महत्व दिया है जो कि जीवन का असली अर्थ है। कबीर ने लोगों को विशुद्ध तथ्य दिया कि इंसानियत का क्या धर्म है जो कि किसी को अपनाना चाहिये। उनके इस तरह के उपदेशों ने लोगों को उनके जीवन के रहस्य को समझने में मदद की।

कबीर पंथ कोई धर्म या जाति नहीं, बल्कि संत कबीर द्वारा दिखाया हुआ एक मार्ग है। इस मार्ग पर चलकर हर धर्म, जाति और मजहब का व्यक्ति अपने जीवन को सफल बना सकता है। कबीर पंथ की मान्यता और अभ्यास की नींव धर्म है। कबीरपंथी अन्य बातों में भी विश्वास करते हैं, जैसे, शाश्वत सत्य, सभी जीवित चीजों के प्रति अहिंसा की प्रकृति, ईश्वर के लिए भक्ति प्रेम, ईश्वर पर विश्वास, शत्रु को क्षमा करना, क्रूरता की भावना पर विजय प्राप्त करना, रक्त मन और वाणी में पवित्रता। सार्वभौम भाईचारा, आत्म सत्य की जागरूकता।

- कबीर पंथ की मान्यता और अभ्यास की नींव धर्म

2.2.2 कबीर का दर्शन

कबीर मूलतः दार्शनिक नहीं थे। वे तो भक्त, ज्ञानी और चिंतक थे। अपने चिंतन के क्षणों में ही उन्होंने ब्रह्मा, आत्मा, माया, जगत इत्यादि के संबंध में अपने विचार प्रकट किए हैं। कबीर का ब्रह्म, सत, रज, तम, तीनों गुणों से परे हैं। कबीर ने अपने आत्मसंबंध्दि विचारों के लिए पूर्व प्रचलित दार्शनिक मतों का सारतत्व ग्रहण किया। उन्होंने अपनी भाषा सरल और सुबोध रखी ताकि वह आम आदमी तक पहुँच सके। इससे दोनों सम्प्रदायों के परस्पर मिलन में सुविधा हुई। इनके पंथ मुसलमान-संस्कृति और गो भक्षण के विरोधी थे। कबीर को शांतिमय जीवन प्रिय था और वे अहिंसा, सत्य, सदाचार आदि गुणों के प्रशंसक थे। अपनी सरलता, साधु स्वभाव तथा संत प्रवृत्ति के कारण आज विदेशों में भी उनका आदर होता है।

- कबीरदास एक जबरदस्त क्रान्तिकारी पुरुष

2.2.3 कबीर के काव्य की विशेषताएँ

कबीर के काव्य सृजन का उद्देश्य भव्य कविता करना नही बल्कि अपनी अनुभूतियों का शब्दांकन करना था। कबीरदास के काव्य की विशेषता गुरु-भक्ति, ईश्वर के प्रति अथाह प्रेम, वैराग्य सत्संग, साधु महिमा, आत्म-बोध तथा जगत-बोध की अभिव्यक्ति है। कबीर के काव्य में पौरूष सहज ही झलकता है। कबीर ऐसे कवि थे, जो अपने संकल्प, अनुभूति के प्रति निष्ठा भाव रखते थे। कबीर ने संयोग व वियोग का सशक्त चित्रण कर अपनी पटुता का परिचय दिया है। कबीर हिन्दी काव्य के वह सूत्रधार थे जिन्होंने कविता को आम ज़िन्दगी का दर्पण बनाया तथा समाज और धर्म को अपने वर्ण्य विषय का केंद्र बिन्दु चुना। उनका विश्वास था कि सत्संगति में रहकर ही मनुष्य का सच्चा कल्याण हो सकता है। माया आत्मा और परमात्मा के मिलन में सबसे बड़ी बाधा है।

- कबीर के काव्य आम ज़िन्दगी का दर्पण

- कबीर ने साहित्य में स्वानुभूति की व्यंजना की। उन्होंने 'आँखन देखी बात' ही कही।
- कबीर काव्य का सौन्दर्य अकृत्रिम है। वह वन्य सरिता की भांति अनिर्धारित रास्ते से बहता है।
- बौद्धिकता की दृष्टि से कबीर का काव्य असाधारण है।
- कबीर काव्य में ज्ञान, भावना और कल्पना तीनों तत्वों का सुंदर सम्मिश्रण प्राप्त होता है।

- रस की दृष्टि से कबीर के काव्य में मुख्यतः तीन रसों यथा श्रृंगार, अद्‌भुत एवं शान्त का समावेश है किन्तु प्रधानता श्रृंगार की है।
- कबीर कवि से अधिक समाज सुधारक उपदेशात्मक होने के साथ-साथ सरल और सहज हैं।
- कबीर के काव्य में अलंकार का प्रयोग प्रयत्न से नहीं हुआ है। काव्य में अलंकार अनायास ही आकर काव्य को चमत्कृत करते हैं।
- उनकी काव्य भाषा मूलतः जन भाषा है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने तो कबीर को वाणी का डिक्टेटर कहा है।
- उलटबांसियाँ ...सीधे-सीधे न कहकर, घुमा-फिराकर उलटकर कविता के माध्यम से कही हुई बात अथवा व्यंजना उलटवाँसी कहलाती है।

Video - कबीर जीवन परिचय https://youtu.be/YPjhg5pAXb4

- कबीरदास का जीवन और काव्यादर्श समान रहे। वे समरसता व मानवता के पुजारी रहे

2.2.4 कबीर के रहस्यवाद का स्वरूप

- परमात्मा को प्राप्त करने के लिए आत्मा का प्रयत्न रहस्यवाद

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार साधना के क्षेत्र में जो अद्वैत है, साहित्य के क्षेत्र में वही रहस्यवाद है। इससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि रहस्यवाद केवल कविता का विषय है। कबीर ने रहस्य अथवा अज्ञात प्रिय को प्राप्त करने की सभी सीढ़ियाँ पार की थीं, इसलिए कबीर की कविता में रहस्यवाद की सभी अवस्थाएँ पाई जाती हैं। कबीर ने जो अनुभव किया, उसी को अपनी कविता में कह दिया है। इसी कारण रहस्यवादी कवियों में कबीर सर्वश्रेष्ठ हैं।

- मनुष्य, कवि अथवा आत्मा संसार में व्याप्त अज्ञात परमेश्वर को जानने का प्रयत्न करता है, यही रहस्यवाद है

कबीर के रहस्यवाद में कहीं सूफियों के प्रेम मार्ग के दर्शन होते हैं और कहीं पर हठ योगियों की छाप दिखाई देती है। कहीं कबीर ने सिद्धों की भाषा बोली है तो कहीं उपनिषदों के आधार पर रहस्यपूर्ण शैली में उस अज्ञात का वर्णन किया है। कबीर के रहस्यवाद में अद्वैतवाद का ज्ञान, प्रेम प्रधान भक्ति और योगियों के अनुभव समन्वय है। कबीर ज्ञान के सहारे अद्वैत की स्थिति में पहुँचते हैं और अद्वैत की स्थिति का वर्णन करने के लिए प्रेम का सहारा लेते हैं। यही कबीर की विशेषता है।

2.2.5 कबीर के दोहे

मध्यकालीन भक्ति-साहित्य की निर्गुण धारा (ज्ञानाश्रयी शाखा) के अत्यंत महत्वपूर्ण और विद्रोही संत-कवि हैं महात्मा कबीरदास। उनके लेखन ने हिन्दू धर्म के भक्ति आंदोलन को प्रभावित किया, और उनके छंद सिख धर्म के ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब, संत कबीरदास के सतगुरु ग्रंथ साहिब और कबीर सागर में पाए जाते हैं। संत कबीरदास के दोहे आज भी पथ प्रदर्शक के रूप में प्रासंगिक हैं।

1. प्रेम न बारी ऊपजै प्रेम न हाटि बिकाइ।
   राजा परजा जिहिं रुचै, सीस देइ लै जाइ।।
2. मानुख जनम दुर्लभ है, होइ न बारंबार।

पाका फल जो गिरि पारा, बहुरि न लागे डार।।

3. पानी केरा बुदबुदा, अस मानुष की जाति
   देखत ही छिप जइंगे, ज़्यौं तारे परिभाती।।
4. चकई बिछुरी रैनि की, आइ मिलै परभाति
   जे नर बिछूरे राम सौं, ते दिन मिले न राति।।
5. सतगुर की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार।
   लोचन अनंत उघारिया, अनंत दिखावनहार।।
6. जाकै मुंह माथा नहीं, नाहीं रूप कुरूप
   पुहुप बास तै पातरा, ऐसा तत्त अनूप
7. कस्तूरी कुण्डलि बसै, मृग ढ़ूंढ़ै बन माहि।
   ऐसे घटी घटी राम हैं दुनिया देखै नाँहि।।
8. माली आवत देखि कै, कलियाँ करैं पुकार।
   फूली-फूली चुनि गई, काल्हि हमारी बार।।
9. हिन्दू मुआ राम कहि मुसलमान खुदाई
   कहै कबीर सो जीवता जो दुहू के निकटि न जाई।
10. लालन की ओबरी नहीं, हंसन की नहीं पांति।
    सिंहन के लेंहड़ा नहीं, साधु न चलैं जमात।।

1. प्रेम न बारी ऊपजै प्रेम न हाटि बिकाइ।
राजा परजा जिहिं रूचै, सीस देइ लै जाइ।।

शब्दार्थ

बाडी	-	बाग
उपजे	-	पैदावार
हाट	-	बाज़ार या दुकान
बिकाई	-	बेचना
जेहि, सीस	-	सिर या अहंकार

भावार्थः कबीरदास जी कहते हैं, प्रेम खेत में नहीं उपजता, प्रेम बाज़ार में भी नहीं बिकता। चाहे कोई राजा हो या साधारण प्रजा, यदि प्यार पाना चाहते हैं तो वह आत्म बलिदान से ही मिलेगा। त्याग और समर्पण के बिना प्रेम को नहीं पाया जा सकता। प्रेम गहन-सघन भावना है, कोई खरीदी या बेची जाने वाली वस्तु नहीं।

▶ प्रेम पाने केलिए अहंकार छोड़ना

अर्थात्, प्रेम कहीं खेतों में नहीं उगता और प्रेम कहीं बाजार में नहीं बिकता। जिसको प्रेम चाहिए उसे अपना अहंकार, क्रोध, काम, इच्छा, भय आदि को त्यागना होगा।

Video -Doha 1- https://youtu.be/35wpovQ44ps

2. **मानुख जनम दुर्लभ है, होइ न बारंबार।**
   पाका फल जो गिरि पारा, बहुरि न लागे डार।।

शब्दार्थ

दुर्लभ	-	विरल
बारम्बार	-	बार बार
बहुरि	-	दुबारा या पुनः

▶ अमूल्य मानव जन्म नष्ट होने पर दुबारा न मिलता

भावार्थः इस संसार में मनुष्य का जन्म मुश्किल से मिलता है। यह मानव शरीर उसी तरह बार-बार नहीं मिलता जैसे वृक्ष से पत्ता झड़ जाए तो दोबारा डाल पर नहीं लगता।

अर्थात् मनुष्य का जन्म मिलना बहुत दुर्लभ है। जिस प्रकार पेड़ से झड़ा हुआ पत्ता वापस पेड़ पर नहीं लग सकता उसी प्रकार यह शरीर बार बार नहीं मिलता।

Video Doha 2- https://youtu.be/Om0K3y9uqOM

3. **पानी केरा बुदबुदा, अस मानुष की जाति**
   देखत ही छिप जइंगे, ज़्यौं तारे परिभाती।।

शब्दार्थः

बुदबुदा	-	बुलबुला
मानुष	-	मनुष्य
तारे	-	नक्षत्र
परिभाती	-	प्रभात

▶ मानव जन्म नश्वर और दुर्लभ है

भावार्थः प्रस्तुत दोहे में कबीरदास मानव जीवन की क्षणिकता के बारे में इशारा करते हैं। कबीर के मत में मानव जीवन पानी के बुलबुले के समान है। पानी के बुलबुले थोड़े ही समय में नष्ट हो जाता है। ठीक उसी प्रकार सबेरा होने पर प्रकश के कारण आकाश में टिमटिमाते तारे छिप जाते हैं। अर्थात यह मानव जाति तो पानी के बुलबुले के समान है। यह एक दिन उसी प्रकार छिप (नष्ट) जाएगी, जैसे ऊषा-काल में आकाश में तारे छिप जाते हैं। यह एक प्रकृति सत्य है कि मानव जीवन नश्वर है और प्रकाश फैलने पर आकाश में तारे दिखाई नहीं देते।

Video Doha 3 - https://youtu.be/XqJh8b9bv94

4. **चकई बिछुरी रैनि की, आइ मिलै परभाति**
   जे नर बिछूरे राम सौं, ते दिन मिले न राति।।

शब्दार्थः चकवी बिछुटी-चकवी पक्षी जो चकवे से बिछड़ चुकी है। रैणि की-रात्रि की। आइ मिली-मिल जाती है। परभाति-प्रभात / सुबह होने पर। जे जन-जो व्यक्ति। बिछुटे-बिछड़ जाते हैं। राम सूँ- राम से। ते- वे। दिन मिले न राति-दिन रात को कभी नहीं मिल पाते हैं।

भावार्थः चकवा और चकवी पक्षी यदि रात्रि को एक दूसरे से बिछुड़ जाते हैं तो प्रभात होने पर पुनः मिल जाते हैं। लेकिन जो जन राम से बिछुड़ चुके हैं वे न तो दिन में और न रात्रि को पुनः ईश्वर से मिल पाते हैं। उल्लेखनीय है कि कबीर सन्देश देते हैं कि वासना में लिप्त जीवात्मा हरी से विमुख हो जाती है। माया का भ्रम कुछ ऐसा होता है जो उसे भक्ति मार्ग की

▶ आत्मा -परमात्म मिलन केलिए मन को पवित्र रखना

तरफ अग्रसर नहीं होने देता है।

चकवा चकवी के उदाहरण से कबीर यह सन्देश देते हैं कि जीवात्मा को ईश्वर के नाम सुमिरण के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए और माया को समझना चाहिए जिससे उसका हरी से मिलन सम्भव हो पाए।

Video Doha 4 https://youtu.be/LLFdaGnWxQs

5. **सतगुर की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार।**
लोचन अनंत उघारिया, अनंत दिखावनहार।।

शब्दार्थः

अनंत	-	असीमित
लोचन	-	आँख
उघाडिया	-	आँखों को खोला, सत्य दिखाना
उपगार	-	उपकार

▶ गुरु महिमा का वर्णन

भावार्थः सतगुरु ने ज्ञान की प्राप्ति को सम्भव बनाया और मुझ पर अनंत उपकार किये हैं, ऐसे संत की महिमा अपार है। माया के कारण मेरी आँखें बंद पड़ी थीं, सत्य मुझे दिखाई नहीं दे रहा था, सतगुरु ने मेरी आँखों को खोला और मुझे सत्य दिखाया, सत्य का दर्शन करवाने वाले ऐसे संत की महिमा अनंत और अपार है। अर्थात् इस दुनिया की बुराई छोड़कर भलाई देखने का ज्ञान गुरु से ही मिला है।

Video Doha No. 5 https://youtu.be/WkemdUyS-xY

6. **जाकै मुंह माथा नहीं, नाहीं रूप कुरूप**
पुहुप बास तै पातरा, ऐसा तत्त अनूप

शब्दार्थः

जाकै	-	जिसके (ईश्वर)
मह	-	समाहित
माथा नहीं	-	सिर नहीं है
नहीं रूप करूप	-	निराकार है, वह ना तो सुन्दर है और नाही कुरूप ही।
पुहुप बास थैं	-	जैसे फूलों में खुशबु है।
तत अनूप	-	अनुपम तत्व (पूर्ण ब्रह्म)।

भावार्थः ईश्वर के स्वरूप के सन्दर्भ में कबीर की वाणी है कि जिसके कोई मुंह नहीं है, कोई माथा नहीं है वह तो निर्गुण और निराकार है। उसे ना तो सुन्दर कहा जा सकता है और न कुरूप ही। वह फूलों की खुशबु की भाँति है जिसे ना तो छुआ जा सकता है और ना ही देखा जा सकता है। लेकिन उसके अस्तित्व को महसूस किया जा सकता है। उसके होने का / अस्तित्व का पता लगाया जा सकता है। ऐसा है निर्गुण परम ब्रह्म। भाव यह है कि ईश्वर

> ▶ निर्गुण ब्रह्म यानी ईश्वर सर्वव्यापी है

को हम मंदिर, देवालय और मूर्तियों में एक रूप में ढाल कर देखते हैं। यह सत्य नहीं है क्योंकि वह तो निराकार है, निराकार होकर भी साकार है, कण -कण में व्याप्त है। जिसके अस्तित्व को समझा जा सकता है।

कबीर ने जहाँ मूर्तिपूजा का विरोध किया वहीं पर लोगों को धार्मिक कर्मकाण्ड और अन्धविश्वास के प्रति भी जाग्रत किया और समझाया कि ईश्वर किसी स्थान विशेष का मोहताज नहीं है, वह तो कण-कण में, समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। उसे कहीं ढूँढने के लिए जाने की आवश्यकता नहीं है। वह तो हमारे ही घट में है। वस्तुतः मानवता को अपनाकर और सन्मार्ग पर चलकर हम सत्य के प्रकाश में उसे महसूस कर सकते हैं। ईश्वर को महसूस करने की क्षमता भी तभी आएगी जब हम भक्ति के प्रति पूर्ण समर्पित होंगे, यदि डरपोक तैराक की भाँति ऊपर -ऊपर ही घूम फिर कर आ गए तो कुछ भी हाथ नहीं लगने वाला है, इसके लिए अन्दर तक गोता लगाने की आवश्यकता है। कबीरदास ने यहां सही भक्ति और भक्त के बारे में इशारा किया है।

> ▶ निर्गुण और निराकारपूर्ण ब्रह्म के विषय में सन्देश

Video Doha No. 6 https://youtu.be/qU9LwhLk6Ac

7. **कस्तूरी कुण्डली बसै मृग ढूँढ़े बन माहि।**
   ऐसे घटी घटी राम हैं दुनिया देखै नाहिं।।

शब्दार्थः

कुण्डली	-	नाभी
बसै	-	रहना
मृग	-	हिरण
बन	-	जंगल
माहि	-	के अंदर
घटी घटी	-	हृदय में।

भावार्थः ईश्वर कहाँ है? यह एक ऐसा प्रश्न है जिसे शास्त्रों और विद्वानों के द्वारा बड़े ही जटिल शब्दों में प्रदर्शित किया जाता रहा है। जिसे समझना एक साधारण आदमी के लिए बहुत ही मुश्किल प्रतीत होता है। कबीर ने इसे बड़े ही साधारण शब्दों में समझाते हुए कहा कि जैसे कस्तूरी हिरण की नाभि में ही होती है, लेकिन वह उसे जंगल में जगह जगह ढूंढता फिरता है। वैसे ही हमारे अंदर ही /आत्मा के अंदर ईश्वर का वास है लेकिन उसे समझने के अभाव में हम उसे, मंदिर मस्जिद, तीर्थ, एकांत, तप और न जाने कहाँ कहाँ ढूंढते हैं। सत्य आचरण, मानव के मूल गुणों को अपनाकर हम ईश्वर के नजदीक जा सकते हैं।

> ▶ कस्तूरी मृग की नाभी में निहित कस्तूरी की भाँती हमारे अंदर ईश्वर बसता है

8. **माली आवत देखि कै, कलियाँ करें पुकार।**
   फूली-फूली चुनि गई, काल्हि हमारी बार।।

शब्दार्थः

आवत	-	आते
करैं पुकार	-	कहने लगे
फूली-फूली	-	खिले हुये सब फूल
कालि	-	कल
बार	-	बारी

भावार्थः काल के विषय में वाणी है कि जो कलियाँ खिल चुकी हैं /फूल बन चुकी हैं उन्हें तोड़ लिया गया है और जो खिलने वाली हैं उनकी बारी कल आने वाली है। काल सभी को अपना शिकार बनाता है। किसी का समय आज है तो किसी का कल, यही सृष्टि का नियम है।

▶ माली परमात्मा और कलियाँ जीवात्मा के प्रतीक हैं

प्रस्तुत दोहे में कबीरदास फूल और कलियों के जरिये जीवन की नैमिषिकता की ओर याद दिलाते हैं। मालिन को आते देखकर बगीचे की कलियाँ आपस में बातें करती हैं कि आज मालिन ने फूलों को तोड़ लिया और कल हमारी बारी आ जाएगी। अर्थात् आज आप जवान हैं कल आप भी बूढ़े हो जायेंगे और एक दिन मिट्टी में मिल जाएँगे। आज की कली, कल फूल बनेगी।

▶ मानव को अपने जीवन की क्षणभंगुरता का एहसास होना चाहिए

भाव है कि हमारा समय पूरा होने से पहले हमें ईश्वर की भक्ति में अपना समय लगाना है। यह मानव जीवन कोई इत्तेफाक नहीं है, बहुत ही जतन से प्राप्त हुआ है इसलिए इसका महत्त्व समझना बहुत ही आवश्यक होता है। अर्थात् मानव को इस अनमोल जीवन के महत्व को समझकर ईश्वर की भक्ति में लीन होना चाहिए।

Video Doha No. 8 https://youtu.be/P2bLncLoZGQ

9. **हिन्दू मूआ राम कहि मूसलमान खुदाई**
   कहै कबीर सो जीवता जो दुहू के निकटि न जाई।

शब्दार्थः

हिन्दू मूये राम कहि	-	हिन्दू राम राम पुकारते हैं / राम कहते हैं
मुसलमान खुदाई	-	मुसलमान खुदा का नाम पुकारते हैं, मुस्लिम लोगों के लिए खुदा ही सर्वश्रेष्ठ है
कहै कबीर सो जीवता	-	जीवित वही है/तत्व ज्ञान उसी ने प्राप्त किया है
दुहू के निकटि न जाई	-	दोनों के प्रतीकात्मक रूप में जो कभी नहीं जाता है।

भावार्थः हिन्दू कहता है कि उसे राम प्यारा है और मुस्लिम कहता है कि उसे खुदा प्यारा है। कबीर साहेब का कहना है कि जो इन दोनों में नहीं पड़ता है वही जीवित है। कबीर साहेब के समय में दो धर्म प्रमुखता से प्रचलित थे। एक हिन्दू और दूसरा मुस्लिम। मुस्लिम धर्म शासकीय धर्म था क्योंकि यह मुस्लिम राजाओं के द्वारा लोगों पर बलपूर्वक थोपा गया था। दोनों ही धर्म के अनुयायी अपने धर्म को महान मानते थे। कबीरदास सदा से ही एक ऐसी शक्ति के पक्षधर थे जो पूर्ण परम ब्रह्म शक्ति है। इसका कोई आकार नहीं है वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर भी ब्रह्माण्ड का नहीं है। ऐसे में कबीरदास उपदेश देते हैं कि यह संघर्ष व्यर्थ है। जिस

▶ ना राम ना ही खुदा महान

विषय को लेकर यह संघर्ष हो रहा है उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। भले ही कोई राम को महान और सर्वोच्च माने या कोई खुदा को, कबीरदास के मुताबिक़ ना राम ना ही खुदा महान है बल्कि वह तो पूर्ण ब्रह्म है जिसका कोई रूप और आकार नहीं है।

▶ मानवता को श्रेष्ठ मानना

कबीरदास के विचार मूल रूप से अहिंसा, सत्य, सदाचार और मानवता के पक्षधर थे। जिससे हिन्दू-मुस्लिम के मध्य का टकराव कम हुआ। कबीर के अनुयायी हिन्दू और मुस्लिम धर्म दोनों के मतावलम्बी थे। समाज में फैले पाखण्ड, भेदभाव और धार्मिक कर्मकांड के प्रति उन्होंने लोगों को सचेत किया और हिन्दू मुस्लिम दोनों ही धर्मों में व्याप्त अन्धविश्वास और पाखण्ड से लोगों को अवगत करवाया। कबीर ने किसी भी धर्म को सर्वोच्च मानने के स्थान पर मानवता को श्रेष्ठ घोषित किया।

10. **सिंहों के लेहँड़ नहीं, हंसों की नहीं पाँत।**
लालों की नहि बोरियाँ, साध न चलैं जमात।।

शब्दार्थः

लेहँड़	-	झुण्ड
पाँत	-	पंक्ति
लाल	-	रत्न
साध	-	साधु

भावार्थः सिंहों के झुण्ड नहीं हुआ करते और न हंसों की कतारें। लाल-रत्न बोरियों में नहीं भरे जाते, और जमात को साथ लेकर साधु नहीं चला करते। धर्म के नाम पर देखे जानेवाले पाखंड पर कबीरदास जी का यह दोहा हास्यास्पद तरीके से वार करता है। जिस प्रकार सिंहों का झुंड देखने को नहीं मिलता और हंस भी बड़ी जमात में नहीं दिखाई देते। उसी प्रकार सच्चे भक्त बड़ी मात्रा में झुंड जमाकर तीर्थस्तानों का दर्शन करने नहीं जाते। दर्शन के नाम पर अक्सर लोग तीर्थस्थानों को पर्यटन स्थान बना लेते हैं। समूह बनाकर घर से ऐसे निकलते हैं मानो छुट्टियाँ बिताने जा रहे हो और इन लोगों के हृदय में वास्तविक भक्ति का अभाव है और इनके कारण तीर्थ स्थानों में पंक्तियाँ लग जाती हैं। धर्म के नाम पर यह पाखंड हास्यास्पद है। इस तरह के ढोंग ने ही धर्म को बदनाम किया है जिसकी ओर कबीरदास जी का यह दोहा प्रकाश डालता है।

▶ सच्चे भक्त समाज में कम है

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

कबीरदासजी ने अपने अनुभवों को कविताओं अथवा दोहों के रूप में, उपदेशात्मक शैली में लोक प्रचलित और सरल भाषा में लोगों को बता दिया। कबीर ने अपना सम्पूर्ण जीवन समाज सुधार के कार्यों में लगा दिया था। सदियाँ बीत जाने के बाद भी कबीरदास के विचार 21 वीं सदी में भी बेहद प्रासंगिक हैं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. कबीर का दर्शन विषय पर टिप्पणी लिखें।
2. 'प्रेम न बाडी उपजे प्रेम न हाट बिकाई।
   राजा परजा जेहि रुचे सीस देहि ले जाई॥'- भावार्थ लिखिए।
3. कबीर के काव्य की विशेषताएँ क्या-क्या हैं ?
4. 'कबीर के रहस्यवाद'पर टिप्पणी लिखें।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिंदी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिंदी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 3

हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा से परिचित होता है
- सूफी काव्य का वैचारिक आधार एवं दार्शनिकता समझता है
- सूफी प्रेमाख्यान काव्य का स्वरूप पहचानता है
- हिन्दी के प्रमुख सूफी कवियों के बारे में जानकारी प्राप्त करता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य में निर्गुण काव्यधारा दो शाखाओं में विभाजित हुई- संत काव्य धारा और सूफी काव्य धारा। सूफी काव्य परंपरा हिन्दी साहित्य के भक्ति काल की एक प्रमुख काव्य परंपरा है। भारत के मध्य युग के इतिहास में जहाँ संत कवियों ने भक्ति के साधारण मार्ग की प्रतिष्ठा की और ईश्वर को ज्ञान और प्रेम का साधन मानते हुए हिन्दू-मुसलमानों के बीच भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया, उसी समय सूफी फकीरों द्वारा भी हिन्दू-मुसलमानों की एकता को सुदृढ़ करने का प्रयास किया गया। सूफी प्रेम काव्य कोमल हृदय की सुंदर एवं सरस अभिव्यक्ति है। इस काव्य में सब के प्रति सहिष्णुता, समन्वय और प्रेम की भावना का चित्रण मिलता है। प्रेम काव्य की रचना सूफी कवियों की ही देन कही जा सकती है। प्रेम वर्णन के कारण ही इस काव्यधारा को प्रेमाश्रयी, प्रेममार्गी या प्रेमाख्यान कहा जाता है। भारत में सूफी मत के प्रचार-प्रसार का श्रेय ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती को है, जिन्होंने इसे लोकप्रिय बनाया।

Keywords / मुख्य बिन्दु

प्रेमाख्यान काव्य परंपरा, प्रतीकात्मकता, मसनवी शैली, अलौकिक प्रेम

Discussion / चर्चा

मध्य युगीन भारत के इतिहास में जहाँ एक ओर निराशावादी सन्तों ने जन साधारण के लाभार्थ भक्ति के सहज सुगम मार्ग प्रशस्त करने तथा हिन्दू-मुसलमानों के पारस्परिक भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया, वहीं दूसरी ओर सूफी कवियों ने हिन्दू, मुसलमानों की पारस्परिक एकता को बढ़ाने में अमूल्य योगदान दिया है। सूफी लोग साधना के लिए हृदय की पवित्रता पर ज़ोर देते हैं। इस दिशा में उन्हें सन्त कवि कबीरदास, रैदास, मलूकदास

▶ संत कवियों की रचनाएँ हृदय पक्ष की अपेक्षा बुद्धि से संबन्धित

की अपेक्षा अधिक सफलता मिली है। इसका कारण यह है कि सन्तमार्गी कवियों ने अपने खण्डनात्मक स्वर की कर्कशता के द्वारा हिन्दू तथा मुसलमान दोनों को ही अप्रसन्न कर दिया था, किन्तु सूफी कवियों ने प्रेमाख्यानों के माध्यम से हिन्दू, मुसलमानों के पारस्परिक भेदभाव को मनोवैज्ञानिक पद्धति से दूर किया। इतना ही नहीं सन्त कवियों की रचनाएँ हृदय पक्ष की अपेक्षा बुद्धि से सम्बन्धित थीं, किन्तु सूफी कवियों की रचनाओं में हृदय-पक्ष का प्राधान्य था।

2.3.1 हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा

प्रेमाख्यानक काव्यधारा निर्गुण काव्य धारा की ही एक शाखा है। संत काव्य के समानान्तर प्रेमाख्यानक काव्य भी लिखे जा रहे थे। प्रेमाख्यानक कवि हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी। मुसलमान कवि अधिक सशक्त रचनाकर हैं और उनकी रचनाएँ ही अधिक चर्चित हैं। प्रेमाख्यान परम्परा का दर्शन स्वयं में ही एक ऐसा विषय है जो अत्यंत उलझा है। उसका कारण यह है कि अधिकांश विद्वानों की राय में यह प्रेमाख्यान इस्लाम की उदारवादी विचार धारा सूफी मार्ग से प्रभावित है। कुछ विद्वानों की यह भी मान्यता है कि यह विशुद्ध भारतीय अद्वैत वादी दर्शन पर आधारित है। इस शाखा के कवियों में कुतुबन, मंझन, जायसी, उसमान और शेखनबी अत्यन्त प्रसिद्ध हैं तथा मृगावती, मधुमालती, पद्मावत, चित्रावली और ज्ञानदीन इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

▶ मुसलमानों की कोमल हृदय की अभिव्यक्ति

2.3.2 सूफी काव्य का वैचारिक आधार एवं दार्शनिकता

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इन प्रेमाख्यानकों पर फारसी मसनवियों का प्रभाव माना है, किन्तु हमें यह भी याद रखना चाहिए कि इस प्रकार का प्रेम चित्रण भारतीय परंपरा में भी प्रचुरता से उपलब्ध होता है। प्राकृत भाषा में गुणाढ्य द्वारा रचित 'बृहत्कथा' तथा क्षेमेन्द्र के 'कथासरित्सागर' की प्रेमकथाओं में प्रेम की उत्पत्ति सौन्दर्य प्रेरणा से हुई है। नायक को नायिका के संरक्षकों का विरोध झेलना पड़ा है। फारसी मसनवियों में नायिका का विवाह प्रतिनायक से हो जाता है और नायक आत्महत्या कर लेता है पर भारतीय प्रेमाख्यानकों में किसी देवी शक्ति की सहायता से नायक को नायिका की प्राप्ति अवश्य ही हो जाती है। वस्तुतः यह प्रेमाख्यानक परंपरा महाभारत की अनेक कथाओं में उपलब्ध होती है। महाभारत का नल-दमयंती वृतांत (वन पर्व) प्रेमाख्यानक काव्य की सभी विशेषताओं से युक्त है और डॉ. नगेन्द्र ने इसी को भारतीय प्रेमाख्यानों की आधार भूमि माना है।

▶ लोकप्रचलित प्रेम कथाओं को ऐतिहासिक, अर्ध ऐतिहासिक, लौकिक या पौराणिक आधार बनाना

2.3.3 सूफी प्रेमाख्यान काव्य का स्वरूप

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा उनके अनुयायी विद्वानों ने प्रेमाख्यान काव्य परंपरा के सभी काव्यों को फारसी-मसनवियों से अनुकृत मानते हुऐ इन्हें 'मसनवी' सिद्ध करने का प्रयास किया है, लेकिन सफल नहीं हुए। शुक्लजी के मतानुसार इन काव्यों के आरंभ में ईश्वर स्तुति, तत्कालीन शासक का उल्लेख, कथा को सर्गो में विभक्त न होना, पूरे काव्य में एक ही छंद का प्रयोग आदि बातें इसे मसनवी सिद्ध करती है।

▶ सूफी प्रेमाख्यान काव्य मसनवी शैली में

सूफी कवियों ने अपनी रचनाओं में हिन्दू घरों में प्रचलित प्रेम कथाओं को ग्रहण करते हुए आध्यात्मिक प्रेम का निरूपण किया है। आध्यात्मिक प्रेम की व्यंजना के लिये उन्होंने अपने धार्मिक सिद्धान्तों का निरूपण करते हुए भी न तो हिन्दू धर्म की कहीं निन्दा की है और न ही हिन्दू देवी-देवताओं के प्रति अवज्ञा दिखलाई है। इतना ही नहीं, उन्होंने तो हिन्दुओं के आचार-विचार एवं रहन-सहन के प्रति अत्यन्त उदार एवं सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया है।

▶ हिन्दू घरों में प्रचलित प्रेम कथाओं को ग्रहण

सूफी कवियों ने हिन्दू, मुसलमानों की पारस्परिक एकता को बढ़ाने में अमूल्य योगदान दिया है। इस दिशा में उन्हें सन्त कवियों कबीरदास, रैदास, मलूकदास की अपेक्षा अधिक सफलता मिली है। इसका कारण यह है कि सन्तमार्गी कवियों ने अपने खण्डनात्मक स्वर की कर्कशता के द्वारा हिन्दू तथा मुसलमान दोनों को ही अप्रसन्न कर दिया था, किन्तु सूफी कवियों ने प्रेमाख्यानों के माध्यम से हिन्दू, मुसलमानों के पारस्परिक भेदभाव को मनोवैज्ञानिक पद्धति से दूर किया।

- लौकिक प्रेम-व्यापारों के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना

2.3.4 हिन्दी के प्रमुख सूफी कवि

हिन्दी में प्रेमाख्यान काव्य परंपरा का प्रवर्तन किस कवि द्वारा हुआ, इस प्रश्न का असंदिग्ध उत्तर उपलब्ध नहीं है। आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने 'मृगावाती' की रचयिता कुतुबन को इस परंपरा का प्रथम कवि माना है। अन्य प्रेमाख्यानक कवि और उनके काव्य है- 'लोरकहा या चंदायन': मुल्ला दाउद, 'मधुमालती': मंझन, 'पद्मावत': जायसी, 'ज्ञानदीप': शेख नवी, 'माधवानल कामकंदला': 'आलम', 'चित्रावली': उसमान, 'रसरतन' पुहकर कवि, 'लखमसेन पद्मावती कथा' दामोदर कवि, 'सत्यवती कथा': ईश्वरदास, 'छिताई वार्ता'- नारायण दास, 'हंसावली' असाइत आदि हैं।

- हिन्दी सूफी कवि हिन्दू धर्म एवं संस्कृति की सामान्य जानकार

2.3.4.1 कुतुबन

कुतुबन कृत मृगावती में नायक राज कुमार तथा नायिका मृगावती के प्रथम दर्शन जन्य प्रेम का निरूपण अत्यंत भावात्मक शैली में हुआ है। परंपरागत प्रेमाख्यानों की विभिन्न प्रवृतियों का भी समन्वय इस में कुशलता पूर्वक हुआ है। कथा की परिणति अपभ्रंश के जैनकाव्यों की परंपरा के अनुसार शांत रस में होती है। इसकी भाषा अवधि है। इस में दोहा -चौपाई छंदों का प्रयोग किया है। इस कहानी के द्वारा कवि ने प्रेममार्ग के त्याग और कष्ट का निरूपण करके साधक के भगवत प्रेम का स्वरूप दिखाया है।

- मृगावती कहानी में प्रेममार्ग के त्याग और कष्ट का निरूपण

2.3.4.2 मुल्ला दाऊद

मुल्ला दाऊद कृत 'चांदायन' प्रेमाख्यान काव्य परंपरा का दूसरा काव्य है। इसके विभिन्न पाठ उपलब्ध हुए हैं। डॉ. माताप्रसाद गुप्त ने इस ग्रंथ का मूल 'लोरकहा या लोरकथा' माना है। डॉ. माताप्रसाद गुप्त ने विभिन्न दृष्टियों से सूक्ष्मतापूर्वक विचार करते हुए इसे भारतीय परंपरा का आख्यान सिद्ध किया है। विषय वस्तु की दृष्टि से भी इस में भारतीय प्रेमाख्यानों की विभिन्न प्रवृत्तियों की व्यंजना सफलतापूर्वक हुई है। नायक और नायिका का उन्मुक्त प्रणय, प्रथम दर्शन में भी प्रेमोत्पत्ति, विभिन्न व्यक्तियों द्वारा उनके प्रेम में बाधा, नायक का योगी होकर

जाना आदि। इसकी भाषा अवधि और शैली भावानुकूल और सरस है।

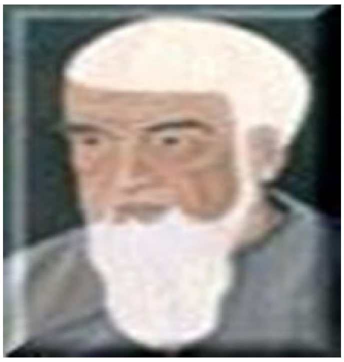

▶ मसनवी शैली में 'चंदायन' की सृजन

2.3.4.3 मलिक मुहम्मद जायसी

हिन्दी में सूफ़ी काव्य परंपरा के श्रेष्ठ कवि हैं मलिक मुहम्मद जायसी। 'जायस' के रहने वाले होने के कारण इन्हें 'जायसी' कहा जाता है। जायसी कृत 'पद्मावत' को इस परंपरा का प्रौढतम काव्य माना जाता है। इस में चितौड़ के राजा रत्नसेन एवं सिंहल की राजकुमारी पद्मावती के प्रेम विवाह एवं विवाहोत्तर जीवन का मार्मिक चित्रण हुआ है। मलिक मुहम्मद जायसी ने अपने प्रेममार्गी कविताओं के द्वारा हिन्दू और मुसलमानों को एक करने की काफी कोशिश की। इसके लिए इन्होंने प्रेम का सहारा लिया। मलिक मुहम्मद जायसी जी की भाषा ठेठ अवधी है। मलिक मुहम्मद जायसी की 21 रचनाओं का उल्लेख उनके साहित्य में मिलता है। जिसमे पद्मावत, आखरी कलाम, चित्ररेखा, अखरावट आदि प्रसिद्ध रचनाएँ है। इसमें पद्मावत सर्वोत्कृष्ट है और वही जायसी की अक्षयकीर्ति का आधार है। लोकपरंपरा के प्रति जायसी की आस्था उनकी काव्य भाषा में प्रकट है।

▶ लोकवृत्त और ऐतिहासिक वृत्त की लेखन कला

2.3.4.4 मँझन

मँझन कृत मधुमालती में नायक-नायिका के प्रथम दर्शन जन्य प्रेम के साथ-साथ पूर्व जन्म के प्रणय संस्कारों की भी महत्ता दिखाई गई है। सामान्यतः हिन्दी प्रेमाख्यानों में नायक को बहुपत्नी वादी दिखाया गया है, किन्तु यह प्रेमाख्यान इसका अपवाद है। कवि का लक्ष्य प्रायः प्रेम के उच्च एवं उदात्त स्वरूप की व्यंजना करना रहा है, जिसमें वह सफल हुआ है। इसमें अवधि भाषा एवं दोहा-चौपाई का प्रयोग हुआ है तथा इसकी शैली में सरलता एवं सरसता दृष्टिगोचर होती है। मधुमालती में नायक के प्रेम की गंभीरता एवं एकोन्मुखता का परिचय इस बात से मिलता है कि वह एक ओर तो मधुमालती की प्राप्ति के लिए भांति-भांति के कष्टों को सहन कर लेता है तथा दूसरी ओर महा सुंदरी प्रेमा के प्रणय -प्रस्ताव को छोड देता है।

▶ सूफी प्रेमाख्यानक काव्यपरंपरा में मधुमालती का विशेष स्थान

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

जिस प्रकार सूफियों के प्रभाव से भारतीय भक्ति साहित्य के रचनाकार प्रभावित हुए थे, उसी प्रकार सूफी भी यहाँ के साधनात्मक और रहस्यवाद से प्रभावित हुए। सूफी मत के अनुयायी उदार, विशाल हृदय, सहिष्णु एवं संवेदनशील हैं। मध्यकालीन संस्कृति एवं लोक जीवन के विविध पक्षों का सहज एवं स्वाभाविक चित्रण सूफी प्रेमाख्यान काव्य में किया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. सूफी काव्य का वैचारिक आधार एवं दार्शनिकता पर टिप्पणी लिखिए।
2. सूफी प्रेमाख्यान काव्य का स्वरूप का वर्णन कीजिये?
3. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा से तात्पर्य क्या है?
4. मुल्ला दाऊद कौन है? प्रेमाख्यान काव्य परंपरा में उनका स्थान क्या है?

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 4

मल्लिक मुहम्मद जायसी

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- सूफी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा से अवगत होता है
- सूफी कवि जायसी से परिचित होता है
- पद्मावत के सारांश से अवगत होता है
- नागमति वियोग खण्ड से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल का प्रारम्भ हुआ जो कि साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आदिकाल के बाद आए मध्यकाल हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठ काल था। भक्तिकाल की निर्गुण धारा के अंतर्गत संत काव्य एवं सूफी काव्य नामक दो शाखाएँ हैं। सूफी काव्य के लिए प्रचलित कुछ अन्य नाम हैं प्रेम मार्गी शाखा, प्रेमाश्रयी शाखा, प्रेमाख्यानक काव्य परंपरा, रोमांटिक कथा काव्य परंपरा। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इन प्रेमाख्यानकों पर फारसी मसनवियों का प्रभाव माना है। यह प्रेमाख्यानक परंपरा महाभारत की अनेक कथाओं में उपलब्ध होती है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

इश्क मजाजी, इश्क हकीकी, विरहवर्णन, सती

Discussion / चर्चा

2.4.1 जायसी और पद्मावत

महाकवि मलिक मुहम्मद जायसी का पद्मावत हिन्दी का गौरव ग्रंथ है। रामचरित मानस या सूरसागर की भांति हिन्दी के भक्तिकालीन साहित्य को समृद्ध करने का श्रेय पद्मावत को भी प्राप्त हो गया है। यह प्रबंध काव्य 52 सर्गों में व्याप्त एक विशालकाय काव्य है। इसका संक्षिप्त रूप श्याम सुंदरदास और सत्यजीवन वर्मा द्वारा संपादित संक्षिप्त पद्मावत है। पद्मावत में चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेम कथा का वर्णन है। इस कथा के शुरुआत में रत्नसेन और पद्मावती के विवाह की कथा काल्पनिक है। उसके

- 52 सर्गों में विभक्त प्रबंध काव्य

बाद रत्न सेन और अलाउद्दीन तथा रत्नसेन और देवपाल का युद्ध ऐतिहासिक है।

▶ पद्मावत उत्कृष्ट प्रेम काव्य

पद्मावत कथा में लोकपक्ष(सांसारिक पक्ष) और अध्यात्मपक्ष(काल्पनिक पक्ष) का सम्मेलन हुआ है। संसार की दृष्टि से पद्मावत सुंदर प्रेम कहानी है। आध्यात्मिक दृष्टि से राजा 'मन' है चित्तौड़ 'तन' और सिंहल को 'हृदय' माना जाता है। जायसी की रचना 'पद्मावत' में नायक और नायिका के दुख का वर्णन दिखाई पड़ता है। कल्पना और इतिहास के मिश्रण से तैयार यह रचना साहित्य की भूमि पर एक बेजोड़ नमूना है।

▶ काव्य की प्रत्येक घटना में परम तत्व की ओर संकेत

पद्मावत का कथासार- सूफ़ी प्रेमगाथा काव्य की परंपरा में 'पद्मावत' का स्थान सर्वोपरि है। कथानक की प्रौढ़ता और वर्णन की सहजता इसे अन्य प्रेमगाथाओं से बहुत उच्च कोटि की रचना बना देती है। चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मिनी के इतिहास-प्रसिद्ध कथानक और जनमानस में इसके नायकों के भावनात्मक प्रभाव ने बहुत शीघ्र ही इसे अत्यंत लोकप्रिय रचना बना दिया। अन्य सूफ़ी काव्यों की तरह इसकी रचना भी मसनवी शैली में की गई है परंतु भारतीय कथानक होने के साथ-साथ भारतीय काव्यपरंपरा का भी स्पष्ट प्रभाव इस पर परिलक्षित होता है। कथा के पूर्वार्ध में राजा रत्नसेन के द्वारा रानी पद्मिनी या पद्मावत के रूप का वर्णन हीरामन तोते से सुन कर उसकी प्राप्ति के लिये जान की बाजी लगा देने और भगवान शंकर की कृपा से उसे प्राप्त करने तक की कथा जहाँ पूरी तरह कवि-कल्पित है।

▶ प्रेम कहानी के उत्तम उदाहरण

उत्तरार्ध काफी हद तक प्रामाणिक इतिहास है। रानी पद्मिनी के रूप को सुनकर उसे प्राप्त करने के लिये बादशाह अलाउद्दीन खिलज़ी ने चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया और धोखा देकर राजा को कैद कर दिल्ली ले गया। राजा को छुड़ाने के लिये रानी पद्मिनी अलाउद्दीन के पास जाने को तैयार हो जाने का संदेश भिजवाती है और एक योजना के अनुसार गोरा और बादल नामक बहादुर क्षत्रिय 700 पालकियों में सशस्त्र सैनिक छिपाकर दिल्ली पहुँच जाते हैं। बादशाह को संदेश भिजवाया जाता है कि रानी पहले अपने पति से थोड़ी देर मिलकर तब बादशाह के हरम में जायेंगी। इसकी आड़ में रत्नसेन को कैद से निकाल लिया जाता है और वो वापस चित्तौड़ पहुँच जाते हैं। वहाँ कुंभलनेर के राजा देवपाल के साथ युद्ध में रत्नसेन और देवपाल दोनों मारे जाते हैं और उनकी दोनों रानियाँ नागमती और पद्मिनी सती हो जाती हैं। इसी बीच अलाउद्दीन चित्तौड़ पर पुनः हमला कर देता है परंतु उसे वहाँ केवल राख का ढेर मिलता है।

2.4.1.1 पद्मावत में विरह वर्णन

▶ वेदना का निरावरण, मार्मिक, निर्मल एवं पावन स्वरूप

विरह जीवन की कसौटी है जिसके द्वारा मानव गतिशील रहता है। साहित्य में विरह की अभिव्यक्ति विशेष महत्वपूर्ण है। रत्नसेन और पद्मावती का विवाह हो जाता है। जायसी ने उनके संयोग श्रृंगार का चित्रण भी किया है, परन्तु वे प्रेम के पीर की गाथा लिख रहे थे। इसलिए उनका ध्यान रत्नसेन और पदमावती के संयोग की कथा कहने से ज्यादा उस नागमती पर है, जो रत्नसेन के जाते ही उसके विरह में तड़पने लगती है। यह एक पत्नी का पति के प्रति प्रेम है, जिसकी जगह कोई दूसरा नहीं ले सकता। यह एकनिष्ठ दाम्पत्य प्रेम है। रत्नसेन भले ही पद्मावती के लिए नागमती को छोड़कर चला गया है, परन्तु नागमती रत्नसेन को एक पल के लिए भी भूल नहीं पाती। वह उसका पति है, उसके जीवन का एकमात्र आश्रय। रत्नसेन के बिना यह पूरा जीवन उसके लिए निःसार है।

आचार्य शुक्ल जैसे आलोचक नागमती के विरह वर्णन को पद्मावत का सबसे सशक्त पक्ष

मानते हैं। आचार्य शुक्ल के अनुसार, वियोग में नागमती अपना रानीपन भूल जाती है और साधारण स्त्री की तरह आचरण करने लगती है। नागमती का विरह इतना तीव्र हो जाता है कि सारी प्रकृति जैसे उसके भावों से ही संचालित होने लगती है। भूमि पर रेंगने वाली बीर-बहूटियाँ और कुछ नहीं, बल्कि उसकी आंखों से टपकने वाले आँसू रूपी रक्त की बूंदे ही हैं। नागमती की विरह वेदना सम्पूर्ण प्रकृति को प्रभावित करती हुई पाठक तक पहुँचती है और उसे एक गहरे टीस की अनुभूति दी जाती है।

▶ जायसी के विरहाकुल हृदय की गहन अनुभूति

2.4.2-नागमति वियोग खण्ड(1-8 Padas)

पद्मावत एक घटना प्रधान प्रेमाख्यानक काव्य है। पद्मावत के कथानक को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। पूर्वार्ध में घटनाएँ चितौड और सिंहल में घटित होती है, उत्तरार्द्ध में चितौड और दिल्ली में। 52 सर्गों में व्याप्त इस विशालकाय काव्य के नागमती खंड से 8 पद आपको पढ़ने केलिए निर्धारित किए गए हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी नागमती के विरह वर्णन को हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि घोषित किया है। इस विरह वर्णन ने शुक्लजी को इतना प्रभावित किया कि उन्होंने जायसी को अपनी त्रिवेणी में स्थान दिया। वस्तुतः पद्मावत के पढ़ने के उपरान्त पाठक के मन पर रत्नसेन, नागमती और पद्मावती के प्रेम एवं उनके विरह के अतिरिक्त और कोई प्रभाव शेष नहीं रहता है।

▶ नागमति वियोग खण्ड पद्मावत का प्राण-बिन्दु

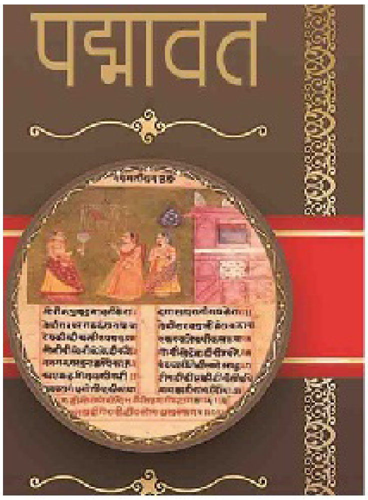

(1-8 Padas)

1. नागमती चितउर-पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।
   नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा।।

   सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।

   भएउ नरायन बावन करा। राज करत राजा बलि छरा।।

   करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।

   मानत भोग गोपिचंद भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।

   लेइगा कृस्नहि गरूड अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?।।

सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?।
झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह।। 1।।

पिउ-बियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा निति बोलै ठपिउ पीऊ'।।
अधिक काम दाधै सो रामा। हरि लेइ सुबा गएउ पिउ नामा।।
बिरह बान तस लाग न डोली। रकत पसीज, भींजि गइ चोली।।
सूखा हिया, हार भा भारी। हरे हरे प्रान तजहिं सब नारी।।
खन एक आव पेट महँ! साँसा। खनहिं जाइ जिउ, होइ निरासा।।
पवन डोलावहिं, सीचहिं चोला। पहर एक समुजहिं मुख-बोला।।
प्रान पयान होत को राखा?। को सुनाव पीतम कै भाखा?।।

आजि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि
हंस जो रहा सरीर मह, पाँख जरा, गा भागि।। 2।।

पाट-महादेइ! हिये न हारू। समुझि जीऊ, चित चेतु सँभारू।।
भौंर कँवल सँग होइ मेरावा। सँवरि नेह मालति पहँ आवा।।
पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास; बाँधु मन थीती।।
धरतहिं जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरषा ऋतु मेहा।।
पुनि बसंत ऋतु आव नबेली। सो रस, सो मधुकर, सो बेली।।
जिनि अस जीव करसि तू बारी। यह तरिबर पुनि उठिहि सँवारी।।
दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोई सरवर, सोइ हंसा।।

मिलहिं जो बिछुरे साजन, अंकस भेंटि अहंत।
तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत ।। 3।।
चढा असाढ, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।
धूम, साम, धीरे घन धाए। सेत धजा बग-पाँति देखाए।।
खडग-बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद-बान बरसहिं घन घोरा।।

ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।
दादुर मोर कोकिला, पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
पुष्प नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छाँवा?।।
अद्रा लाग, लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई?।।

जिन्ह घर कंता ते सुखी, तिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब ।। 4 ।।

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी।।
लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा।।
रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चली जस बीरबहूटी।।
सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला। हरियारि भूमि, कुसुंभी चोला।।
हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह झुलाइ देइ झकझोरा।।
बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर, भा फिरै भँभीरी।।
जग जल बूड जहाँ लगि ताकी। मोरि नाव खेवक बिनु थाकी।।

परबत समुद, अगम बिच, बीहड घन बनढाँख।
किमि कै भेंटौं कंत तुम्ह? ना मोहि पाँव न पाँख।। 5 ।।

भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भौंर रैनि अँधियारी।।
मंदिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा।।
रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी।।
चमक बीजु, घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा।।
बरसै मघा झकोरि झकोरि। मोर दुइ नैन चुवैं जस ओरी।।
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सीचेन्हि नाहाँ।।
पुरवा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी।।

थल जल भरे अपूर सब, धरनि गगन मिलि एक।

जनि जोबन अवगाह महँ दे बूडत, पिउ ! टेक ॥ 6 ॥

लाग कुवार, नीर जग घटा। अबहूँ आउ, कंत! तन लटा॥
तोहि देखे, पिउ ! पलुहै कया। उतरा चीतु, बहुरि करु मया॥
चित्रा मित्र मीन कर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा॥
उआ अगस्त, हरित-घन गाजा। तुरय पलानि चढे रन राजा॥
स्वाति-बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भर॥
सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खँजन देखाए॥
भा परगास, काँस बन फूले। कंत न फिरे, बिदेसहि भूले॥

बिरह-हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।
वेगि आइ, पिउ ! बाजहु, गाजहु होइ सदूर॥ 7 ॥

कातिक सरद-चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी॥
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा॥
तम मन सेज करै अगिदाहू। सब कहँ चंद, खएउ मोहिं राहू॥
चहूँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा॥
अबहूँ, निठुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा॥
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी॥
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा॥

सखि मानैं तिउहार सब गाइ, देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि॥ 8 ॥

नागमति वियोग खण्ड(1-8 पद)-Detailed Study

1. नागमती चितउर-पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा॥
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा॥
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ॥

भएउ नरायन बावन करा। राज करत राजा बलि छरा।।

करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंद।।

मानत भोग गोपिचंद भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।

लेइगा कृस्नहि गरुड अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?।।

सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?।

झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल

शब्दार्थः

चितउर	-	पथ
हेरा	-	चितौड के आनेवाले रास्ते पर टक टकी लगाए बैठी थी
फेरा	-	लौटना
नागर	-	पति
बावन करा	-	वामन का प्रवतार, छरा-छल किया
छंदू	-	झल कपट
झिलमिल	-	कवच
अपसवा	-	चल दिया
गरुड	-	अक्रूर जो गरुड़ के अवतार माने जाते हैं
झुरि	-	सूख कर /जलकर
पींजर	-	अस्थि पंजर /ठठरी

सप्रसंग व्याख्याः-

नागमती चित्तौड़ में बाट देखती थी। 'प्रियतम जो गए लौट कर न आए। वे किसी नागरी नारी के फेर में पड़ गए हैं। उसने मोहित करके उनका चित्त मेरी ओर से हर लिया है। सुग्गा काल बनकर प्रियतम को ले गया। हाय! प्रिय को न ले जाता चाहे प्राण ले जाता। वह सुग्गा वामन रूप में नारायण बनकर आया और राज करते हुए राजा बलि को छल ले गया। उसने छल करके कर्ण की परीक्षा ली, जिससे अर्जुन को उसके कवच से आनंद हुआ। भोगी गोपीचन्द भोगों में फँसे थे। जोगी जालन्धर नाथ उन्हें लेकर चले गए। कृष्ण को लेकर अक्रूर अदृश्य हो गया। कठिन बिछोह में गोपी कैसे जीवित रहेगी?

▶ जायसी की चौपाई में अनेक विख्यात अंतकथाओं का वर्णन

सारस की जोड़ी में से एक को वह क्यों हर ले गया? हरना ही था तो खगी को मार क्यों नहीं गया?' विरह की ऐसी आग लगी कि युवती सूख-सूख कर पिंजर हो गई।

2. पिउ-बियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा निति बोलै 'पिउ पीऊ'।।
   अधिक काम दाधै सो रामा। हरि लेइ सुबा गएउ पिउ नामा।।

बिरह बान तस लाग न डोली। रकत पसीज, भींजि गइ चोली।।

सूखा हिया, हार भा भारी। हरे हरे प्रान तजहिं सब नारी।।

खन एक आव पेट महँ! साँसा। खनहिं जाइ जिउ, होइ निरासा।।

पवन डोलावहिं, सीचहिं चोला। पहर एक समुजहिं मुख-बोला।।

प्रान पयान होत को राखा?। को सुनाव पीतम कै भाखा?।।

आजि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि

हंस जो रहा सरीर मह, पाँख जरा, गा भागि ।। 2।।

शब्दार्थ:

बाउर	-	बावला
अस्त	-	व्यस्त
रामा	-	रमणी
हरि हरि-तिल	-	तिल करके
खनहिं	-	क्षण
चोला	-	शरीर
पयान	-	प्रयागा करना /जाना
भाखा	-	वाणी
आगि	-	आह
हंस	-	जीव
पाँख	-	पंख
पवन डोलावहिं, सीचहिं चोला। पहर एक समुजहिं मुख-बोला	-	दासियाँ पंखा लेकर उसको हवा करती है, शरीर पर शीतल जल के छींटे मारती हैं जिससे नागमती एक पहर के बाद होश में आती है और उसके मुख से बोल फूटते हैं।

सप्रसंग व्याख्या

> ▶ विरह जनित प्रेम में एक विलक्षण तीव्रता, अनिर्वचनीय क्रियाशीलता और निराली तड़प

प्रिय के वियोग में उसका जी बावला-सा हो गया। वह पपीहे की तरह 'पिउ पिउ' रटने लगी। काम उस स्त्री को अधिक-अधिक सताने लगा। वह सुग्गा प्रियतम के नाम से उसका प्राण ही हर ले गया। उसे ऐसा विरह का बाण लगा कि हिल-डुल भी न सकती थी। रक्त के पसीजने से शरीर की चोली भीग गई। सखी ने मन में विचार कर देखा कि मदन की सताई हुई यह बाला अब हार गई है और काँप-काँपकर प्राण छोड़ देना चाहती है। पहले क्षण में श्वास पेट में आता था और दूसरे क्षण निकल जाता था जिससे वे सब निराश हो जाती थीं। सखियाँ हवा करती और चोले को जल से सींचती थीं। पहर भर में वह बाला होश में आकर मुँह से बोली- 'प्राण जाना चाहता है। इसे कौन रखेगा? कौन चातक की भाषा 'पिउ' से मिलाएगा?'

उसके मुँह से विरह की आह निकली। उस आह से अग्नि उत्पन्न हुई। शरीर में जो हंस या जीव था उसके पंख जल गए। अतः वह उड़ न सका और शरीर में ही रह गया।

3. पाट-महादेइ! हिये न हारू। समुझि जीऊ, चित चेतु सँभारू।।

भौंर कँवल सँग होइ मेरावा। सँवरि नेह मालति पहँ आवा।।

पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास; बाँधु मन थीती।।

धरतहिं जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरषा ऋतु मेहा।।

पुनि बसंत ऋतु आव नवेली। सो रस, सो मधुकर, सो बेली।।

जिनि अस जीव करसि तू बारी। यह तरिबर पुनि उठिहि सँवारी।।

दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोई सरवर, सोइ हंसा।।

मिलहिं जो बिछुरे साजन, अंकस भेंटि अहंत।

तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत ।। 3।।

शब्दार्थः

पाट महादेइ	=	पट्टमहादेवी, पटरानी
मेरावा	=	मिलाप
टेकु पियास	=	प्यास सह
बाँधु मन थीती	=	मन में स्थिरता बाँधा
जिनि	=	मत
पलुहंत	=	पल्लवित होते हैं, पनपते हैं

सप्रसंग व्याख्याः-

यह पद मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा रचित पद्मावत के नागमती वियोग खंड से लिया गया है। नागमती के विरह की अनुभूतियों का वर्णन किया है। नागमती को समाश्वासन देते हुये उसकी सखियाँ कहने लगीं कि हे रानी! आप इस प्रकार हिम्मत न हारिए अपितु हृदय में सोच-विचार कर अपने चैतन्य की रक्षा कीजिये। हे महारानी! आप यह विश्वास रखिए कि जिस प्रकार भ्रमर कमल के समीप जाकर भी अंततः मालती के प्रेम का स्मरण करके उसके समीप लौट आता है, उसी प्रकार आपके प्राणेश्वर भी पद्मावती रूपी कमल के पास जाकर भी अंततः आपके समीप लौट आएँगे।

सुप्राणेश्वर रूपी स्वाति नक्षत्र के प्रति आपका जैसा दृढ़ प्रेम भाव है, उसको ध्यान में रखते हुये अपनी काम पिपासा को वश में रखिए, और प्रियतम के लौटने की आशा का सहारा लेकर अपने हृदय में धैर्य धारण रखिए। जिस प्रकार पृथ्वी आकाश के प्रेम भाव में निमग्न रहती है तो आकाश उसको वर्ष ऋतु में जल से ओत-प्रोत कर देता है, उस पर स्नेह की वर्षा करता

है, उसी प्रकार तुम भी अंततः स्व पति का प्रेम प्राप्त करोगी। इसी प्रकार तुम्हारे जीवन में पुनः वही वर्षा ऋतु आएगी, जिस में समस्त प्रकार के सुख-भोग होंगे, और तुम्हारे पति रूप भ्रमर द्वारा लता-रूपी तुम्हारा मकरंद पान किया जाएगा। हे महारानी! आप अपना हृदय इस प्रकार क्यों दुखी और खट्टा कर रही है।

आप यह सोचकर धैर्य क्यों नहीं धारण करती कि ग्रीष्म ऋतु में दग्ध हुये वृक्ष वसंत ऋतु के आगमन से पुनः हरा हो उठते हैं, नई-नई कोंपल फूट पड़ती है। यदि दस दिवस तक जल सूख भी जाता है। अर्थात् यदि आपका स्व पति से कुछ दिनों केलिए मिलन नहीं भी हो पता है, तो क्या हुआ क्योंकि बाद में तो वही सरोवर और वे ही हंस होंगे, अर्थात् तुम्हारा मिलन होकर ही रहेगा। हे! महारानी आप यह तथ्य को भी विस्मृत मत कीजिये कि वियोग के पश्चात मिलन की आशा बहुत अधिक बढ़ जाया करती है और बिछुड़े हुये पति बड़े ही उल्लासपूर्वक मिलते और आलिंगन करते हैं। वे ही आदि नक्षत्र की घोर वर्षा में पल्लवित पुष्पित हुआ करते हैं, पर पति प्रेम की घोर वर्षा हुआ करती है।

▶ नायक से मिलन होने की आश्वासन

4. चढा असाढ, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा॥

धूम, साम, धीरे घन धौले। सेत धजा बग-पाँति देखाए॥

खडग-बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद-बान बरसहिं घन घोरा॥

ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी॥

दादुर मोर कोकिला, पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ॥

पुष्प नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छाँवा?॥

अद्रा लाग, लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई?॥

जिन्ह घर कंता ते सुखी, तिन्ह गारौ औ गर्ब।

कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब॥ 4॥

शब्दार्थः

गाजा	=	गरजा
धूम	=	धूमले रंग के
धौरे	=	धावल, सफेद
ओनई	=	झुकी
लेई लागि	=	खेतों में लेवा लगा, खेत में पानी भर गया
गारौ	=	गौरव, अभिमान (प्राकृत-गारव, 'आ च गौरव')

सप्रंसग व्याख्याः-

प्रस्तुत पद्यावतरण जायसी कृत पद्मावत काव्य के 'नागमती वियोग खण्ड' से लिया गया है। इस अंश के अन्तर्गत कवि जायसी ने नागमती के वर्षकालीन विरहोद्दीपन का चित्र खींचा

है। कवि जायसी कह रहे हैं कि आषाढ मास आते ही आकाश में मेघ गूँजने लगे हैं। विरह ने द्वन्द्व युद्ध के लिए अपनी सेना सजा ली है। घुमेले काले, धौले बादल सैनिकों की भाँति गगन में दौडने लगे हैं। बगुलों की पंक्तियाँ श्वेत ध्वजा-सी दिखने लगी हैं। खड्ग बिजली के रूप में चारों ओर चमक रहे हैं तथा घोर डरावनी भयानक बूँदों के बाण बरस रहे हैं। आर्द्रा नक्षत्र लग गया है और भूमि बीज ग्रहण करने लगी है अर्थात् खेत बोये जाने लगे हैं। इतना सब होने पर भी प्रिय के बिना मुझे कौन आदर दे सकता है? चारों ओर घटा झुक आई है। हे कांत! हे प्रियतम! मदन अर्थात् कामदेव ने मुझे चारों ओर से घेर लिया है। ऐसी स्थिति में मुझे आकर बचाओ। दादुर, मोर, कोयल और पपीहे पिउ-पिउ करके मुझे बेध रहे हैं। अब ऐसा प्रतीत होता है कि घट में प्राण नहीं रहेगा। पुष्य नक्षत्र सिर के ऊपर आ गया है, अब श्रीघ्र-ही आने वाला है, परन्तु मैं बिना स्वामी की हूँ, मेरे मन्दिर-भवन को कौन छायेगा? जिनके घर पति हैं, वे सुखी हैं। उन्हीं को गौरव और गर्व है। मेरा प्यारा कांत तो परदेश में है, इसीलिए मैं सब सुख भूल गयी हूँ।

▶ प्रकृति के माध्यम से नागमती की विरह सहानुभूतिपूर्वक प्रदर्शन

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी।।

लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा।।

रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चली जस बीरबहूटी।।

सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला। हरियारि भूमि, कुसुंभी चोला।।

हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह झुलाइ देइ झकझोरा।।

बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर, भा फिरै भँभीरी।।

जग जल बूड जहाँ लगि ताकी। मोरि नाव खेवक बिनु थाकी।।

परबत समुद, अगम बिच, बीहड घन बनढाँख।

किमि कै भेंटौं कंत तुम्ह? ना मोहि पाँव न पाँख।। 5।।

शब्दार्थः

मेह	=	मेघ।
भरनि परी	=	खेतों में भरनी लगी।
सरेख	=	चतुर।
भँभीरी	=	एक प्रकार का फतिंगा जो संधया के समय बरसात में आकाश में उड़ता दिखाई पड़ता है।

सप्रसंग व्याख्याः-

सावन में मेघों से ख़ूब पानी बरसता है। भरन पड़ रही है, फिर भी मैं विरह में सूखती हूँ। पुनर्वसु लग गया। क्या प्रियतम ने उसे नहीं देखा? चतुर प्रियतम कहाँ रहे, यह सोच-सोच मैं बावली हो गई। रक्त के आँसू पृथ्वी पर बिखर रहे हैं। वे ही मानों वीर-बहूटियाँ रेंग रही हैं।

मेरी सखियों ने अपने प्रियतमों के साथ हिंडोला डाला है। हरी भूमि देखकर उन्होंने अपना तन कुसुम्मी चोले से सजा लिया है। पर मेरा हृदय हिंडोले की तरह ऊपर नीचे हो रहा है। विरह झकोले देकर उसे झुला रहा है। बाट असूझ, अथाह और गंभीर है। मेरा जी बावला हुआ भँभीरी की भाँति घूम रहा है। जहाँ तक देखती हूँ, संसार जल में डूबा है। मेरी नाव केवट के बिना ठहरी हुई है। पर्वत, अगम समुद्र, बीहड़ वन और घने ढाक के जंगल मेरे और प्रियतम के बीच में हैं। हे प्यारे, तुमसे कैसे मिलूँ? न मेरे पाँव हैं, न पंख।

▶ मल्लाह के बिना नाव चलाना दूभर

भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भौंर रैनि अँधियारी ।।

मंदिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा ।।

रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी ।।

चमक बीजु, घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा ।।

बरसै मघा झकोरि झकोरि। मोर दुइ नैन चुवैं जस ओरी ।।

धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सीचेन्हि नाहाँ ।।

पुरबा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी ।।

थल जल भरे अपूर सब, धरनि गगन मिलि एक।

जनि जोबन अवगाह महँ दे बूडत, पिउ ! टेक ।। 6 ।।

शब्दार्थः

दूभर	=	भारी कठिन
भरौं	=	काटूँ, बिताऊँ; जैसे-नैहर जनम भरब बरु जाई-तुलसी
अनतै	=	अन्यत्रा
तरासा	=	डराता है
ओरी	=	ओलती
पुरबा	=	एक नक्षत्रा

सप्रसंग व्याख्याः

भादों का महीना भर गया है। वह अत्यन्त दुःसह और भारी है। अँधियारी रात कैसे काटूँ? मंदिर सूना करके प्रियतम अन्यत्र बसे हैं। सेज नाग होकर दौड़-दौड़ कर डसती है। एक पट्टी पकड़े मैं अकेली पड़ी रहती हूँ। नेत्र फैलाए हुए मैं हृदय फटने से मरी जा रही हूँ। बिजली चमक कर और मेघ गरज कर मुझे डराते हैं। विरह काल होकर प्राण हर लेता है। मघा नक्षत्र झकझोर कर बरस रहा है। मेरे दोनों नेत्र ओली से चू रहे हैं। मघा के बाद पूर्वा फाल्गुनी लग गया और धरती जल से भर गई। मैं सूखकर ऐसे हो गई, जैसे वर्षा में आक और जवास बिना पत्ते के हो जाते हैं। भरे भादों में भी युवती सूख रही है। हे स्वामी, अब भी आकर क्यों

▶ प्रियतम से मिलने की तड़प में नागमती

नहीं सोंचते? ऊँचे स्थल भी जल से ऊपर तक भर गए हैं। धरती आकाश मिलकर एक हो गए हैं। हे प्रिय, यौवन के अगाध जल में डूबती हुई नव-यौवना को सहारा दो।

लाग कुवार, नीर जग घटा। अबहूँ आउ, कंत! तन लटा।।

तोहि देखे, पिउ! पलुहै कया। उतरा चीतु, बहुरि करु मया।।

चित्रा मित्र मीन कर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा।।

उआ अगस्त, हरित-घन गाजा। तुरय पलानि चढे रन राजा।।

स्वाति-बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।

सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खँजन देखाए।।

भा परगास, काँस बन फूले। कंत न फिरे, बिदेसहि भूले।।

बिरह-हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।

वेगि आइ, पिउ! बाजहु, गाजहु होइ सदूर।। 7।।

शब्दार्थः

लटा	=	शिथिल हुआ
पलुहै	=	पनपती है
उतरा चीतु	=	चित्ता से उतरी या भूली बात धयान में ला
चित्राा	=	एक नक्षत्रा
तुरय	=	घोड़ा
पलानि	=	जीन कसकर
घाय	=	घाव
बाजहु	=	लड़ो
गाजहु	=	गरजो
सदूर	=	शार्दूल, सिंह

भावार्थः

'चित्रा मित्र मीन कर आवा'- क्वार के महीने में तीन नक्षत्र होते हैं उत्तरा, हस्त, और चित्रा। चित्रा का मित्र चंद्रमा माना जाता है जो मीन राशि में क्वार कि पूर्णिमा से एक दिन पहले आ जाता है। चित्रा नक्षत्र में जलाशयों का जल स्वच्छ हो जाता है और मछली को वर्षा के गंदले जल से मुक्ति मिल जाती है। इसीलिए चित्रा नक्षत्र को मछली का मित्र कहा गया है।

▶ नागमती आदर्श प्रेमिका और विरहिणी का प्रतीक

हस्ती खान गाजा - यहाँ हस्ती से तात्पर्य हाथी न होकर हस्त नक्षत्र से है। हस्त नक्षत्र में आकाश में घूमनेवाले सफ़ेद रंग के छोटे-छोटे बादल मंद मधुर ध्वनि में गरजते ही हैं, बरसते नहीं। ग्रामीण भाषा में इसी को हथिया नक्षत्र भी कहते हैं।

कातिक सरद-चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी॥

चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा॥

तम मन सेज करै अगिदाहू। सब कहँ चंद, खएउ मोहिं राहू॥

चहूँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा॥

अबहूँ, निठुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा॥

सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी॥

जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा॥

सखि मानैं तिउहार सब गाइ, देवारी खेलि।

हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि॥ 8॥

शब्दार्थः

झूमक	=	मनोरा झूमक नाम का गीत
झुरावँ	=	सूखती हूँ
जनम	=	जीवन

सप्रसंग व्याख्याः

प्रस्तुत पद्यावतरण जायसी कृत 'पद्मावत' काव्य के 'नागमती वियोग खण्ड' से लिया गया है। प्रस्तुत अंश के अन्तर्गत विरह-विदग्धा नायिका नागमती के हृदयोद्गारों को व्यक्त किया गया है। कवि जायसी कह रहे हैं कि नागमती कह रही है कि कार्तिक मास आ गया है। चारों ओर शरद चन्द्र की चाँदनी छा रही है। सारा संसार शीतल और आनन्दित हो रहा है, किन्तु मैं विरहाग्नि में प्रज्ज्वलित हो रही हूँ। चन्द्रमा अपनी चौदह अर्थात् सम्पूर्ण कलाओं के साथ प्रकाशित हो रहा है, परन्तु मुझे ऐसा लग रहा है कि सारी धरती और आकाश जल रहे हैं। शैया मेरे तन और मन दोनों का अग्निदाह कर रही है।

भाव यह है कि शैया पर जाते ही मेरे तन और मन धू-धू करके जलने लगते है। यह चन्द्रमा सबके लिए तो शीतलता प्रदान करने वाला है, परन्तु मेरे लिए ये राहु के समान दुखदायी हो रहा है। यद्यपि चारों ओर चाँदनी छिटकी हुई है, किन्तु प्रिय स्वामी घर पर न हो तो विरहिणी को सारा संसार अंधकारपूर्ण दिखलाई देने लगता है। नागमती कह रही है कि ये निष्ठर! अब भी तुम इस समय आ जाओ। देखो तो सही, सारा संसार दीपावली का त्यौहार मना रहा है। सखियाँ अपने अंगों को मरोङ-मरोङ कर अर्थात् नृत्य करती हुई झूमक गीत गा रही हैं, परन्तु मैं सूखती जा रही हूँ। कारण यह कि मेरी जोड़ी बिछुड़ गई है, मेरा प्रिय मुझसे बिछुड़ गया है।

भाव यही है कि सारा संसार दीपावली की खुशियाँ मना रहा है और मैं विरह में तड़प रही हूँ। जिस घर में प्रिय होता है, उस घर की रानी की सारी मनोकामनाएँ पूरी होती रहती हैं। मेरे लिए तो विरह और सौत-इन दोनों का दुगुना दुख है। अर्थात् एक तो मैं विरह-दुख से

▶ साधारण स्त्री के रूप में नागमती का चित्रण

व्याकुल हो रही हूँ और दूसरे सौतिया डाह के संताप से व्यथित हो रही हूँ। इस प्रकार मेरा दुख दुगुना हो उठा है। अन्त में नागमती ने कहा कि मेरी सारी सखियाँ गा-बजाकर त्यौहार मना रही हैं, दीपावली के विविध खेल-खेल रही हैं, परन्तु मैं स्वामी के बिना क्या गीत गाऊँ? मैं दुखी होकर अपने सिर में धूल डाल रही हूँ।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

मलिक मोहम्मद जायसी के काव्य में श्रृंगार रस के दोनों पक्ष संयोग तथा वियोग का बड़ा ही तार्किक रूप से प्रयोग किया गया है। इन्होंने निर्गुण भक्ति को अधिक महत्व दिया है। मलिक मोहम्मद जायसी की ख्याति नागमती वियोग खंड से उद्धृत बारहमासा से अधिक हुई है।

इसमें नायिका की दशा का वर्णन ऋतु व समय चक्र के आधार पर किया है। आचार्यों ने महाकाव्य के लिए जिन गुणों का होना आवश्यक बताया है वे सब गुण इसमें विद्यमान है। बरहमासा का वर्णन जायसी ने कुशलतापूर्वक किया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. सूफी प्रेमाख्यान काव्य परंपरा के बारे में टिप्पणी लिखो।
2. सूफी कवि जायसी का परिचय दीजिए।
3. पद्मावत का सारांश लिखो।
4. नागमति वियोग खण्ड के बारे में टिप्पणी लिखो।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

सगुण भक्ति काव्य

BLOCK-03

Block Content

Unit 1 : वैष्णव भक्ति का उदय, वैष्णव भक्ति के प्रतिष्ठापक आचार्य - रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, विष्णुस्वामी, निंबार्काचार्य, श्री वल्लभाचार्य

Unit 2 : रामकाव्य धारा - रामकाव्य संप्रदाय, रामकाव्य -प्रमुख कवि, प्रवृत्तियाँ

Unit 3 : कृष्ण भक्ति काव्य, विविध संप्रदाय, अष्टछाप, प्रमुख कृष्ण भक्त कवि-सूरदास, नंददास, मीरा और रसखान, कृष्ण भक्ति काव्य-प्रवृत्तियाँ

Unit 4 : तुलसीदास, तुलसी-प्रमुख रचनाएँ, तुलसी की समन्वय साधना, रामचरितमानस, अयोध्या काण्ड(6-10)

इकाई : 1 वैष्णव भक्ति का उदय, वैष्णव भक्ति के प्रतिष्ठापक आचार्य - रामानजाचार्य, मध्वाचार्य, विष्णुस्वामी, निंबार्काचार्य, श्री वल्लभाचार्य

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- सगुण भक्ति के बारे में समझता है
- वैष्णव भक्ति के बारे में समझता है
- वैष्णव संप्रदाय के प्रतिष्ठापक आचार्यों के बारे में समझता है

Background / पृष्ठभूमि

भारतीय धर्म साधना में भक्ति भावना का उदय कब और क्यों हुआ, इस विषय पर विभिन्न विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। भक्ति के उद्‌भव और विकास के संबध में पर्याप्त मतभेद होने पर भी प्रामाणिक रूप से कहा जा सकता है कि आस्तिक भाव से ईश्वरोपासना करने वाले आर्यो में भक्ति का मूल बीज विद्यमान था। भक्ति के विविध प्रकारों को उन्होंने वैदिक काल में ही किसी न किसी रूप में ग्रहण कर लिया था। वस्तुतः वैष्णव भक्ति के क्रमिक विकास का यदि अनुसंधान किया जाये तो उसका बीज वैदिक धर्म में लक्षित होगा। वैदिक विष्णु देवता को यदि सगुण भक्ति का अवतारी देवता माना जाए तो इसका क्रमिक विकास सहज ही स्थित हो जाता है। सगुण के विकास में दो प्राचीन ग्रंथों का विशेष प्रभाव पड़ा माना जाता है- भागवत और वाल्मीकि रामायण। इनके अतिरिक्त अन्य अनेक स्मृति ग्रंथों का भी प्रभाव पड़ा है। सर्वाधिक प्रभाव भागवत का ही माना गया है। वैष्णव मत का जो सगुण भक्ति धारा का मूल उत्स माना गया है, आरम्भ ईसा के पाँच सौ वर्ष पूर्व हो गया था। इसमें नारायण अथवा भगवान की भावना भागवत या पाँचरात्र धर्म के रूप में की गई थी।

Keywords / मुख्य बिन्दु

सगुणभक्ति, वैष्णव भक्ति, श्री सम्प्रदाय, निंबार्क संप्रदाय

Discussion / चर्चा

परम सत्ता जहाँ प्रकृति के बन्धन से मुक्त है, उसे निर्गुण और जहाँ बन्धनयुक्त है, उसे सगुण कहते हैं। जिन भक्त कवियों ने ईश्वर को अवतार मानकर उसकी उपासना की, उनकी भक्ति को सगुण भक्ति कहा गया। जिन कवियों ने ईश्वर को एक साकार रूप में स्वीकार किया है, उसी साकार ईश्वर के रूप को आधार मानकर काव्य सृजन किया। उस काव्य को सगुण

भक्ति काव्य कहा गया।

> ▶ चित्त कभी अ-रूप और कभी रूपयुक्त है

दूसरा है रूपयुक्त। जैसे व्यक्ति अपने मन या चित्त को नहीं देख सकता है। परन्तु जैसे, हाथी के बारे में सोचते समय उसके चित्त में हाथी का रूप साकार हो उठता है इतना स्पष्ट है कि मन उसे देख लेता है। इसलिए चित्त भी कभी अ-रूप है और कभी रूपयुक्त वैसे ही परमात्मा का चित्त भी रूपयुक्त है।

> ▶ नीति और धर्म की स्थापना के लिए भगवान का अवतार

यह दृश्यमान जगत जिसे हम विश्व कहते हैं, उनके चित्त में उभरने वाली आकृति है। यह विश्व ही रूप का समुद्र है और जब यह विषय होगा तब मन सगुण ब्रह्मा हो जाएगा। भगवान का अवतार नीति और धर्म की स्थापना के लिए होता रहा है। जब समाज में पापों, मिथ्याचारों, दूषितवृत्तियों, अन्याय का बाहुल्य हो जाता है, तब किसी न किसी रूप में पाप निवृत्ति के लिए भगवान का स्वरूप प्रकट होता है।

> ▶ भक्ति मानव मन को पवित्र बनाता है

वह एक असामान्य प्रतिभाशाली व्यक्ति के रूप में होता है। उसमें हर प्रकार की शक्ति भरी रहती थी। वह स्वार्थ, लिप्सा के मद को, पाप के पुञ्ज को अपने आत्म-बल से दूर कर देता है। दुराचार, छल कपट, धोखा, भय अन्याय के वातावरण को दूर कर मनुष्य के हृदय में विराजमान देवत्व की स्थापना करता है।

3.1.1 सगुण भक्ति काव्य

आठवीं सदी में शंकर के अद्वैती मायावाद से इसका संघर्ष हुई। कालांतर में यह श्री रामानुजाचार्य के 'श्रीसंप्रदाय' के रूप में विकसित हुआ। आगे चलकर निंबार्क स्वामी ने इसमें राम अथवा विष्णु के स्थान पर कृष्ण की भावना को अधिक महत्व दिया। तेरहवीं शताब्दी में मध्वाचार्य ने इस भावना को और अधिक विकसित किया। सोलहवीं सदी के लगभग वल्लभाचार्य और चैतन्य महाप्रभु ने राधा और कृष्ण का प्रेमात्मक निरूपण कर भक्ति के सौंदर्य पक्ष को अधिक प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया। दूसरी ओर रामानंद में विष्णु के स्थान पर राम की भावना पर अधिक बल दिया और राम के शील, शक्ति, सौंदर्य समन्वित रूप का प्रचार कर लोकहित की भावना को पुष्ट किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के मतानुसार सगुण-भक्ति के सम्यक प्रचार का दृढ़ आधार रामानुजाचार्य द्वारा स्थापित विशिष्टाद्वैत सिद्धांत था। निर्गुण भक्ति की प्रतिद्वंद्विता में सगुण-धारा इतना अधिक प्रचार क्यों पा सकी, इसके कई कारण थे। कबीर में भक्ति-ज्ञान और योग का मिश्रण था परंतु कर्म का नहीं था। कबीर का ब्रह्म ज्ञानस्वरूप और प्रेमस्वरूप ही बना रहा, धर्मस्वरूप नहीं बन सका। वह समाज की रक्षा और नियमन करने में असमर्थ या तटस्थ था। जायसी मुसलमान होने के कारण भारत की अपेक्षा फारस से अधिक प्रभावित थे, अतः जनता को अधिक प्रभावित न कर सके। दूसरा कारण यह था कि अकबर आदि शासकों में धार्मिक सहिष्णुता की भावना आ गई थी। इससे सामाजिक दशा में सुधार हुआ और जनता के मनोबल में वृद्धि हुई।

> ▶ लोकहित की भावना

उस समय जनता एक ऐसे ईश्वर का स्वरूप देखने को उत्सुक थी जिसे वह अपने सुख-दुःख में अपना अभिन्न साथी और शक्तिशाली रक्षक के रूप में स्वीकार कर सके। इसी कारण जब सगुण-धारा में ईश्वर के धर्म स्वरूप की अभिव्यक्ति लोक-रंजक और लोक-रक्षक की भावना को लेकर हुई तो जनता ने उसे तुरंत अपना लिया। इस भक्ति के दो रूप रहे। कृष्ण भक्ति में केवल प्रेम स्वरूप भगवान की आराधना की गई। उसमें प्रेम-लक्षणा भक्ति ही सर्वांगपूर्ण रही।

यह भगवान का लोक-रंजक रूप था। यद्यपि उसमें भी लोक-रक्षक रूप में कहीं-कहीं अपनी झलक दिखाया जाता था। रामभक्ति में भगवान के लोकरक्षक रूप की ही स्थापना की गई। उसमें भगवान के तीन गुण- शक्ति, शील, सौंदर्य के समन्वय के कारण भक्ति कर्म एवं ज्ञान का पूर्ण सामंजस्य रहा। सगुण भक्ति धारा की व्यापकता का एक कारण और था। रामानुजाचार्य ने केवल द्विजों को ही भक्ति और धार्मिक शिक्षा का अधिकार दिया था, परंतु आगे चलकर रामानंद ने सबके लिए भक्ति का द्वार उन्मुक्त कर दिया। स्त्री भी भक्ति की अधिकारिणी मान ली गई। उपासना में जाति-भेद को हटा दिया गया। इस धार्मिक उदारता के कारण सामान्य जनता राम भक्ति के प्रति आकर्षित हुई।

▶ सगुण में ईश्वर के साकार स्वरूप की उपासना

3.1.1.1 वैष्णव भक्ति का उदय

सगुण भक्ति काव्य में ईश्वर के सगुण अर्थात साकार स्वरूप -शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आदि की उपासना करते हैं, तो भी 'श्रीराम' और 'श्रीकृष्ण' की उपासना की ही प्रधानता प्रबल रही। 'श्रीराम' और 'श्रीकृष्ण' हिन्दुओं के आदर्श चरित्र हैं, पूज्य हैं, मान्य हैं, प्राण हैं, परमेश्वर है। उस समय के प्रायः सभी महात्माओं ने राम कृष्ण का यशोगान करने के लिए पद लिखे हैं। इन्हीं पदों के द्वारा उन्होंने प्रेम और भक्ति का प्रचार किया। इसी समय एक ओर बंगाल में चैतन्य महाप्रभु ने और उत्तर प्रदेश में महाप्रभु वल्लभाचार्य ने कृष्ण-भक्ति के अनुपम उपदेशों से हिन्दी-साहित्य में अमृत-वर्षा की। यहीं से वैष्णव-साहित्य भक्ति काव्य की नींव पड़ी। वैष्णव-साहित्य या भक्ति-काव्य ईश्वर के स्वरूप को मनुष्यों में उपलब्ध करना सिखाता है। इस साहित्य का मूल सिद्धांत यही है कि ईश्वर से प्रेम करो।

▶ 'श्रीराम' और 'श्रीकृष्ण' की उपासना

वैष्णव शब्द की उत्पत्ति विष्णु से हुई है, जो हिन्दू धर्म के अनुसार ईश्वर के तीन रूपों में से एक है- ब्रह्मा, विष्णु और महेश(शिव)। ब्रह्मा को सृष्टि का सर्जक माना जाता है, विष्णु को सृष्टि का पालनहार और शिव को सृष्टि का संहारक। विष्णु को प्रमुख आराध्य मानने वाले वैष्णव कहलाते हैं, जैसे शिव को प्रमुख आराध्य मानने वाले शैव। वैष्णव दर्शन के अनुसार विष्णु ही सृष्टि का सर्जक, पालनहार और संहारक हैं। पुराणों के अनुसार विष्णु के दस अवतार माने गए हैं। जिनमें राम और कृष्ण प्रमुख हैं। विष्णु का उल्लेख ऋग्वेद में भी मिलता है, लेकिन ऋग्वेद के प्रमुख देवता इंद्र, अग्नि, वायु, मिट्टी आदि हैं, जिनमें से कुछ का महत्व बाद में कम होता गया। विष्णु का महत्व बाद में बढ़ता गया और पुराणों के रचनाकाल में विष्णु को परम ईश्वर मान लिया गया। विष्णु नारायण नाम से भी जाने गए। महाभारत में नारायण शब्द का प्रयोग विष्णु की अपेक्षा बहुत अधिक हुआ है। विष्णु को परम ईश्वर माने जाने के बावजूद उनकी आराधना उनके अवतारों के माध्यम से ज्यादा होती है, विशेष रूप से कृष्ण और राम के माध्यम से। राम और कृष्ण के उपासक अभी वैष्णव कहलाते हैं। वैष्णव दर्शन को 'भागवत दर्शन' के नाम से भी जाना जाता है। महाभारत के 'शांतिपर्व', 'ईश्वर संहिता', 'विष्णु संहिता' आदि में इसका उल्लेख मिलता है। वैष्णव धर्म में तप, सत्य, अहिंसा और इंद्रिय निग्रह पर बल है। तथा इसमें अहिंसा और अवतारवाद प्रमुख सिद्धांत हैं। हालांकि वैष्णव धर्म में अहिंसा का मत जैन धर्म से भिन्न है। भगवद्गीता में, जो वैष्णव धर्म का प्रमुख आधार ग्रंथ है, भक्ति और अवतारवाद पर विशेष बल दिया गया है। 'विष्णु सहस्त्रनाम' विष्णु के विभिन्न नामों की उपासना से संबंधित ग्रंथ है। 'विष्णु पुराण' में विष्णु की लीलाओं का वर्णन है। सामान्यतः वैष्णव विष्णु के अवतारों की लीला का गान करना ईश्वर की उपासना का माध्यम मानते हैं।

▶ वैष्णव दर्शन को 'भागवत दर्शन' के नाम से भी जाना जाता है

वैष्णव भक्ति को विविध रूपों में स्थापित करनेवाले आचार्यों के युग ग्यारहवीं शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक स्वीकार किया जा सकता है।

3.1.2 वैष्णव भक्ति के प्रतिष्ठापक आचार्य

वैष्णव भक्ति में आलंबन विष्णु के आधार राम और कृष्ण हैं। इसकी जड़ें दक्षिण के आलवार वैष्णव की साधना में है, जिसे शास्त्रसिद्ध आचार्यों ने दार्शनिक स्वरूप प्रदान कर लोकजीवन में प्रतिष्ठित किया। शास्त्रसिद्ध आचार्य थे- रामानुजाचार्य, निंबार्काचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य आदि। हजारीप्रसाद द्विवेदी का विचार है कि 'आलवारों की वैष्णव भक्ति साधारण जनता की वस्तु थी जो शास्त्र का सहारा पाकर सारे भारत में फैल गई। शंकर के अद्वैतवाद के विपरीत इन आचार्यों ने जगत को सर्वथा मिथ्या नहीं माना। सगुण भक्ति का मुख्य आधार यह भावना रही कि ईश्वर 'अंशी' है तथा समस्त प्राणी उसके 'अंश' है। और उसका सामीप्य 'भक्ति' तथा 'ईश्वर' के अनुग्रह द्वारा ही संभव है। गुजरात में द्वैतवादी वैष्णव संप्रदाय का प्रवर्तन किया तो पूर्व में जयदेव ने कृष्ण प्रेम का गान किया। मध्य भारत में रामानुजाचार्य के शिष्य परंपरा में रामानंद ने विष्णु के अवतार राम की उपासना का प्रचार किया तो वल्लभाचार्य ने कृष्ण भक्ति का ।

> ▶ आलवारों की वैष्णव भक्ति साधारण जनता की वस्तु

वैष्णव-भक्ति-तत्वों को समझने के लिए, प्रमुख आचार्यों के सिद्धांतों को संक्षेप में चर्चा करना आवश्यक हैं।

3.1.2.1 रामानुजाचार्य

रामानुजाचार्य, यामुनाचार्य के प्रधान शिष्य थे। गुरु की इच्छानुसार रामानुज ने उनसे तीन काम करने का संकल्प लिया था- ब्रह्मसूत्र, विष्णु सहस्रनाम और दिव्य प्रबन्धम की टीका लिखना। उन्होंने गृहस्थ आश्रम त्यागकर श्रीरंगम के यदिराज संन्यासी से सन्यास की दीक्षा ली। वैष्णव आचार्यों में प्रमुख रामानुजाचार्य की शिष्य परंपरा में ही रामानंद हुए थे। रामानुज ने वेदांत दर्शन पर आधारित अपना नया दर्शन विशिष्टाद्वैत वेदांत गढ़ा था। दार्शनिक स्तर पर यह सिद्धांत 'विशिष्टाद्वैत' कहलाता है और इस संप्रदाय को 'श्री संप्रदाय' भी कहते हैं। इस संप्रदाय का प्रबल प्रभाव रामानंद स्वामी पर देखा जा सकता है। हिन्दी के वैष्णव कवियों में गोस्वामी तुलसीदास इससे अत्यधिक प्रभावित है। रामानुजाचार्य ने वेदांत के अलावा सातवीं-दसवीं शताब्दी के रहस्यवादी एवं भक्तिमार्गी अलवार संतों से भक्ति के दर्शन को तथा दक्षिण के पंचरात्र परंपरा को अपने विचार का आधार बनाया। रामनुजाचार्य के दर्शन में सत्ता या परमसत् के संबंध में तीन स्तर माने गए हैं- ब्रह्म अर्थात ईश्वर, चित अर्थात आत्म, तथा अचित अर्थात प्रकृति। वस्तुतः ये चित् अर्थात् आत्म तत्व तथा अचित् अर्थात् प्रकृति तत्त्व ब्रह्म या ईश्वर से पृथक नहीं है बल्कि ये विशिष्ट रूप से ब्रह्म का ही स्वरूप है एवं ब्रह्म या ईश्वर पर ही आधारित है यही रामनुजाचार्य का विशिष्टाद्वैत का सिद्धांत है। जैसे शरीर एवं आत्मा पृथक नहीं हैं तथा आत्म के उद्देश्य की पूर्ति के लिए शरीर कार्य करता है उसी प्रकार ब्रह्म या ईश्वर से पृथक चित् एवं अचित् तत्त्व का कोई अस्तित्व नहीं हैं। वे ब्रह्म या ईश्वर का शरीर हैं तथा ब्रह्म या ईश्वर उनकी आत्मा सदृश्य हैं।

> ▶ रामानुजाचार्य के सिद्धांत को 'श्री संप्रदाय' भी कहते हैं

3.1.2.2 मध्वाचार्य

मध्वाचार्य का जन्म 1199 दक्षिण भारत के बेलीग्राम में हुआ था। इनका दीक्षांत नाम आनंद तीर्थ था। आठ मंदिरों का निर्माण करने वाले मध्वाचार्य ने वैष्णव भक्ति के प्रचार में विशिष्ट

योगदान किया। इनका मत 'द्वैतवाद' कहलाता है। उन्होंने अद्वैतवाद का घोर विरोध किया यह जगत को सत्य मानते हैं तथा ईश्वर और जीवन में भेद नहीं मानते। समस्त जीव हरि के सेवक है। अल्पज्ञ जीव विष्णु के अधीन रहकर ही कार्य करता है। वास्तविक सुख की अनुभूति ही मुक्ति है जिसे 'अमला भक्ति' से प्राप्त किया जा सकता है। इनके द्वारा प्रवर्तित संप्रदाय का नाम 'ब्रह्म सम्प्रदाय' है।

▶ मध्वाचार्य का मत 'द्वैतवाद'

3.1.2.3 विष्णुस्वामी

डॉ. भण्डारकर के अनुमान से इनका उदय 13 वीं शताब्दी में हुआ था। विष्णु स्वामी के मत में ईश्वर सच्चिदानंदस्वरूप हैं तथा वे अपनी आह्लादिनीसंवित् के द्वारा अश्लिष्ट हैं। माया उन्हीं के अधीन रहती है। इनके मत में ईश्वर का प्रधान अवतार नरसिंह है। कुछ विद्वान नृसिंह और गोपाल दोनों का इन्हें उपासक मानते हैं। इस संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धांत ग्रंथ रूप में उपलब्ध नहीं हैं। इनकी शिष्य-परंपरा में वल्लभाचार्य का स्थान है और उन्हीं के सिद्धांतों को विष्णुस्वामी संप्रदाय में स्थान दिया जाता है।

▶ ईश्वर का प्रधान अवतार नृसिंह

3.1.2.4 निम्बार्क आचार्य

श्री निंबार्काचार्य वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य के रूप में प्रख्यात हैं। निंबार्क-संप्रदाय में इनको सृष्टि के आदि में उत्पन्न माना जाता है, किंतु डॉ भण्डारकर ने इनका समय 1926 ई. के आसपास स्थिर किया है। कुछ विद्वान इस संप्रदाय को वैष्णव भक्ति का प्राचीनतम सम्प्रदाय मानते हैं। श्री निंबार्क का सम्प्रदाय सनाकादि सम्प्रदाय के अंतर्गत है। इस संप्रदाय का दार्शनिक सिद्धांत 'भेदाभेदवाद' या 'द्वैताद्वैतवाद' है। स्वामी हरिदास का सखी-संप्रदाय इसी की शाखा है।

▶ श्री निंबार्क का सम्प्रदाय सनाकादि सम्प्रदाय

3.1.2.5 वल्लभाचार्य

वल्लभाचार्य का जन्म 1479 ई. में रायपुर जिले के चंपारन नामक स्थान में हुआ। इनके माता-पिता तेलुगू ब्राहमण थे। किंतु वल्लभाचार्य का समस्त जीवन उत्तर भारत (काशी, प्रयाग और ब्रजमंडल) में व्यतीत हुआ। ये अपने समय के तेजस्वी, प्रतिभा संपन्न महात्मा थे। वल्लभाचार्य का सम्प्रदाय आज स्वतंत्र संप्रदाय के रूप में विख्यात है। किन्तु मूलतः इसका संबंध विष्णुस्वामी संप्रदाय से स्थिर किया जाता है। दार्शनिक दृष्टि से यह सम्प्रदाय 'शुद्धाद्वैतवाद' कहलाता है। जीव सत्य है और नित्य है उसकी उत्पत्ति नहीं होती। जीव अणु है। वह तीन प्रकार का है, शुद्ध जीव, संसारी जीव, और मुक्त जीव। भगवान के पोषण (अनुग्रह) को ही भक्ति का संबल मानना चाहिए, इसलिए इनके मत को 'पुष्टिमार्ग' कहा जाता है। भक्ति का विवेचन करते हुए वल्लभाचार्य ने मर्यादा-भक्ति और पुष्टि-भक्ति को माननेवाले भक्तों 'पुष्टिमार्गी' भक्त कहा। वल्लभाचार्य ने जगत और संसार में भेद निरूपण किया है। वल्लभ-संप्रदाय के प्रचार-प्रसार में वल्लभाचार्य के पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ का योगदान उल्लेखनीय है। हिन्दी के वल्लभ-संप्रदायी कवियों को दीक्षा देकर उन्होंने 'अष्टछाप' की स्थापना की। आचार्यों की इस परंपरा द्वारा वैष्णव भक्ति का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दोनों दृष्टियों से उन्नायन हुआ और वैष्णव भक्ति के माध्यम से राम और कृष्ण की उपासना का सर्वत्र प्रचार हो गया।

▶ दार्शनिक दृष्टि से 'शुद्धाद्वैतवाद'

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

वैष्णव भक्ति का प्रचार-प्रसार करने का श्रेय रामानुजाचार्य, रामानन्द, निम्बार्काचार्य, मध्वाचार्य एवं श्री विष्णु स्वामी जैसे आचार्यों को जाता है। वैष्णव भक्ति के माध्यम से राम और कृष्ण की विष्णु के अवतारों के रूप में उपासना का सर्वत्र प्रचार हुआ और कवियों ने भी इनके जीवन चरित्र को आधार बनाकर रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

विष्णु को लेकर सगुण भक्ति दो धाराओं में प्रवाहित हुई- राम भक्ति काव्य धारा और कृष्ण भक्ति काव्य धारा। रामभक्ति के सर्वश्रेष्ठ कवि तुलसीदास और कृष्ण के सर्वश्रेष्ठ गायक सूरदास हुए। इन कवियों ने प्रबंध और गेय शिल्प में हिंदी कविता को अपने सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाया।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. सगुण भक्ति के बारे में टिप्पणी तैयार कीजिए।
2. वैष्णव भक्ति पर आलेख तैयार कीजिए।
3. वैष्णव संप्रदाय के प्रतिष्ठापक आचार्यों पर टिप्पणी तैयार कीजिए।
4. सगुण भक्ति की विशेषताओं पर टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिंदी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास - गुलाबराय
3. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. गणपतिचन्द्र गुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास
2. हिंदी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
3. हिंदी साहित्य का इतिहास- संपादक - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
4. हिंदी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
5. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 2

रामकाव्य धारा-रामकाव्य संप्रदाय, रामकाव्य- प्रमुख कवि, प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- रामकाव्य के विकास के बारे में अवगत होता है
- रामभक्ति के विविध संप्रदायों को समझता है
- रामभक्ति की प्रमुख विशेषताएँ समझता है
- रामकाव्य के प्रमुख कवियों की जानकारी प्राप्त करता है
- आलवार भक्ति का संक्षिप्त परिचय प्राप्त होता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य में राम भक्ति काव्य धारा ने सगुण भक्ति और भक्ति आंदोलन की मूल संवेदना को लोक-भाव-भूमि पर दृढ़ता से प्रतिष्ठित किया है। दक्षिण भारत में भक्ति-आंदोलन और उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन दोनों की चेतना को तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ में देखना होगा। सगुण काव्यधारा के अंतर्गत भगवान विष्णु के दो अवतारों कृष्ण और राम को आराध्य मानकर कवियों ने साहित्य सृजन किया। स्वामी वल्लभाचार्य के पुष्टि मार्ग के संरक्षण में कृष्ण भक्ति शाखा पल्लवित-पोषित हुई तो स्वामी रामानंद ने संपूर्ण उत्तरी भारत में रामभक्ति लहर का प्रवर्तन किया। रामानंद के प्रयासों से ही हिन्दी के भक्तिकालीन साहित्य में रामभक्ति साहित्य का विकास हुआ। इस में हम चिन्तन-परम्परा के परिप्रेक्ष्य में यह भी समझेंगे कि इसमें रामानंद की क्या भूमिका रही है और उन्हें रामकाव्य परम्परा के चिंतन का मेरुदण्ड क्यों कहा जाता है? रामानन्द का रूढ़िवाद-पूरोहितवाद विरोधी चिन्तन ही कबीर और तुलसीदास में रचनात्मक निष्पति पाता है। रामानन्द ने शास्त्र परम्परा और संस्कृत भाषा के स्थान पर लोक-जागरण, लोक-कल्याण के लिए लोकभाषा में काव्य-सृजन की भूमिका तैयार की इसी भूमिका पर कबीर और तुलसी की भक्ति- चेतना, लोक-संवेदना का निर्माण विस्तार हुआ। वाल्मीकि रामायण की परम्परा ने समय के साथ परिवर्तनों को स्वीकार किया, उसी का नया सृजन-चिंतन राम-भक्ति काव्य में देखने को मिलता है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

रामकाव्य, द्वैतवाद, आलवार भक्त, श्रीसंप्रदाय, समन्वयभावना, तुलसीदास

Discussion / चर्चा

> ▶ आलवार भक्तों की संख्या 12

दक्षिण के आलवार भक्तों में रामभक्ति पाई जाती है। आलवार भक्तों की संख्या 12 मानी जाती है। इनके द्वारा रचित 'तिरुवायमोलि' ग्रंथ में अनन्य रामभक्ति का वर्णन है। इनकी अन्य तीन प्रसिद्ध कृतियाँ हैं: तिरुविरुत्तम', 'तिरुवर्गशरियेम' तथा 'पेरिय तिरुवन्दादि'। इनके राम भक्तिपरक सारस गीतों का संकलन 'पेरूमाल तिरुमोषी' नामक रचना में है। आलवार सन्तों के लोक प्रचलित चार हज़ार पदों को 'नलियार दिव्य प्रबन्धम' शीर्षक से चार भागों में रंगनाथ मुनि या रघुनाथाचार्य ने संकलित किया।

3.2.1 राम काव्यधारा

> ▶ हिन्दी रामकाव्य का मूल आधार वाल्मीकि रामायण

वैष्णव भक्ति के इतिहास में रामोपासना का अस्तित्व कृष्णोपासना से अधिक प्राचीन माना जाता है। राम काव्य के आधार ग्रंथ के रूप में संस्कृत की 'वाल्मीकि रामायण' को माना जा सकता है। बाद में महाभारत के रामोपाख्यान में भी राम कथा वर्णित की गई। संस्कृत के कुछ अन्य ग्रंथों में भी 'राम' विषयक आख्यान उपलब्ध होते हैं, यथा- अगस्त्य संहिता, 'राघवीय संहिता', 'रामरहस्योपनिषद्', 'अध्यात्म रामायण', 'आनंद रामायण', 'अद्भुत रामायण', 'भुशुण्डि रामायण', 'विष्णु पुराण', 'वायु पुराण' और 'भागवत पुराण'। राम को पूर्ण ब्रह्म मानते हुए अनेक पुराणों में रामकथा के अनेक प्रसंग दिखाई पड़ते हैं। हिन्दी रामकाव्य का मूल आधार वाल्मीकि रामायण एवं अध्यात्म रामायण जैसे कुछ ग्रंथ ही हैं। रामानुजाचार्य की 'श्रीसंप्रदाय' में राम को नारायण और विष्णु का रूप माना गया है, परंतु हिन्दी राम काव्य परंपरा का विकास स्वामी रामानंद से स्वीकार किया जाए तो कोई अनौचित्य नहीं होगा। वस्तुतः रामावत संप्रदाय में रामभक्ति को जो गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है, वह किसी अन्य संप्रदाय में नहीं है।

> ▶ हिन्दी रामकाव्य का मूल आधार

'रामावत संप्रदाय' के प्रवर्तक स्वामी रामानंद ने भक्ति के क्षेत्र में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन किये। और राम की मर्यादाभक्ति को आदर्श और आचरण की पवित्रता से मंडित रखते हुए जनसाधारण के लिए सुगम बनाया। निर्गुण राम की भक्ति जिसे किसी रूपों में कबीर आदि ने स्वीकार किया था, रामानंद की भक्ति-पद्धति में सगुण रूप में परिणत हुई। सगुण और निर्गुण का यह समन्वय रामावत दृष्टि का ही परिणाम है। रामानंद के समकालीन महाराष्ट्रीय संत नामदेव और त्रिलोचन ने रामोपासना का प्रचार किया था, परंतु इसका रूप निर्गुण- उपासना का ही रहा था। इसके विपरीत रामानंद ने रामभक्ति को लोक मर्यादानुकूल सदाचार-मुल्क धर्म का रूप देकर उसे जनता में अधिक लोकप्रिय बना दिया था। रामचरित में मर्यादा का प्राधान्य था, अतः रामोपासक राम के मर्यादा-पुरुषोत्तम आदर्श रूप को ग्रहण कर उसका अनुसरण कर सकते थे।

3.2.2 राम काव्य के प्रमुख कवि

राम काव्य के प्रमुख कवि हैं- स्वामी रामानंद, अग्रदास, ईश्वरदास, नाभादास, तुलसीदास आदि

3.2.2.1 स्वामी रामानंद

स्वामी रामानंद जी की जन्म तिथि और जन्म स्थान अभी तक विवादास्पद हैं। अंग्रेज

लेखक फ़ुर्कहर ने इनका समय 1400 ई. से 1470 तक माना है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने इतिहास में पन्द्रहवीं शती द्वितीय चरण (1450) से सोलहवीं शती के प्रथम चरण के बीच इनका समय माना है। रामानंद का जन्म काशी में हुआ था और श्री वैष्णव संप्रदाय के आचार्य राघवानंद से इन्होंने दीक्षा ग्रहण की थी। वर्णाश्रम धर्म में आस्था रखते हुए भी इन्होंने भक्तिमार्ग का सभी को समान भाव से अधिकारी माना और निम्नवर्ग के भक्तों को अपना शिष्यत्व प्रदान किया। कबीर, रैदास, धन्ना, पीपा आदि इनके शिष्य थे। स्वामी रामानंद संस्कृत के पंडित थे। 'वैष्णव मताब्द-भास्कर' और 'श्रीरामार्जुन-पद्धति' इनके सुप्रसिद्ध ग्रंथ हैं। रामानंदी वैष्णवों की एक शाखा योग साधना में विश्वास रखने के कारण, अपना वैशिष्ट्य बनाए रखने के लिए, सगुणोपासना से कुछ हट कर 'तपसी शाखा' के नाम से योगपरक सिद्धियों का प्रचार करती है।

▶ श्री वैष्णव संप्रदाय के आचार्य राघवानंद

3.2.2.2 अग्रदास

अग्रदास एक संत कवि थे। इन्होंने कृष्णदास पयहारी से दीक्षा लेकर शिष्यत्व स्वीकार किया था। कृष्णदास पयहारी ने जयपुर के समीप गलता नामक स्थान में अपनी गद्दी साबित की थी। गलता की गद्दी पर परवर्ती काल में जो शिष्य बैठे, उन्होंने भी भक्ति साहित्य की विपुल मात्रा में रचना की। अग्रदास 1556 ई. के लगभग विद्यमान थे। इनके अनेक ग्रंथों की चर्चा गलता की गद्दी परंपरा में आज भी होती है। मुख्य ग्रंथों में 'ध्यानमंजरी', 'अष्टयाम', 'राम भजनमंजरी', 'उपासना-बावनी' और 'पदावली' हैं। 'हितोपदेश' भाषा भी इनके द्वारा प्रणीत है। 'अग्रअली' नाम से अग्रदास स्वयं को जानकी जी की सखी मानकर काव्यरचना किया करते थे। राम-भक्ति परंपरा में रसिक भावना के समावेश का श्रेय इन्हीं को प्राप्त है। 'अष्ट ायाम' अथवा 'रामाष्टायाम' इनकी सर्वप्रमुख रचना है।

▶ 'अग्रअली' नाम से प्रसिद्ध

3.2.2.3 ईश्वरदास

ईश्वरदास की जन्म तिथि उनकी सुप्रसिद्ध कृति सत्यवतीकथा के रचनाकाल(1501) के आधार पर अनुमित की जाती है। ईश्वरदास की रामकथा से संबंध रचना 'भरतमिलाप' है, जिसका उल्लेख काशी नागरी प्रचारिणी सभा के खोज विवरण में हुआ है। ईश्वरदास की एक रचना 'अंगदपैज' भी मिलती है, जिसमें रावण की सभा में अंगद के पैर जमा कर हट जाने का वीररसपूर्ण वर्णन मिलता है। इन रचनाओं के आधार पर ही ईश्वर दास को रामभक्ति परंपरा में स्थान दिया जाता है।

▶ ईश्वरदास की रामकथा 'भरतमिलाप'

3.2.2.4 नाभादास

नाभादास अग्रदास जी के शिष्य, बड़े भक्त और साधुसेवी थे। संवत 1657 के लगभग वर्तमान थे और गोस्वामी तुलसीदास जी की मृत्यु के बहुत पीछे तक जीवित रहे। इनका प्रसिद्ध ग्रंथ 'भक्तमाल' संवत 1642 के पीछे बना और संवत 1769 में 'प्रियादास' जी ने उसकी टीका लिखी। नाभादास की तीन कृतियाँ उपलब्ध हैं- 'भक्तमाल', 'अष्टयाम', 'रामभक्ति संबंधी स्फुट पद'। 'भक्तमाल' में लगभग दो सौ भक्तों का चरित्रगान है। 'अष्टयाम' ब्रजभाषा गद्य और पद्य दोनों में पृथक्-पृथक् उपलब्ध है। राम संबधी स्फुट पदों का उल्लेख खोज रिपोर्टों में मिलता है।

▶ प्रसिद्ध ग्रंथ 'भक्तमाल'

3.2.2.5 हृदयराम

यह पंजाब के रहने वाले और कृष्णदास के पुत्र थे। इन्होंने संवत 1670 में संस्कृत के हनुमन्नाटक के आधार पर भाषा हनुमन्नाटक लिखा जिसकी कविता बड़ी सुंदर और परिमार्जित है। इसमें अधिकतर कविता और सवैयों में बड़े अच्छे संवाद हैं। पहले कहा जा चुका है कि

हनुमन्नाटक लिखा गया

गोस्वामी तुलसीदासजी ने अपने समय की सारी प्रचलित काव्यपद्धतियों पर रामचरित का गान किया। केवल रूपक या नाटक के ढंग पर उन्होंने कोई रचना नहीं की। गोस्वामी जी के समय से ही उनकी ख्याति के साथ-साथ रामभक्ति की तरंगे भी देश के विभिन्न भागों में उड़ चली थीं। अतः उस काल के भीतर ही नाटक के रूप में कई रचनाएँ हुईं जिनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध हृदयराम का हनुमन्नाटक हुआ।

3.2.2.6 तुलसीदास

रामभक्ति के उन्नायक कवि तुलसीदास का जन्म 1532 ई में उत्तर प्रदेश के बाँदा जिले में स्थित राजापुर नामक स्थान में माना जाता है। कुछ विद्वानों ने उनका जन्म उ.प के एटा जिले के 'सोरों' नामक स्थान में माना है किंतु राजापुर को ही उनका जन्म-स्थान मानने की मान्यता अधिक है। श्री अमृतलाल नागर ने तुलसी पर लिखे उपन्यास 'मानस का हंस' में इसी मान्यता की स्थापना की है। इनके पिता का नाम आत्मराम दूबे तथा माता का नाम हुलसी बताया जाता है। अशुभ नक्षत्र में जन्म होने के कारण इनके माता-पिता द्वारा त्याग दिया था। माता-पिता द्वारा त्याग दिए जाने की पीड़ा को उन्होंने जहाँ-तहाँ अपने काव्य में व्यक्त किया है। उनका बचपन अत्यंत कष्टप्रद स्थितियों में अनाथ की तरह बीता। उनका पालन पोषण बाद में गुरु नरहरिदास जी ने किया। इनका विवाह रत्नावली नामक विदूषी से हुआ था। कहा जाता है कि ये अपनी पत्नी के प्रति अत्याधिक अनुरक्त थे। उसे पीहर तक नहीं भेजते थे। एक बार वह इनकी अनुपस्थिति में अपने भाई के साथ पीहर चली गई, तो यह भी उसके पीछे-पीछे वहीं जा पहुँचे इस पर पत्नी ने इन्हें धिक्कारते हुए कहा-

'लाज न लागत आपको दौरे आएहु साथ।

धिक धिक ऐसे प्रेम कौ कहा कहौ मैं नाथ।।

अस्थि चर्म मम देह यह, ता सों ऐसी प्रीति।

नेकु जो होती राम से, तो काहे भव-भीति ।।'

रामकाव्यधारा के प्रवर्तक

यह पक्तियों का तुलसी पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे विरक्त होकर काशी आ गए।

3.2.3 रामकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

राम काव्य परंपरा का यज्ञ भी एक लंबा इतिहास है, तथा इस परंपरा के केंद्र बिंदु है गोस्वामी तुलसीदास, राम काव्य परंपरा में उनके ग्रंथ 'मील का पत्थर' सिद्ध हुए हैं। उच्च कोटि के काव्यसौष्ठव से युक्त इस ग्रंथ में मानव धर्म की अद्‌भुत व्याख्या की गई है। राम काव्य परंपरा के प्रमुख कवि होने से हम तुलसी को ही केंद्र मानकर राम काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों का विश्लेषण करेंगे। इस काव्य धारा की विशेषताओं का विवेचन अग्र शीर्षकों में किया जा सकता है।

'मील का पत्थर'

3.2.3.1 राम का स्वरूप

राम काव्य परंपरा के कवियों ने भगवान विष्णु के अवतार राम के जीवन चरित्र को आधार बनाकर अपने काव्य ग्रंथों की रचना की। इन कवियों ने 'राम' को परब्रह्म मानकर धर्म की स्थापना हेतु, अयोध्या नरेश दशरथ के पुत्र रूप में अवतार ग्रहण कर मानवीय लीलाएं करते हुए दिखाया है। तुलसी ने राम के जिस स्वरूप की परिकल्पना 'रामचरितमानस' में की है, वह शक्ति, शील एवं सौंदर्य का भंडार है। राम के रूप में उन्होंने एक ऐसे मानवीय चरित्र

को प्रस्तुत किया है, जो सबके लिए अनुकरणीय है और एक आदर्श पात्र है। तुलसी के राम लोक-रक्षक हैं तथा अधर्म के विनाशक एवं धर्म के संस्थापक हैं। वे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं और श्रेष्ठतम गुणों से विभूषित हैं। तुलसी के राम अपने अनन्त सौंदर्य से जन-जन को मोहित करने वाले हैं। साथ ही अपूर्व शील से सबके हृदय को अपने वशीभूत कर लेते हैं। वे अद्वितीय वीर हैं तथा इस वीरता से अधर्म का विनाश करते हुए तत्पर दिखाई देते हैं।

▶ शक्ति, शील एवं सौंदर्य का भंडार

3.2.3.2 भक्ति का स्वरूप

राम भक्ति शाखा के कवियों ने राम के प्रति दास्य-भाव की भक्ति-भावना प्रदर्शित की है। वे स्वयं को सेवक तथा 'राम' को अपना आराध्य मानते हैं। तुलसी ने रामचरितमानस में दास्य-भाव की भक्ति को मुक्ति का साधन मानते हुए कहा है-

सेवक-सेव्य भाव बिनु भव न तरिअ उरगारि।

तुलसी की भक्ति पद्धति बड़ी अनुपम है। उसमें आराध्य के प्रति श्रद्धा, प्रेम का समन्वय है तथा धर्म और ज्ञान का भी योग है।

तुलसी की भक्ति नवधा भक्ति है। जिसका चरम उत्कर्ष 'विनय पत्रिका' में देखा जा सकता है। भजन, कीर्तन, नामस्मरण, गुण कथन, दैन्य, समर्पण आदि सभी तत्व तुलसी की भक्ति पद्धति में उपलब्ध हो जाते हैं। राम के प्रति अनन्यता होते हुए भी उन्होंने किसी अन्य देवी-देवता के प्रति तिरस्कार नहीं दिखाया है। साथ ही भक्ति मार्ग की महत्ता बताते हुए भी ज्ञान और कर्म की महत्ता भी प्रतिपादित की है। उनकी भक्ति वेद-शास्त्र की मर्यादा के अनुकूल है और विभिन्न मतों का सार तत्व होने से पारम्परिक होते हुए भी नवीनता लिए हुए है।

▶ तुलसी की भक्ति नवधा भक्ति

3.2.3.3 समन्वयवादी प्रवृत्ति

राम भक्ति काव्य की एक उल्लेखनीय विशेषता है इनकी समन्वयवादी प्रवृत्ति। तुलसी के समय में समाज में अनेक प्रकार के विग्रह व्याप्त थे। इस तरह धर्म, जाति, संप्रदाय, भाषा के नाम पर दिन संघर्ष होते रहते थे, अतः समन्वय प्रवृत्ति तत्कालीन युग की आवश्यकता थी। इसलिए तुलसी जैसे कवियों ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया।

▶ तत्कालीन युग की आवश्यकता

3.2.3.4 मूल्यबोध एवं युगबोध

राम भक्त कवियों का उद्देश्य केवल काव्य रचना करना ही नहीं था। वे जितने उच्चकोटि के कवि थे, उतने ही बड़े उपदेशक भी थे। उनकी रचनाएँ केवल काव्य रसिकता के आस्वाद की विषय वस्तु नहीं हैं, अपितु जनता के एक बहुत बड़े वर्ग को जीवन के नैतिक मूल्यों की शिक्षा भी देती हैं। वे एक उपदेशक के रूप में भी सामने आते हैं। राम भक्त कवियों ने अपनी रचनाओं में युगीन परिस्थितियों का उल्लेख भी किया है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में कलियुग-निरूपण के द्वारा तत्कालीन मुस्लिम शासकों की शासन व्यवस्था में होने वाले अत्याचारों, तद्युगीन सामाजिक विकृतियों का यथार्थ चित्रण किया है। साथ ही रामराज्य निरूपण के अन्तर्गत आदर्श शासन व्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत की है।

▶ उपदेशक के रूप

3.2.3.5 नारी विषयक दृष्टिकोण

तुलसी सीता, पार्वती अनुसूया जैसे नारियों के उज्ज्वल चरित्र की परिकल्पना करते हुए नारी को सती, पतिव्रता एवं त्यागमयी रूप में प्रस्तुत कर उन्हें गरिमा एवं भव्यता प्रदान की है।

▶ नारियों के उज्ज्वल चरित्र

3.2.3.6 काव्य शैलियाँ

रामभक्त कवि शास्त्रज्ञ एवं विद्वान थे। वे कविता करने में सिद्धहस्त थे, अतः किसी एक विशेष शैली में ही नहीं अपितु विविध काव्यशैलियों में पारंगत थे। यही कारण है कि राम काव्य की रचना विविध शैलियों में की गई है। तुलसी ने रामचरितमानस की रचना प्रबंध काव्य के रूप में दोहा-चौपाई शैली में की, जबकि कवितावली की रचना कवित्त-रवैया शैली में मुक्तक काव्य के रूप में की। विनय पत्रिका में पद शैली को तथा बरवै रामायण में बरवै शैली को अपनाया गया है। रामायण महानाटक के रचयिता प्राणचन्द चौहान तथा हनुमन्नाटक के रचयिता हृदयराम ने संवाद-शैली में अपने ग्रंथों का प्रणयन किया। वीरगाथाकाल की छप्पय पद्धति, विद्यापति और सूरदास के पद-शैली एवं गीत पद्धति, गंग आदि भाट कवियों की कवित्त सवैया पद्धति तथा जायसी आदि सूफी कवियों की दोहा-चौपाई शैली का सफलतापूर्वक प्रयोग रामभक्त कवियों की रचनाओं में किया गया है। तुलसी के काव्य में इन सभी शैलियों का प्रयोग जितनी सफलता से हुआ है उसे देखकर ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उनमें काव्य प्रतिभा किस हद तक विद्यमान थी।

▶ विविध काव्यशैलियों में काव्य रचना

3.2.3.7 राम काव्य में रस योजना

रामकाव्य का क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसमें सभी रसों की योजना करने का अवसर कवियों को प्राप्त हो गया है, परिणामतः इस काव्य में नव रसों का पूर्ण परिपाक उपलब्ध होता है। भक्ति भावना की प्रधानता होने के कारण निर्वेद जन्य शांत रस को ही हम राम काव्य का प्रधान रस स्वीकार कर सकते हैं। तुलसी साहित्य में सभी रसों का समावेश है। 'रामचरितमानस' के युद्ध वर्णन में वीर एवं रौद्र रसों की सुंदर योजना हुई है तथा श्रृंगार का मर्यादित चित्र पुष्प वाटिका में राम-सीता के प्रथम दर्शन पर देखा जा सकता है।

3.2.3.8 अवधि भाषा का प्रयोग

राम काव्य की रचना प्रमुख रूप से अवधी भाषा में हुई है। गोस्वामी जी का 'रामचरितमानस' अवधी भाषा में ही लिखा गया है। तुलसी विलक्षण प्रतिभा संपन्न कवि थे, क्योंकि उन्हें ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। उन्होंने 'कवितावली' एवं 'विनय पत्रिका' जैसे मुक्तक काव्यों में सुन्दर मधुर सरस ब्रज भाषा का प्रयोग करते हुए अपनी शक्ति का परिचय दिया है। तुलसी की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है- प्रसंगानुकूलता। रसानुकूल शब्द चयन, आनुप्रासिकता एवं पात्रानुकूल जैसे गुण उनकी भाषा में सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं। उनकी भाषा में स्वाभाविकता, सरसता एवं भावव्यंजकता भी विद्यमान है। तुलसी के अतिरिक्त अन्य भक्तिकालीन कवियों ने भी प्रायः अवधि में राम काव्य की रचना की है।

▶ मुक्तक काव्य में ब्रज भाषा का प्रयोग

3.2.3.9 छंद एवं अलंकार योजना

राम भक्त कवि काव्य मर्मज्ञ थे। काव्यशास्त्र के नियमों से बंधी हुई छंद-योजना करने में पूर्ण समर्थ थे। यही कारण है कि तुलसी जैसे समर्थ कवि ने किसी एक छंद में नहीं अपितु विविध छंदों में काव्य रचना की है। 'रामचरितमानस' में दोहा, चौपाई, सोरठा, सवैया आदि छंदों का सफल प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त संस्कृत के शब्दों का प्रयोग भी उन्होंने संस्कृत में रची गई स्तुतियों में किया है। घनाक्षरी, कवित्त, तोमर, त्रिभंगी छंदों का भी सुन्दर प्रयोग राम काव्य में देखा जा सकता है। राम काव्य परंपरा के कवि अलंकार प्रवीण थे। काव्य में अलंकारों के प्रयोग में यह सिद्धहस्त थे।

▶ विविध छंदों में काव्य रचना

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

रामभक्ति के उन्नायक कवि तुलसीदास है। तुलसी ने राम के जिस स्वरूप की परिकल्पना 'रामचरितमानस' में की है, वह शक्ति, शील एवं सौंदर्य का भंडार है। राम के रूप में उन्होंने एक ऐसे मानवीय चरित्र को प्रस्तुत किया है, जो सबके लिए अनुकरणीय है और एक आदर्श पात्र है। तुलसी के राम लोक-रक्षक हैं तथा अधर्म के विनाशक एवं धर्म के संस्थापक हैं। वे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं और श्रेष्ठतम गुणों से विभूषित हैं।

राम भक्त कवियों का उद्देश्य केवल काव्य रचना करना ही नहीं था। वे जितने उच्चकोटि के कवि थे, उतने ही बड़े उपदेशक भी थे। उनकी रचनाएँ केवल काव्य रसिकता के आस्वाद की विषय वस्तु नहीं हैं, अपितु जनता के एक बहुत बड़े वर्ग को जीवन के नैतिक मूल्यों की शिक्षा भी देती हैं। वे एक उपदेशक के रूप में भी सामने आते हैं। राम भक्त कवियों ने अपनी रचनाओं में युगीन परिस्थितियों का उल्लेख भी किया है। भक्तिकालीन रामकाव्य भले ही कृष्ण काव्य की तुलना में न्यून हो, किन्तु अपनी गरिमा एवं उदात्तता के कारण वह हिन्दी काव्य में सर्वश्रेष्ठ है। भक्ति रस से सराबोर इन कवियों की वाणी ने जनता को आशा, उत्साह एवं स्फूर्ति का सन्देश दिया।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. रामकाव्य के अर्थ एवं उद्भव पर टिप्पणी तैयार कीजिए।
2. रामभक्ति के विविध संप्रदायों को समझाइए।
3. रामभक्ति की प्रमुख विशेषताओं पर आलेख तैयार कीजिए।
4. आलवार भक्ति का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिंदी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास -गुलाबराय
3. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. गणपतिचन्द्र गुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास
2. हिंदी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
3. हिंदी साहित्य का इतिहास - संपादक -डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
4. हिंदी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
5. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 3

कृष्ण भक्ति काव्य, विविध संप्रदाय, अष्टछाप, प्रमुख कृष्ण भक्त कवि-सूरदास, नंददास, मीरा और रसखान, कृष्ण भक्ति काव्य-प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- कृष्णकाव्य के विकास से अवगत होता है
- कृष्ण भक्ति के विविध संप्रदायों को समझता है
- कृष्ण भक्ति की प्रमुख विशेषताएँ समझता है
- अष्टछाप के बारे में समझता है
- वल्लभ-संप्रदाय से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

भारतीय परंपरा में राम और कृष्ण दो ऐसे विशिष्ट चरित्र हैं, जिन्होंने संपूर्ण रचनाशीलता को गहरे स्तर पर प्रभावित किया। उन्हें विष्णु के अवतार के रूप में देखा गया और भारतीय समाज में उन्हें व्यापक स्वीकृति मिली। माना जाता है कि राम त्रेता के अवतार हैं और कृष्ण द्वापर के। पर विचारणीय तथ्य यह है कि कृष्ण के व्यक्तित्व का विकास कुछ चरणों में हुआ और मध्यकाल तक आते-आते उनमें इतिहास के साथ गाथा का ऐसा संयोजन हो चुका था कि उन्हें 'सोलह कला अवतार' कहा गया। भारतीय रचनाशीलता ने कृष्ण के बालरूप से लेकर महाभारत तक के उनके व्यक्तित्व का उपयोग किया और वे ऐसे चरित्र हैं जो केवल साहित्य तक सीमित नहीं हैं, नृत्य, संगीत, चित्र, मूर्त, लोक समग्र रचना-संसार में उनकी उल्लेखनीय उपस्थिति है। कृष्ण का चरित्र इतिहास के लंबे प्रवाह में रूपांतरित होता रहा है और महाभारत से लेकर पुराण तक उन्होंने जो स्वरूप ग्रहण किया, उससे उनका बहुरंगी व्यक्तित्व निर्मित हुआ। कवियों ने इसे अपने-अपने ढंग से ग्रहण किया।

Keywords / मुख्य बिन्दु

कृष्णकाव्य, पुष्टिमार्ग, अष्टछाप, द्वैतवाद, वल्लभ संप्रदाय

Discussion / चर्चा

3.3.1 कृष्ण भक्ति काव्यधारा

कृष्ण भक्ति का अस्तित्व भारत में बहुत प्राचीन काल से रहा है। इसका मूल उद्‌गम सगुण भक्ति का प्रसिद्ध ग्रंथ 'भागवत' माना जाता है। 'महाभारत' में जो कृष्ण विष्णु के अवतार

माने गये थे, 'भागवत' में उन्हें पूर्ण ब्रह्म के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया गया। महाभारत के कृष्ण लोक-रक्षण और लोक-कल्याण करने वाले थे। परंतु धीरे-धीरे उनका यह लोक-रक्षक रूप हटता गया और केवल ऐसे स्वरूप की प्रतिष्ठा और परिधि बढ़ती गई जो गहरे प्रेम का आलंबन हो सके। 'भागवत' ने कृष्ण के इस मधुर स्वरूप की प्रतिष्ठा की। इसी कारण भागवत कृष्णोपासक-भक्ति का सर्वप्रधान ग्रंथ माना गया। मध्वाचार्य ने अपने सिद्धांत(द्वैतवाद) में 'भागवत' के आधार पर कृष्णोपासक-भक्ति का विशेष बल दिया। भागवत तक कृष्ण के साथ राधा का उल्लेख नहीं हुआ था। राधा का नाम सबसे पहले 'गोपालतापनी' उपनिषद में आता है। इसमें राधा कृष्ण की प्रेयसी है। आगे चलकर विष्णु स्वामी और निम्बार्काचार्य ने राधा को कृष्ण की सर्वप्रधान प्रेयसी बनाकर कृष्ण भक्ति को राधा-कृष्ण की युगल-मूर्ति प्रदान कर और अधिक लोक-रंजक बना दिया। निंबार्क संप्रदाय में जयदेव हुए, जिन्होंने राधा-कृष्ण का रसमय वर्णन करते हुए 'गीतागोविंद' की रचना की। बाद में चैतन्य और वल्लभाचार्य ने कृष्ण के साथ ही राधा की उपासना पर विशेष बल दिया।

▶ कृष्णोपासक-भक्ति पर विशेष बल

3.3.2 कृष्ण- काव्य की प्रमुख विशेषताएँ

कृष्ण काव्य धारा की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार प्रकट की जा सकती हैं।

3.3.2.1 प्रेरणास्रोतः

जैसा कि अब तक के अध्ययन से स्पष्ट है इस परंपरा के अधिकांश विभिन्न धर्मो-संप्रदायों के आश्रित थे तथा वे सामान्यतः आपने संप्रदाय के आचार्य नेता के निर्देशानुसार काव्य रचना करते थे। अतः विभिन्न आचार्यो की रुचि एवं प्रवृत्ति के अनुसार इनकी काव्य-रचना का स्वरूप भी निर्धारित होता था। वल्लभ-संप्रदाय में प्रारंभ में बाल-कृष्ण की उपासना प्रचलित थी जिसके प्रभाव से उसके आश्रय में वात्सल्य रस के काव्य का पर्याप्त विकास हुआ। किन्तु आगे चलकर जब बाल-कृष्ण के स्थान पर राधा-कृष्ण की प्रतिष्ठा हो गयी तो उनमें वात्सल्य रस का स्थान श्रृंगार रस ने लिया। चैतन्य संप्रदाय में परकीय भाव की उपासना तथा राधावल्लभ संप्रदाय में नित्य-विहारी आराधना मान्य थी, जिसका प्रभाव इन समुदायों के कवियों पर भी पड़ा; जहाँ एक में विरह की प्रधानता है वहाँ दूसरे में संयोग- क्रीड़ाओं की। इसी प्रकार परवर्ती कवियों ने अपने धर्म-संप्रदाय के वातावरण की प्रेरणा से ही नायिका-भेद संबंधी ग्रंथ लिखे। अस्तु, कहा जा सकता है कि इन कवियों का प्रेरणास्रोत मुख्यतः इनके आश्रयदाता संप्रदायों एवं मंदिरों की आंतरिक स्थिति, प्रवृत्ति एवं वातावरण में निहित था।

▶ बाल-कृष्ण की उपासना

3.3.2.2 विषय वस्तु

इनकी विषय-वस्तु का आधार मुख्यतः भागवत-पुराण ही है। किन्तु उसमें थोड़ा परिवर्तन एवं परिवर्धन भी किया गया है। इस काव्य-परंपरा में सामान्यतः पौराणिक अवतरणों का ही चित्रण हुआ है। जिनमें प्रमुखतः राधा-कृष्ण एवं गोपियों की श्रृंगारी लीलाओं का वर्णन प्राप्त हुई है। कृष्ण के लोक-रक्षक रूप के स्थान पर इस परंपरा के कवियों ने उसके लोक-रंजक रूप की ही प्रतिष्ठा की है। प्रारंभ में कृष्ण या बाल-कृष्ण अकेले थे, बाद में राधा और गोपियों को लिया गया, तथा राधा-वल्लभ संप्रदाय तक पहुँचते-पहुँचते राधा ही मुख्य हो गई, कृष्ण गौण हो गये। वस्तुतः विषय वस्तु का विकास-क्रम इन कवियों की बढ़ती हुई श्रृंगारिकता एवं रसिकता की प्रवृत्ति को सूचित करता है।

▶ राधा-कृष्ण एवं गोपियों की श्रृंगार लीला

3.3.2.3 भक्ति भावना

कृष्ण भक्त कवियों ने भक्ति के विभिन्न नव विकसित रूपों में से प्रेम-प्रधान रूपों को ही

मुख्यता प्रदान की है। 'रागानुराग' के भी विभिन्न भेद किये गये हैं जिनमें से इन्होंने मुख्यतः वात्सल्य, सख्य एवं माधुर्य भाव को स्वीकार किया है। माधुरी भाव की उपासना को अपनाते हुए भी इन में मीरा और सूरदास जैसे कुछ कवियों को छोड़कर- अपने आराध्य के प्रति प्रत्यक्ष रूप से आत्म-निवेदन बहुत कम किया है। वे प्रायः गोपियों के माध्यम से ही अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। वस्तुतः वे अपने आराध्य के प्रणय-क्रीड़ाओं और कृष्ण-लीलाओं का अवलोकन मात्र करते हैं।

▶ 'रागानुराग' के विभिन्न भेद

3.3.2.4 वात्सल्य रस की व्यंजना

पुष्टिमार्ग में प्रारंभ में बालकृष्ण की उपासना प्रचलित थी, अतः उस सम्प्रदाय के आश्रय में विभिन्न कवियों ने बालकृष्ण की क्रीडाओं एवं चेष्टाओं के रूप में वात्सल्य-रस की रंजना मार्मिक रूप में की है। इस क्षेत्र में सूरदास एवं परमानंददास को विशेष सफलता मिली है। उदाहरण के लिए सूरसागर की कुछ उक्तियाँ द्रष्टव्य हैं -

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो

मो सों कहत मोल को लीन्हों, तोहि जसुमति कब जायो।

****

▶ बालकृष्ण की क्रीडाओं का वर्णन

तू मोहीं को मारन सीखी, दाउहि कबहुँ न खीझै।

मोहन कौ मुख रिस समेत लखि, सुनि सुनि जसुमति खीझै।

3.3.2.5 श्रृंगार-रस की व्यंजना

कृष्ण और गोपियों के प्रेम-वर्णन में इन कवियों ने पूर्ण स्वच्छन्द दृष्टि का परिचय दिया है। कृष्ण और राधा का प्रेम सौंदर्य-जन्य है। जो धीरे-धीरे साहचर्य के द्वारा विकसित होता है। वृंदावन के सुन्दर मधुर प्राकृतिक वातावरण में उन्हें श्रृंगार-भावना के उद्दीपन की पर्याप्त सामग्री उपलब्ध हो जाती है। प्रेम की प्रारंभिक अवस्था में कृष्ण और गोपियों के बीच छेड़-छाड़ चलती है जो आगे चलकर गंभीर प्रणय-वेदना का रूप धारण कर लेती है। प्रेम की विह्वलता एवं तन्मयता का चित्रण कवियों ने सफलतापूर्वक किया है। यद्यपि संयोग-पक्ष के चित्रण में कहीं-कहीं अश्लीलता आ गई है। किन्तु विरहानुभूतियों की अभिव्यक्ति में इन्होंने पर्याप्त सहृदयता का परिचय दिया है। कृष्ण भक्त कवियों ने प्रेम की सभी अवस्थाओं एवं भाव -दशाओं का चित्रण सफलतापूर्वक किया है। यद्यपि अंत में नायकराज की उपेक्षा के कारण गोपियों के प्रणय की परिणति असफलता में होती है, पर इससे उनके रस-दशा के विकास में अधिक अन्तर नहीं पड़ता।

▶ प्रेम की विह्वलता एवं तन्मयता का चित्रण

3.3.2.6 गीति-शैली

इस परंपरा की कवियों ने मुख्यतः गीति-शैली का प्रयोग किया है, यद्यपि इसके कतिपय अपवाद भी मिलते हैं। इनके पदों में सामान्यतः गीति-काव्य के सभी तत्व-भावात्मकता, संगीतात्मकता, संक्षिप्तता, कोमलता आदि न्यूनाधिक मात्रा में मिलते हैं। किन्तु गीति-काव्य का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मीरा और सूरदास के काव्य में ही ढूंढे जा सकते हैं। नंददास के अनन्तर अन्य कवियों में गीति का शरीर संगीत ही- अधिक दिखाई पड़ता है, उसकी आत्मा गायब है। राधावल्लभ संप्रदाय के कवियों में भावात्मकता का स्थान इतिवृत्तात्मकता ने ले लिया है; अतः उन्हें सफल गीतिकार के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। फिर भी इन कवियों ने

▶ गीति-काव्य का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मीरा और सूरदास के काव्य में

हिन्दी के गीति भण्डार की समृद्धि करने में पर्याप्त योग दिया है।

3.3.2.7 भाषा शैली

▶ ब्रजभाषा का प्रयोग

कृष्ण भक्ति काव्य की भाषा ब्रज है। कृष्ण भक्ति काव्य धारा के कवि भाषा की दृष्टि से अत्यंत सशक्त माने जाते हैं। सूरदास ने अपने काव्य में ब्रजभाषा का प्रयोग किया है उनकी भाषा माधुर्य, सरसता, कोमलता आदि गुणों के कारण व्यापक, काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी। ब्रज भाषा को व्यापक काव्य की भाषा बनाकर इन्होंने अपने काव्य को सशक्त बनाया। नंददास को भी ब्रजभाषा का अच्छा ज्ञान था। इस प्रकार समस्त कृष्ण भक्ति काव्य में ब्रजभाषा का रूप देखने को मिलता है।

3.3.3 विविध सम्प्रदाय

वैष्णव भक्ति को विविध रूपों में स्थापित करनेवाले आचार्यों के युग ग्यारहवीं शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक स्वीकार किया जा सकता है। वैष्णव-भक्ति-तत्वों को समझने के लिए, हम यहाँ प्रमुख आचार्यों के सिद्धांतों को संक्षेप में चर्चा करना आवश्यक समझते हैं।

3.3.3.1 निंबार्क सम्प्रदाय

▶ निंबार्काचार्य को सुदर्शन चक्र का अवतार मानना

डॉ. भण्डारकर के अनुसार, निंबार्काचार्य की कालावधी 1926 ई. के आसपास मानी गई है। निंबार्काचार्य का मूल नाम निगमानंद था। इनका दार्शनिक सिद्धांत 'भेदाभेदवाद' या 'द्वैताद्वैतवाद' कहलाता है। इनके अनुसार 'जीव' अवस्था भेद से 'ब्रह्म' के साथ भिन्न भी है तथा अभिन्न भी है। जीव ब्रह्म का अंश है ब्रह्म अंशी है जीवन अणु अल्पज्ञ है। इसमें कृष्ण के वामांग में सुशोभित राधा के साथ कृष्ण की उपासना का विधान है। समस्त वस्तुओं का मूल स्रोत कृष्ण ब्रह्म ही है। भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए कृष्ण अवतार धारण करते हैं। ब्रह्मा और शिव भी कृष्ण की वंदना करते हैं। उनके पादारविंद को छोड़कर जीवों के लिए अन्य गति नहीं है। दैन्य भाव से उनकी कृपा प्राप्त होती है और फिर प्रेममूलक शक्ति द्वारा जीव का कल्याण होता है। इनका संप्रदाय रसिक या सनकादि है तथा इसमें राधा-कृष्ण के युगल उपासना का विधान है। यह भक्ति को ही मुक्ति का साधन मानते हैं तथा विष्णु के अवतार रूप कृष्ण इनके उपास्य हैं।

3.3.3.2 राधा वल्लभ संप्रदाय

▶ श्रीकृष्ण का उपास्य नाम राधावल्लभ

इस संप्रदाय के प्रवर्तक स्वामी हितहरिवंश जी हैं। इसका प्रवर्तन 1534 ई. में वृंदावन में हुआ था। इसमें प्रेम को ही भक्ति तथा समृद्धि का मूल आधार माना जाता है। इस सम्प्रदाय में न तो मुक्ति की कामना है, न ही मुक्ति का कोई स्थान है। इसमें साधनापरक कर्मकाण्डीय भक्ति का भी स्थान नहीं है। इसमें श्रीकृष्ण का प्रमुख स्थान नहीं है राधा ही प्रमुख है श्री कृष्ण अनुवांशिक रूप से वर्णित है किंतु इस वर्णन में कृष्ण के भीतर सभी शक्तियों का समाहार अवश्य लक्षित होता है। इस संप्रदाय में श्रीकृष्ण का उपास्य नाम राधावल्लभ है। इस संप्रदाय के मंदिरों में राधा का विग्रह कृष्ण से नहीं होता श्री कृष्ण की वाम भाग में वस्त्र निर्मित गिद्दी होते हैं जिसके ऊपर स्वर्ण पत्र पर श्री राधा शब्द अंकित रहता है।

3.3.3.3 हरिदासी संप्रदाय (सखी सम्प्रदाय)

इसका एक अन्य नाम सखी संप्रदाय भी है। इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी हरिदास जी हैं। स्वामी हरिदास अपने समय के महान संगीतज्ञ भी थे। स्वामी हरिदास ने नित्य बिहारी कृष्ण की निकुंज-लीलाओं का गान किया है। इस संप्रदाय में निकुंजबिहारी कृष्ण सर्वोपरि हैं। यह कृष्ण न तो सृष्टि-रचना-प्रक्रिया में पड़ते हैं, न प्रभुता धारण कर संसार के क्रियाकलाप

प्रवर्तक स्वामी हरिदास

के प्रति दायित्व रखते हैं। इस संप्रदाय के सिद्धांतों का परिचय 'निजमत सिद्धांत' नामक ग्रंथों में मिलता है, जिसकी रचना किशोरदास ने की है। स्वामी हरिदास जी के उपास्य देव निकुंजबिहारी हैं।

3.3.3.4 चैतन्य संप्रदाय(गौड़ीय सम्प्रदाय)

प्रवर्तक-चैतन्य महाप्रभु

इस संप्रदाय को गौड़ीय संप्रदाय भी कहा जाता है। इस संप्रदाय के प्रवर्तक चैतन्य महाप्रभु हैं। चैतन्य महाप्रभु का जन्म काल 1486-1533 ई. में माना जाता है। इनका जन्म बंगाल के नवद्वीप नामक स्थान पर हुआ। इनका बचपन का नाम विश्वंभर था। चैतन्य महाप्रभु ने श्रीकृष्ण को ब्रजेंद्रकुमार कहा है और यह माना है कि वे ब्रज में गोलोक की लीलाओं सहित विहार करते हैं। वे परमतत्व, पूर्णज्ञान तथा पूर्ण आनंद रूप हैं। श्रीकृष्ण की अनंत शक्तियाँ है, उनमें एक आह्लादिनी शक्ति है। राधा इसी शक्ति का रूप है शायद अन्य चरितामृतम राधा और कृष्ण के स्वरूप तथा शक्तियों का बड़े विस्तार के साथ वर्णन मिलता है, जो गौड़ीय संप्रदाय को स्पष्ट करने में समर्थ हैं। इसमें ब्रजेंद्रकुमार कृष्ण और गोलोकवासी कृष्ण में अभिन्नता स्वीकार की गयी है और कृष्ण की किशोरावस्था का ही वर्णन है, अतः लीलाओं का आधार कांता-सम्प्रदाय माधुर्य भाव है।

3.3.4 अष्टछाप

पुष्टिमार्गीय भक्ति सम्प्रदाय

हिन्दी प्रदेश में कृष्ण भक्ति को दार्शनिक आधार देने वालों में वल्लभाचार्य का नाम सबसे ऊपर है। वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्गीय भक्ति की परंपरा स्थापित की जिसके अंतर्गत कृष्ण को सर्वोच्च तथा सच्चिदानंद स्वरूप स्वीकार करते हुए उनके अनुग्रह को महत्व दिया गया। वल्लभाचार्य ने पूरे देश में अपने मत का प्रचार किया और कृष्ण की जन्मभूमि ब्रज प्रदेश में अपने शिष्य पूरनमल खत्री की मदद से गोवर्धन पर्वत पर श्रीनाथजी का विशाल मंदिर बनवाया और वहाँ भजन कीर्तन की परंपरा प्रारंभ की। उन्होंने अपने शिष्यों को श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के आधार पर कृष्ण के लीला गान का निर्देश दिया। श्री वल्लभाचार्य ने जिस पुष्टिमार्गीय भक्ति सम्प्रदाय की स्थापना की थी उसका जिन हिन्दी भक्त कवियों द्वारा पल्लवन किया गया, उन्हें अष्टछाप के कवि कहा जाता है। यों तो पुष्टिमार्ग को स्वीकार करने वाले अनेक भक्त उस समय विद्यमान थे, किंतु जिन आठ भक्त कवियों पर गोस्वामी विट्ठलनाथ ने अपने आशीर्वाद की छाप लगायी थी, वे 'अष्टछाप' या 'अष्टसखा' के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन आठ भक्त कवियों में चार वल्लभाचार्य के शिष्य- कुंभनदास, सूरदास, परमानंद और कृष्णदास तथा विट्ठलनाथ के चार शिष्य गोविंददास, नंददास, छीतस्वामी और चतुर्भजदास थे। अष्टछाप की स्थापना सन् 1565 हुई। ये आठों कवि कृष्ण के आठ सखा माने गए, तथा इनका कार्य अष्टयाम सेवा तथा भजन-कीर्तन करना था।

अष्टछाप के कवि	
वल्लभाचार्य के चार शिष्य कुंभनदास, सूरदास, परमानंद, कृष्णदास	विट्ठलनाथ के चार शिष्य गोविंददास, नंददास, छीतस्वामी, चतुर्भजदास

3.3.5 अष्टछाप के कवि एवं उनकी रचनाएँ

3.3.5.1 कुम्भनदास

कुंभन दास का जन्म गौरवा छत्रिय कुल में हुआ था। कुंभन दास जी विवाहित थे। और

उनका विशाल परिवार का 7 पुत्र थे जिसमें सबसे छोटे चतुर्भुजदास को छोड़कर अन्य सभी कृषि कार्य में लगे रहते थे। ग्रहस्थ होते हुए भी अनासक्त थे। और कृष्ण भजन में लीन रहने वाले राधा वृत्ति के पुरुष थे। उन्होंने 1492 ई. में महाप्रभु वल्लभाचार्य से दीक्षा ग्रहण की थी उनके कंठ स्वर से प्रसन्न होकर उन्हें कीर्तन गान का दायित्व सौंपा गया था। किंवदंती है कि किसी गायक ने एक बार उनका कोई सुंदर पद बादशाह अकबर को सुनाया, जिसे सुनकर वे इतने मुग्ध हुए कि उन्होंने इस पद के रचयिता से ही पद सुनना चाहा और कुंभनदास जी को सीकरी आने का निमंत्रण दिया। कुंभनदास विरक्त भाव से सीकरी चले गए लेकिन उन्होंने सम्राट के समक्ष जो पद गाकर सुनाया वह उनके अनासक्त भाव का सूचक है:

भक्तन को कहा सीकरी सों काम।
आवत जात पन्हैया टूटी बिसरी गयो हरिनाम।
जाको देखे दुख लागै ताकौ करन परी परनाम।
कुंभनदास लाल गिरिधर बिन यह सब झूठो धाम।।

▶ ग्रहस्थ होते हुए भी अनासक्त

उनके द्वारा रचित किसी स्वतंत्र ग्रंथ का उल्लेख नहीं मिलता-कुछ पद रागकल्पद्रुम, रागरत्नाकर, वर्षोत्सवकीर्तन, वसंतधमारकीर्तन आदि में संकलित हैं। कुंभनदास की काव्य भाषा साधारण ब्रजभाषा है, जो उस समय, गोवर्धन के समीप बोलचाल की भाषा रही होगी। संस्कृत अथवा अन्य भाषाओं का प्रभाव भी न्यून मात्रा में है।

3.3.5.2 परमानंददास

परमानंददास अष्टछाप के कवियों में प्रमुख स्थान रखते हैं। इनका जन्म 1493 ई. में कन्नौज के एक निर्धन कान्याकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ। इन्होंने गृहस्थाश्रम में प्रवेश नहीं किया। इन्होंने वल्लभाचार्य से दीक्षा लेकर बाललीला संबंधी पद योजना शुरू की। इनकी रचनाओं का प्रकाशन 'परमानंद सागर', 'परमानंद के पद' और 'वल्लभ संप्रदायी कीर्तन दर्प' संग्रह नाम से हुआ है। इनके पद सर्वाधिक बाललीला विषयक है। वियोग श्रृंगार के वर्णन में परमानंददास अद्भुत सफलता प्राप्त की है। राधा-कृष्ण के नख-शिख वर्णन में भी इन्होंने रुचि ली। अष्ट छाप के कवियों में काव्यसौष्ठव की दृष्टि से सूरदास और नंददास के बाद इन्हीं का स्थान है।

▶ वल्लभाचार्य से दीक्षा

3.3.5.3 कृष्णदास

कृष्णदास अधिकारी के नाम से विख्यात अष्टछापी भक्त कवि के संबंध में अभी तक प्रामाणिक जानकारी प्राप्त नहीं हुई है। डॉ. दीनदयाल गुप्त ने अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय ग्रंथों में इनका परिचय लिखते हुए 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' और दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता को ही प्रमाण माना है। उनके लेखानुसार कृष्णदास 'कुनबी' जाति के थे, जो शूद्र जातियों में परिगणित की जाती है। इनका जन्म गुजरात में राजनगर राज्य (अहमदाबाद) के चिलोतरा गाँव में 1496 ई. में हुआ था। इनके पिता गाँव के मुखिया थे। कृष्णदास बाल्यवस्था में घर छोड़कर ब्रज में आ गए थे। अपनी बुद्धि और भक्ति के कारण श्रीनाथजी के मंदिर में 'अधिकारी' पद पर आसीन हुए। इनके गुजराती होने का प्रमाण यह है कि इनका लेखन-व्यापार गुजराती भाषा में ही होता था। धीरे-धीरे ब्रजभाषा का इन्होंने अभ्यास किया और उसमें काव्यरचना भी करने लगे। गोस्वामी विट्ठलनाथ जी इनकी कुशाग्र बुद्धि और प्रतिभा के बड़े प्रशंसक थे। इनकी प्रबंधपटुता के कारण इन्हें मंदिर के प्रबंध का दायित्व ही सौंपा गया

संगीत के मर्मज्ञ एवं सुकवि

सूर काव्य का मुख्य विषय- कृष्ण भक्ति

मेरुदंड पुष्टिमार्गीय भक्ति

गोस्वामी विट्ठलनाथ से विधिवत पुष्टिमार्ग की दीक्षा ग्रहण

था, सेवा और कीर्तन से इनका प्रारंभ में कोई संबंध नहीं था। कृष्णदास काव्य और संगीत के मर्मज्ञ होने के साथ सुकवि गायक भी थे। इन्होंने बाललीला, राधाकृष्ण प्रेमप्रसंग, रूप सौंदर्य, आदि का बड़ा ही मनोहारी वर्णन किया है। कृष्णा दास जी के पदों की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है।

इनका कोई ग्रैंथ नहीं मिलता ज्यादातर फुटकल पद ही उपलब्ध है।

3.3.5.4 सूरदास

हिन्दी साहित्य में कृष्ण भक्ति की सादर धारा को प्रवाहित करने वाले कवियों में सूरदास का स्थान सर्वोच्च है। चौरासी वैष्णवन की वार्ता के अनुसार वे दिल्ली के निकट सीधी के सारस्वत ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए थे। इनका जन्म 1478 ई. तथा निधन 1583 ई. में माना जाता है। अधिकांश विद्वानों ने दिल्ली के निकट ब्रज की ओर स्थित 'सीही' नामक गाँव को भी सूरदास का जन्म माना है। उनके जन्मांध होने या बाद में अंधत्व प्राप्त करने के विषय में अनेक किवदंतियाँ फैली हुई हैं। 'सूरसागर' और 'साहित्य लहरी' उनकी श्रेष्ठ कृतियाँ हैं। 'सूरसागर' की रचना भागवत की पद्धति पर द्वादश स्कधों में हुई है। 'साहित्य लहरी' सूरदास के सुप्रसिद्ध दृष्टकूट पदों में है। सूर काव्य का मुख्य विषय कृष्ण भक्ति है। भागवत पुराण को उपजीव्य मानकर उन्होंने राधाकृष्ण की अनेक लीलाओं का वर्णन सूरसागर में किया है। सूर की भक्ति पद्धति का मेरुदंड पुष्टिमार्गीय भक्ति है।

भगवान की भक्त पर कृपा का नाम ही पोषण है।

'पोषणं तदनुग्रहः'

सूर की समस्त रचना को पद रचना कहना ही समीचीन है। ब्रजभाषा के अग्रदूत सूरदास ने इस भाषा को जो गौरव गरिमा प्रदान की, उसके परिणाम स्वरूप ब्रजभाषा अपने युग में काव्य भाषा के राजसिंहासन पर आसीन हो सका। वल्लभाचार्य के शिष्य बनने के बाद वे चंद्रसरोवर के समीप पारसोली गाँव में रहने लगे। इनकी मृत्यु पर विट्ठलनाथ जी ने शोकाकुल होकर कहा था 'पुष्टिमारक का जहाज जात है सो जाको कछु लेनो होय सो लेऊ।' इनकी शिक्षा आदि के बारे में कहीं कोई उल्लेख नहीं है।

3.3.5.4 गोविंद स्वामी

गोविंद स्वामी का जन्म राजस्थान के भरतपुर राज्य के आंतरी नामक गाँव में 1505 ई. में हुआ था। संसार से वैराग्य के पश्चात यह ब्रजमंडल के महावन नामक स्थान में आकर बस गए और वहीं रहकर भजन कीर्तन में लीन रहने लगे। 1553 ई. में इन्होंने गोस्वामी विट्ठलनाथ से विधिवत पुष्टिमार्ग की दीक्षा ग्रहण की और अष्टछाप में सम्मिलित हो गए। पुष्टि संप्रदाय की दीक्षा के उपरांत यह महावन छोड़कर गोवर्धन चले आए और वही स्थायी रूप से बस गए। जहाँ ये रहते थे, वह स्थान गोविंद स्वामी की 'कदमखण्डी' के नाम से आज भी प्रसिद्ध है। इनके बारे में एक किवदंती प्रसिद्ध है कि यह अकबारी दरबार के प्रसिद्ध गायक तानसेन के पास जाया करते थे, उन्हीं से इन्होंने पद गायन की शिक्षा प्राप्त की। गोस्वामी ने किसी स्वतंत्र ग्रंथ का प्रणयन नहीं किया। भजन कीर्तन के लिए जो पद वे समय-समय पर लिखते थे, उन्हीं का संग्रहण गोविंदस्वामि के नाम से प्रसिद्ध है। इनके काव्य की भाषा ब्रज है किंतु उसमें लालित्य सौष्ठव वैसा नहीं जैसा सूरदास और नंददास की काव्य में मिलता है। इन्होंने मुख्यतः राधा-कृष्ण की श्रृंगार लीला विषय पदों की रचना की है।

1585 ई. में गोवर्धन में रहते हुए ही उनका देहावसान हो गया।

3.3.5.5 छीतस्वामी

छीतस्वामी मथुरा के चतुर्वेदी ब्राह्मण थे। इनका जन्म 1515 ई. में हुआ था। इनके पद-रचना को देख कर गोस्वामी विट्ठलनाथ ने इन्हें अष्ठछाप में सम्मिलित कर लिया। पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने के बाद ये गोवर्धन के निकट पूँछरी नामक स्थान पर एक तमाल वृक्ष की छाया में रहने लगे थे। यौवनावस्था में उद्दण्ड प्रवृत्ति के कारण वे लड़ाई-झगड़े के लिए बदनाम थे। और छीतू चौबे नाम से मथुरा के उदंड लोगों में इनका स्थान अग्रणी था। लेकिन प्रौढावस्था प्राप्त होने पर उतने ही गंभीर और विरक्त हो गऐ। काव्य और संगीत में इनकी विशेष रुचि थी अतः इनका सारा समय इन्हीं कार्यों में व्यतीत होता था। छीतस्वामी का कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं मिलता। कीर्तन के लिए इन्होंने जिन पदों की रचना की वहीं वर्तमान में 'पदावली' के नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें लगभग 200 पद संकलित हैं।

- छीतू चौबे नाम से प्रसिद्ध

3.3.5.6 चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि कुंभनदास के सबसे छोटे पुत्र थे। इनका जन्म 1530 ई. में गोवर्धन के समीप जमुनावती गाँव में हुआ था। वंश-परंपरागत खेतीबाड़ी से विमुख रहकर उनका ध्यान भजन-कीर्तन में अधिक रहता था। चतुर्भुजदास शैशवकाल में ही काव्य रचना करने लगे थे। 1585 ई. में उनका देहावसान हो गया इनका कोई स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध नहीं है स्फुट पदों को ही 'चर्तुभुज-कीर्तन-संग्रह', 'कीर्तनावली' और 'दानलीला' शीर्षकों में प्रकाशित किया गया है। इनकी रचना में श्रृंगार की छटा विद्यमान है। श्रीनाथजी के मंदिर में जिस प्रकार के पद गाये थे उन्हीं के अनुकरण पर यह पद लिखे थे।

- प्रसिद्ध कवि कुंभनदास के सबसे छोटे पुत्र

3.3.5.7 नंददास

अष्टछाप के कवियों में नंददास का स्थान काव्य सौष्ठव की दृष्टि से सूरदास के बाद समझना चाहिए। नंददास आचार्य विट्ठलनाथ के शिष्य और तुलसीदास के छोटे भाई माने गए हैं, किंतु आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इन्हें तुलसी का भाई मानने से इनकार किया है। अष्टछाप के कवि नंददास के लेखक डॉ. कृष्णदेव झारी ने इनका जन्म सन् 1533 में तथा मृत्यु सन् 1583 नहीं मानी है। ऐसा माना जाता है कि नंददास एक खत्री युवती से अत्यधिक प्रेम करते थे। एक बार वह युवती ब्रिज आई तो यह भी उनके पीछे-पीछे चल पड़े। यहीं इनकी मुलाकात आचार्य विट्ठलनाथ से हुई। आचार्य विट्ठलनाथ ने उनका मोहभंग कर इन्हें कृष्ण-भक्ति के प्रति उन्मुख किया और आजीवन कृष्ण के गुणगान में तल्लीन रहे। नंददास जी ने विधिवत शास्त्रानुशीलन किया था। उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। 'रास पंचाध्यायी' उनकी श्रेष्ठ कृतियों में गिनी जाती है। नंद दास द्वारा रचित ग्रंथ इस प्रकार है रास पंचाध्यायी, सिद्धांत-पंचाध्यायी, रूपमंजरी, अनेकार्थ मंजरी, रुक्मणी मंगल आदि। इन ग्रंथों में 'रस पंचाध्यायी' और 'भँवर गीत' की विशेष प्रसिद्धि रही है।

- 'रास पंचाध्यायी' उनकी श्रेष्ठ कृति

3.3.6 अन्य कृष्ण भक्त कवि

3.3.6.1 मीराबाई

कृष्णभक्ति शाखा की हिन्दी की महान कवयित्री मीराबाई का जन्म संवत् 1573 में जोधपुर में चोकड़ी नामक गाँव में हुआ था। इनका विवाह उदयपुर के महाराणा कुमार भोजराज जी के साथ हुआ था। विवाह के थोड़े ही दिन के बाद ही पति का स्वर्गवास हो गया था। पति

के परलोकवास के बाद इनकी भक्ति दिन-प्रति-दिन बढ़ती गई। ये मंदिरों में जाकर वहाँ मौजूद कृष्णभक्तों के सामने कृष्णजी की मूर्ति के आगे नाचती रहती थीं।

मीरा की भक्ति में माधुर्य-भाव काफी हद तक पाया जाता था। वह अपने इष्टदेव कृष्ण की भावना प्रियतम या पति के रूप में करती थी।

बसो मेरे नैनन में नंदलाल।
मोहनी मूरति, साँवरि, सुरति नैना बने विसाल।।
अधर सुधारस मुरली बाजति, उर बैजंती माल।
क्षुद्र घंटिका कटि-तट सोभित, नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भक्त बछल गोपाल।।

मीराबाई रैदास को अपना गुरु मानते हुए कहती हैं।
गुरु मिलिया रैदास दीन्ही ज्ञान की गुटकी।

इन्होंने अपने बहुत से पदों की रचना राजस्थानी मिश्रित भाषा में ही किया है। इसके अलावा कुछ विशुद्ध साहित्यिक ब्रजभाषा में भी लिखा है। इन्होंने जन्मजात कवियित्री न होने के बावजूद भक्ति की भावना में कवियित्री के रूप में प्रसिद्धि प्रदान की। मीरा के विरह गीतों में समकालीन कवियों की अपेक्षा अधिक स्वाभाविकता पाई जाती है। इन्होंने अपने पदों में श्रृंगार और शांत रस का प्रयोग विशेष रूप से किया है।

▶ मीराबाई के गुरू रैदास

मीराबाई ने चार ग्रंथों की रचना की- 'नरसी का मायरा', 'गीत गोविंद टीका', 'राग गोविंद', 'राग सोरठ के पद'

इसके अलावा मीराबाई के गीतों का संकलन 'मीराबाई की पदावली' नामक ग्रन्थ में किया है।

3.3.6.2 रसखान

रसखान के जन्म के संबंध में विद्वानों में मतभेद पाया जाता है। अनेक विद्वानों ने इनका जन्म संवत् 1615 ई. माना है और कुछ विद्वानों ने 1630 ई. माना है। रसखान स्वयं बताते हैं कि गदर के कारण दिल्ली श्मशान बन चुकी थी, तब उसे छोड़कर वे ब्रज चले गये। ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर पता चलता है कि उपर्युक्त गदर सन् 1613 ई. में हुआ था। उनकी बात से ऐसा प्रतीक होता है कि वह गदर के समय व्यस्क थे और उनका जन्म गदर के पहले ही हुआ होगा। रसखान का जन्म संवत् 1590 ई. मानना अधिक समीचीन प्रतीत होता है। भवानी शंकर याज्ञिक ने भी यही माना है। अनेक तथ्यों के आधार पर उन्होंने अपने इस मत की पुष्टि भी की है। ऐतिहासिक ग्रंथों के आधार पर भी यही तथ्य सामने आता है। यह मानना अधिक प्रभावशाली प्रतीत होता है कि रसखान का जन्म 1590 ई. में हुआ होगा।

मुस्लिम कवियों में रसखान का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। इन्होंने गोस्वामी विठ्ठलनाथ जी से बल्लभसंप्रदाय के अंतर्गत दीक्षा ली। मूल गोसाई चरित में गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस की कथा सर्वप्रथम रसखान को सुनाने का उल्लेख है।

▶ रसखान की काव्य भाषा शुद्ध परिमार्जित एवं साहित्य ब्रज

इनकी दो कृतियाँ उपलब्ध है- ‘प्रेमवाटिका’, ‘दानलीला’। सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना संकलन ‘सुजान रसखान’ है। प्रेम वाटिका में कवि ने राधा-कृष्ण को प्रेमोद्यान के मालिन-माली मानकर प्रेम के गूढ़ तत्व का निरूपण किया है। यह 53 दोहों की लघु कृति है। दानलीला 11 दोहों की छोटी-सी कृति है। इसमें राधा-कृष्ण संवाद हैं। रसखान की काव्य भाषा शुद्ध परिमार्जित एवं साहित्य ब्रज है। इन्होंने अपने काव्य में श्रृंगार एवं वात्सल्य रस का प्रयोग किया है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

हिन्दी साहित्य में कृष्णभक्ति की सतत धारा को प्रवाहित करने वाले कवियों में सूर का स्थान महत्वपूर्ण है। उन्होंने भागवत पुराण का आधार ग्रहण कर सूरसागर, साहित्य लहरी एवं सूरसारावली की रचना की। सूर के अतिरिक्त अष्ट छाप के कवियों में कुम्भनदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, छीतस्वामी, गोविन्द स्वामी, नन्ददास, चतुर्भुजदास आदि ने अपना उल्लेखनीय योगदान दिया है। भगवान श्रीकृष्ण का बाल एवं किशोर रूप ही इन कवियों को आकर्षित कर पाया है। वात्सल्य एवं श्रृंगार के सर्वोत्तम भक्त-कवि सूरदास के पदों का परवर्ती हिन्दी साहित्य पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। इस शाखा के कवियों ने प्रायः मुक्तक काव्य ही लिखा है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. कृष्णकाव्य के अर्थ एवं उद्भव पर आलेख लिखिए।
2. कृष्ण भक्ति के विविध संप्रदायों पर टिप्पणी लिखिए।
3. कृष्ण भक्ति की प्रमुख विशेषताओं को समझाइए।
4. अष्टछाप पर टिप्पणी लिखिए।
5. वल्लभ-संप्रदाय पर टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास - गुलाबराय
2. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. गणपतिचन्द्र गुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास
2. हिंदी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
3. हिंदी साहित्य का इतिहास - संपादक -डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
4. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 4

तुलसीदास, तुलसी-प्रमुख रचनाएँ, तुलसी की समन्वय साधना, रामचरितमानस, अयोध्या काण्ड(6-10)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- तुलसीदास के काव्यसौष्ठव को समझता है
- रामचरितमानस के बारे में समझता है
- अयोध्याकाण्ड के बारे में अवगत हो जाता है
- सूरदास के काव्यसौष्ठव को समझता है
- विनय पद से परिचित हो जाता है
- भ्रमरगीत के बारे में समझता है

Background / पृष्ठभूमि

भक्तिकाल की सगुण भक्ति धारा में राम भक्ति काव्य की लंबी परंपरा रही है। राम के जीवन से संबंधित पहला महाकाव्य वाल्मीकि रामायण को स्वीकार किया जाता है अतः राम काव्य का उद्‌भव वाल्मीकि रामायण से शुरू हुआ है। पश्चात रामभक्ति रामानंद द्वारा विकसित होकर हिन्दी भक्ति साहित्य में प्रवाहित हुई। तुलसी पूर्व विष्णुदास, अग्रदास, ईश्वरदास आदि ने राम कथा लिखी है, किंतु राम काव्य के प्रमुख प्रवर्तक तुलसी ही रहे हैं। वैष्णव भक्ति के इतिहास में रामोपासना का अस्तित्व कृष्णोपासना से अधिक प्राचीन माना जाता है। यद्यपि रामानुजाचार्य की 'श्रीसंप्रदाय' में राम को नारायण और विष्णु का रूप माना गया है, परंतु रामभक्ति के वास्तविक प्रवर्तक रामानंद जी माने जाते हैं। उस युग में रामानंद जैसा महान गुरु और कोई भी नहीं दीखता। रामानंद के समकालीन महाराष्ट्रीय संत नामदेव और त्रिलोचन ने रामोपासना का प्रचार किया था, परंतु इसका रूप निर्गुण-उपासना का ही रहा था। इसके विपरीत रामानंद ने रामभक्ति को लोक मर्यादानुकूल सदाचार-मुल्क धर्म का रूप देकर उसे जनता में अधिक लोकप्रिय बना दिया था। रामचरित में मर्यादा का प्राधान्य था, अतः रामोपासक राम के मर्यादा-पुरुषोत्तम आदर्श रूप को ग्रहण कर उसका अनुसरण कर सकते थे। इसलिए राम भक्ति का अधिक प्रचार हुआ। कृष्ण-चरित्र में अति मानवीय विषयों का आधिक्य था, इसलिए आरंभ में लोक उसे भली प्रकार न अपना सका, क्योंकि उसमें लौकिक आदर्शों का अभाव था। इसका प्रमाण यह है कि आज भी हिन्दू-समाज में तुलसी और उनका 'मानस' जितना लोकप्रिय है, उतना सूर-साहित्य नहीं है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

रामचरितमानस, 'श्रीसंप्रदाय', अयोध्याकाण्ड, भ्रमरगीत परंपरा, लोकनायक

Discussion / चर्चा

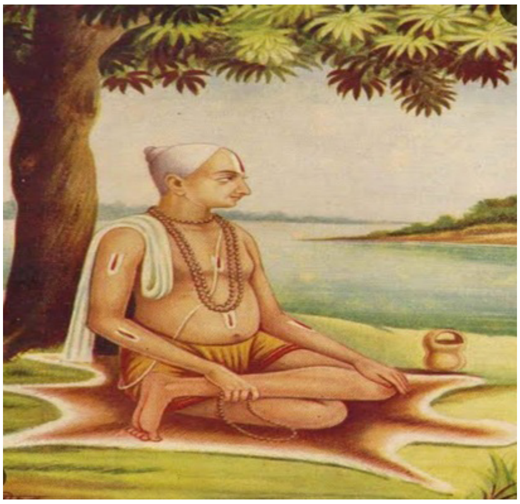

3.4.1 तुलसीदास

> ▶ श्रीराम के महान भक्त

तुलसीदास जी महान लोकनायक और श्रीराम के महान भक्त थे। इनके द्वारा रचित 'रामचरितमानस' संपूर्ण विश्व साहित्य के अद्भुत ग्रंथों में से एक है। यह एक अद्वितीय ग्रंथ है, जिसमें भाषा, उद्देश्य, कथावस्तु, संवाद एवं चरित्र चित्रण का बड़ा ही मोहक चित्रण किया गया है।

> ▶ विभिन्न मतों एवं संप्रदायों में समन्वय के उद्देश्य

इनके इस ग्रंथ में श्रीराम के चरित्र का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। मानव जीवन के सभी उच्च आदर्शों का समावेश करके इन्होंने श्रीराम को मर्यादा पुरुषोत्तम बना दिया है। तुलसीदास जी ने सगुण-निर्गुण, ज्ञान-भक्ति, शैव-वैष्णव और विभिन्न मतों एवं संप्रदायों में समन्वय के उद्देश्य से अत्यंत प्रभावपूर्ण भावों की अभिव्यक्ति की। जार्ज ग्रियर्सन जैसे भाषाविद् ने इन्हें बुद्धदेव के बाद भारत का सबसे बड़ा लोकनायक कहा था। उनकी महानता का आकलन करते हुए ब्रिटीश इतिहासकार वी स्मिथ ने उन्हें मुगल काल का सबसे महान व्यक्ति, अकबर महान से भी महान बताया था। मध्ययुग के भक्त कवि नाभादास ने इन्हें कलिकाल का वाल्मीकी कहा था। तुलसीदास की प्रमुख कृतियाँ हैं- 'रामललानहछू', 'बरवैरामायण', 'वैराग्यसन्दीपनी', 'पार्वतीमंगल', 'जानकीमंगल', 'रामाज्ञाप्रश्न', 'दोहावली', 'कवितावली', 'गीतावली', 'कृष्णगीतावली', 'विनयपत्रिका' आदि।

3.4.1.1 रामचरितमानस

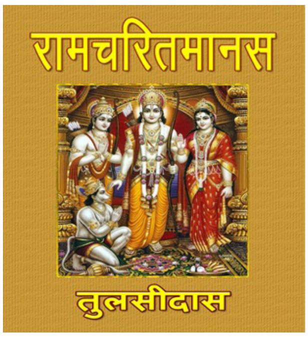

‘रामचरितमानस’ अवधी भाषा में गोस्वामी तुलसीदास द्वारा 16 वीं सदी में रचित प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसकी रचना में 2 वर्ष 7 माह 26 दिन का समय लगा था और उन्होंने इसे संवत् 1633 (1576 ईस्वी) के मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में राम विवाह के दिन पूर्ण किया था। इस ग्रन्थ को अवधी साहित्य (हिन्दी साहित्य) की एक महान कृति माना जाता है। इसे सामान्यतः ‘तुलसी रामायण’ या ‘तुलसीकृत रामायण’ भी कहा जाता है। रामचरितमानस भारतीय संस्कृति में एक विशेष स्थान रखता है। रामचरितमानस की लोकप्रियता अद्वितीय है। उत्तर भारत में ‘रामायण’ के रूप में बहुत से लोगों द्वारा प्रतिदिन पढ़ा जाता है। शरद नवरात्रि में इसके सुन्दर काण्ड का पाठ पूरे नौ दिन किया जाता है। तुलसी की अक्षय कीर्ति का आधार उनके द्वारा रचित महाकाव्य रामचरितमानस है।

▶ अद्वितीय लोकप्रियता

रामचरितमानस की रचना का प्रारंभ अयोध्या में संवत् 1574 ई. में हुआ। इसका कुछ अंश विशेषतः किष्किंधाकाण्ड काशी में रचा गया। रामचरितमानस की रचना पूरी करने के बाद तुलसी काशी में रहने लगे थे तथा अनेक शास्त्रों में विद्वानों से उनका शास्त्रार्थ हुआ था। प्रसिद्ध विद्वान मधुसूदन सरस्वती से भी इनका शास्त्रार्थ हुआ था और उन्होंने तुलसी की प्रशंसा की थी। रामचरितमानस की रचना अवधी भाषा में दोहा-चौपाई शैली में हुई है। यह राम कथा पर आधारित महाकाव्य है।

▶ ‘रामचरितमानस’ की रचना अवधी भाषा में दोहा-चौपाई शैली में

रामचरितमानस में सात काण्ड हैं-			
1 बालकाण्ड	2 अयोध्याकाण्ड	3 अरण्यकाण्ड	4 किष्किन्धाकाण्ड
5 सुन्दरकाण्ड	6 लंकाकाण्ड (युद्धकाण्ड)	7 उत्तरकाण्ड	

रामचरितमानस के राम लोकरक्षक हैं। वे शक्ति, शील एवं सौंदर्य के भंडार हैं- रचना कौशल, प्रबंध पटुता, सहृदयता की दृष्टि से रामचरितमानस हिन्दी काव्य में सर्वश्रेष्ठ है। इसमें कथा काव्य के सभी अवयवों का उचित सामंजस्य है। रामचरितमानस की सबसे बड़ी विशेषता है: कवि द्वारा कथा के मार्मिक स्थलों की पहचान करना। ऐसे मार्मिक प्रसंग है: पुष्पवाटिका में सीता राम का मिलन, राम वनागमन, दशरथ मरण, चित्रकूट प्रसंग, वन मार्ग में राम, लक्ष्मण शक्ति आदि। रामचरितमानस में प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग है। कहीं कोमल तो कहीं कठोर वर्ण योजना जो पूर्णतया रसानुकूल भी है। भाषा में आनुप्रासिकता एवं अलंकारिकता भी दिखाई पड़ती है।

▶ लोकरक्षक राम

रामचरितमानस में श्रृंगार रस का शिष्ट एवं मर्यादित वर्णन है। इस ग्रंथ में तुलसी श्रेष्ठ कवि के साथ-साथ एक उपदेशक के रूप में भी सामने आते हैं। रामचरितमानस में सर्वत्र समन्वय की विराट चेष्टा की गई है। शैव और वैष्णव का समन्वय, निर्गुण और सगुण का सामान्य, ज्ञान और शक्ति का समन्वय, राजा और प्रजा का समन्वय, सब कुछ इस ग्रंथ में है। इसलिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है- ‘लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय करने का अपार धैर्य लेकर आया हो। उनका सारा काव्य सामान्य की विराट चेष्टा है।’

▶ श्रृंगार रस का शिष्ट एवं मर्यादित वर्णन

3.4.2 अयोध्या काण्ड

राम का निर्वासन प्रसंग ही ‘अयोध्याकांड’ की कथावस्तु का मूल आधार है। यह कथावस्तु ‘वाल्मीकि रामायण’ से लेकर ‘रामचरितमानस’ तक अनेक रूपों तथा रूपान्तरों के क्रम में विकसित दिखाई पड़ती है। सामान्य रूप से मानस के अयोध्याकांड की कथावस्तु का आधार

▶ कथावस्तु का मूल आधार

वाल्मीकी रामायण, अध्यात्म रामायण, महानाटक (हनुमान्नाटक) आदि हैं।

अयोध्या काण्ड अपने में एक संपूर्ण प्रबंध काव्य है। रामचरितमानस के अंश के रूप में होते हुए भी इसे यदि उससे पृथक रख दिया जाए तो इसके स्वरूप, रचनादर्श, प्रबंध विधान आदि पर किसी प्रकार का आघात नहीं पड़ता। ऐसा विद्वानों का अनुमान है कि गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस के रचनाक्रम में सर्वप्रथम इसी काण्ड की रचना की थी। डॉ. माधव प्रसाद गुप्त की इस संबंध में टिप्पणी है कि 'यह काण्ड वस्तुतः जितना सुगठित है उतना कोई अन्य काण्ड ही नहीं है और ग्रंथ का कोई अन्य अंश भी नहीं है।' तुलसीदास ने कुछ अपवादों को छोड़कर अयोध्या काण्ड की कथावस्तु को वाल्मीकि रामायण पर आधारित किया है। और उनकी रचना का मूल दृष्टिकोण धार्मिक न होकर साहित्यिक रहा है। अयोध्या काण्ड की संपूर्ण कथा दो भागों में विभक्त की जा सकती है।

1 राम कथा

2 भरत कथा

▶ अयोध्या काण्ड की कथावस्तु

मानस के अयोध्या काण्ड के उत्तरार्ध में प्राप्त राम कथा का मन्तव्य भरत कथा से पूर्णतः भिन्न है। श्रीराम का मानवीय मूल्यों के लिए निरंतर संघर्ष और उसकी तुलना में क्षुद्र वासनात्मक मूल्यों की अपेक्षा इस प्रारंभिक खण्ड की मूल उपलब्धि है।

संपूर्ण रामकथा की रचना कभी मानवीय धरातल पर करता है। प्रारंभ में वह इसकी स्पष्ट व्यंजना नहीं देना चाहता कि श्रीराम का अवतरण हुआ है। मानवीय धरातल पर वृद्ध पिता के रूप में दशरथ राज्याभिषेक के लिए स्वीकृति देते हैं। गुरु की आज्ञा है, परिजनों एवं पूराजनों का अगाध प्रेम है। इस संपूर्ण राज्याभिषेक के हर्ष तथा उल्लास भरे वातावरण को अन्यता देवगण अपने षड्यंत्र से कष्टकारी बना देते हैं। मन्थरा के दांवपेंच तथा कैकेयी की कुमंत्रणा से संपूर्ण आनन्द विषाद में परिणत हो उठता है। शोक में डूबी हुई अयोध्या नगरी भयंकर वियोग पीड़ा के असह्य दुःख से तड़पते अयोध्यावासियों के साथ प्रसन्नमुख श्रीराम वन गमन करते हैं। कवि कथा के पारंपरित स्वरूप घटकों के क्रम में राम को चित्रकूट पहुँचाकर, सुमन्त्र का अयोध्या में प्रत्यागमन कराकर एवं दशरथ की मृत्यु की अवधारणा करके भरत प्रसंग का प्रारंभ करता है।

▶ अयोध्या काण्ड के उत्तरार्ध

अयोध्याकांण्ड की इस रामकथा का दर्भ पूर्णतया विचारणीय है। इस अंश में राम का प्रसंग कथावस्तु को संचालित करता है। भरत प्रसंग एकाध स्थान पर व्यंग्य रूप में निर्दिष्ट है। परंपरा के रामायणों में भी राम कथा का यही क्रम है। कवि ठीक उसी क्रम का यहाँ अनुसरण करता है। इस पुर्वाशं कथा के नायक राम हैं। राम की यह अवधारणा अपने आप में विलक्षण है।

▶ पूर्वांशं कथा के नायक राम

जैसा कि निर्दिष्ट है, अयोध्याकाण्ड में दो कथाओं का संयोग है, श्रीराम की कथा तथा भरत की कथा। दोनों दो उद्देश्यों से प्रेरित हैं। कवि जहाँ श्रीराम की पूर्वांश कथायोजना से जीवन में त्याग, सत्यनिष्ठा, धर्माचरण, नैतिक सदाचरण, उदारता को शीर्ष बिन्दु पर चित्रित करना चाहता है, वहीं भरत कथा के माध्यम से वह भक्ति को अपने सर्वोच्च मानक के साथ शीर्ष बिन्दु पर चित्रित करता है। राम जहाँ लोकादर्श के प्रतीक हैं, वहीं भरत भक्ति के सर्वोच्च मानक हैं। इस प्रकार अयोध्यकांड की रचना का मूल उद्देश्य लोकादर्श एवं भक्ति के सर्वोत्कृष्ट मानदण्डों की समवेत प्रतिष्ठा करना है।

▶ मूल उद्देश्य लोकादर्श एवं भक्ति

3.4.2.1 अयोध्याकाण्ड के कुछ पदों की व्याख्या

हरषि मुनीस कहेउ मृदु बानी। आनहु सकल सुतीरथ पानी।।
औषध मूल फूल फल पाना। कहे नाम गनि मंगल नाना।।
चामर चरम बसन बहु भाँती। रोम पाट पट अगनित जाती।।
मनिगन मंगल बस्तु अनेका। जो जग जोगु भूप अभिषेका।।
बेद बिदित कहि सकल बिधाना। कहेउ रचहु पुर बिबिध बिताना।।
सफल रसाल पूग फल केरा। रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा।।
रचहु मंजु मनि चौकें चारू। कहहु बनावन बेगि बजारू।।
पूजहु गनपति गुर कुलदेवा। सब बिधि करहु भूमिसुर सेवा।। 6।।

भावार्थ

इन पंक्तियों में वशिष्ठ मंत्री सभी को आदेश देते हैं कि राज्याभिषेक के लिए जिन मांगलिक वस्तुओं का जैसा शास्त्र विधान है तथा जिस प्रकार उनका आयोजन बताया गया है, शीघ्र वे सभी उनको उसी प्रकार सम्पन्न करें।

प्रसंगार्थ

प्रसन्नतापूर्वक वशिष्ठ ने मृदुवाणी में कहा कि(अभिषेक के निमित्त) समस्त तीर्थों के जल को लाएँ। औषधि, मूल, फूल, फल, पत्ते और अनेक मांगलिक वस्तुओं के नामों को बताया। चावल, मृगचर्मादि, अनेक प्रकार के ऊनी, रेशमी एवं सूती वस्त्रों, अनेक मणियों, अन्य मांगलिक वस्तुओं को जिन्हें जगत में राज्याभिषेक के योग्य निर्दिष्ट किया गया है (उनका निर्देश दिया)। वेद-विदित (प्रसिद्ध) समस्त विधानों को निर्दिष्ट करके कहा कि अयोध्या नगर को विविध वितन (मण्डपों) से मण्डित कर दो। अयोध्यापुर की गलियों के चारों और फल-युक्त रसाल, सुपाड़ी और केले के वृक्षों को लगाओ। सुंदर मणियों से भव्य चौकों की रचना करो और शीघ्र ही बाज़ार को सजाने के लिए कहो। गणपति (गणेश) गुरु एवं कुलदेवता की पूजा करो तथा ब्राह्मणों की प्रत्येक प्रकार से सेवा करो।

▶ राज्याभिषेक केलिए आयोजन का वर्णन

ध्वजा, पताके (छोटी झण्डियों), वन्दनवार, घोड़े, रथ तथा हाथी इन सबको सज्जित करो। मुनी श्रेष्ठ के वचनों को शिरोधार्य करके सभी अपने-अपने कार्य में लग गए।

टिप्पणी

कवि अभिषेक के वातावरण का निर्माण करना चाह रहा है। उसके वर्णन में इतनी स्वाभाविकता है कि इसकी कहीं भी व्यंजना नहीं हो पाती कि सम्पूर्ण आयोजन कुछ ही समय बाद निष्फल हो जाएगा। आगामी असंगति को अधिक तीव्र बनाने के लिए व्यापक उत्सव का आयोजन विधान का वह वर्णन करता है। यहाँ अभिषेकादि मांगलिक पर्वो की सामग्रियों का विस्तारपूर्वक उल्लेख है।

जो मुनीस जेहि आयसु दीन्हा। सो तेहिं काजु प्रथम जनु कीन्हा।।
बिप्र साधु सुर पूजत राजा। करत राम हित मंगल काजा।।
सुनत राम अभिषेक सुहावा। बाज गहागह अवध बधावा।।

राम सीय तन सगुन जनाए। फरकहिं मंगल अंग सुहाए।।

पुलकि सप्रेम परसपर कहहीं। भरत आगमनु सूचक अहहीं।।

भए बहुत दिन अति अवसेरी। सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी।।

भरत सरिस प्रिय को जग माहीं। इहइ सगुन फलु दूसर नाहीं।।

रामहि बंधु सोच दिन राती। अंडहि कमठ हृदउ जेहि भाँती।।

दो०-एहि अवसर मंगलु परम सुनि रहँसेउ रनिवासु।

सोभत लखि बिधु बढ़त जनु बारिधि बीचि बिलासु।। 7।।

▶ श्रीरामचंद्र के आनंद-दायक राज्याभिषेक सुनकर अयोध्यावासियों का आनंद

मुनि श्रेष्ठ वशिष्ठ ने जिसे जो आज्ञा दी, उसने उस कार्य को जैसे पहले कर लिया। दशरथ ब्राह्मण, साधुजनों तथा देवताओं की पूजा और राम के लिए मंगल कार्य करते हैं। श्रीरामचंद्र के आनंददायक राज्याभिषेक को सुनकर अयोध्या में धूमधाम से बधावे बजने लगे। राम और सीता के शरीर पर शकुन प्रतीत होने लगे तथा उनके मांगलिक सुंदर भाग फड़कने लगे। वे परस्पर पुलकित होकर कहते हैं कि ये शकुन भरत के आगमन सूचक हैं। उनके विछोह के बहुत दिन (देर) हो जाने के कारण लगता है। शकुन की प्रतीति प्रिय से भेंट होने के लिए है। भरत के सदृश्य संसार में मुझे अन्य और कौन प्रिय है, लगता है, शकुन का यही फल है, अन्य नहीं। राम को बंधु भारत की चिंता उसी प्रकार रात दिन लगी रहती है, जिस प्रकार कछुए का हृदय (चिन्तासक्ति) अपने अंडे में लगी रहती है।

इस अवसर पर अभिषेक रूप परम शुभ को सुनकर सम्पूर्ण रनिवास आनंदित हो उठा। मानो पूर्णचंद्र को ऊपर उठते देखकर समुद्र की तरंगों का विलास शोभित हो रहा हो।

टिप्पणी

कवि राज्याभिषेक प्रसंग को प्रबन्धात्मक व्याप्ति देते हुए उसे सांकेतिक ढंग से (शकुन) द्वारा राम में व्यंजित करके सम्पूर्ण अयोध्या तथा रनिवास माताओं एवं उनकी सहेलियाँ परिचारिकाओं आदि तक इसकी सूचना फैलाता है। आगे आने वाले वनवास प्रसंग के दारूण कष्ट के पूर्व की हर्षमूलक व्यंजना, जिससे भावनात्मक घात-प्रतिघात उत्पन्न हो सके, के लिए इस प्रकार के व्याप्ति आवश्यक है।

'सो तेहिं काजु प्रथम जनु कीन्हा' पंक्ति में उत्प्रेक्षा एवं अतिशयोक्ति अलंकारों का संकर है। और इन अलंकारों का प्रयोग 'कार्य की त्वरा' के लिए किया गया है।

अंडहि कमठ हृदउ जेहि भाँती।। 'उदाहरण अलंकार' है क्योंकि प्रस्तुति को अप्रस्तुत की समता द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है।

एहि अवसर मंगलु बीचि विलास 'उत्प्रेक्षालंकार' है। इस अलंकार मुख्य कार्य है राज्याभिषेक के समाचार को सुनकर रनिवास के हृदय में उठने वाले आनंदातिरेक को व्यंजित करना।

अंडहि कमठ हृदउ जेहि भाँती-कछुए के लिए प्रसिद्ध है कि वह अपने अंडे को रेत में गाड़ देता है, और हमेशा उसका चित्त उसी में लगा रहता है। भारत के प्रति राम के मन में उसी प्रकार की आसक्ति थी।

सोभत लखि विधु बढ़त जनु वारिधि बीचि बिलासु- कवि समय के अनुसार पूर्णिमा के चन्द्र

को देखकर समुद्र हर्षातिरेक से उग्र उमंगित होकर अपनी तरंगों द्वारा उसे स्पर्श करना चाहता है। वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्णिमा के दिन चन्द्र का गुरुत्वाकर्षण अधिक हो जाने से समुद्र में 'ज्वार' होता है।

प्रथम जाइ जिन्ह बचन सुनाए। भूषन बसन भूरि तिन्ह पाए।।

प्रेम पुलकि तन मन अनुरागीं। मंगल कलस सजन सब लागीं।।

चौकें चारु सुमित्राँ पुरी। मनिमय बिबिध भाँति अति रुरी।।

आनँद मगन राम महतारी। दिए दान बहु बिप्र हँकारी।।

पूजीं ग्रामदेबि सुर नागा। कहेउ बहोरि देन बलिभागा।।

जेहि बिधि होइ राम कल्यानू। देहु दया करि सो बरदानू।।

गावहिं मंगल कोकिलबयनीं। बिधुबदनीं मृगसावकनयनीं।।

दो०-राम राज अभिषेकु सुनि हियँ हरषे नर नारि।

लगे सुमंगल सजन सब बिधि अनुकूल बिचारि।। ८।।

अर्थ

प्रथम जाकर जिसने (रनिवास में राज्याभिषेक की) खबर बताई, उसने प्रभुत मात्रा में आभूषण तथा वस्त्रों को प्राप्त किया। प्रेम से पुलकित एवं तन मन से राम में अनुरागवति, सब मांगलिक कलश सजने लगीं। मणियुक्त तथा प्रत्येक प्रकार से सुन्दर चौक से सुमित्रा ने बनाया। राम माता (कौशल्या) ने आनंद मग्न अनेक ब्राह्मणों को बुलाकर प्रभूत मात्रा में दान दिया। ग्राम देवी, देवता एवं नागपूजा करके पुनः (अभिषेक पूर्ण हो जाने पर) बलिभाग (पूजा की सामग्री) देने का संकल्प किया। जिस प्रकार से राम का कल्याण हो, दया करके मुझे वह वरदान दें। चंद्रमुखी, शिशु मृग की भाँति नेत्रों वाली तथा कोकिल कंठवाली नारियाँ मंगल गाना गा रही हैं।

▶ तुलसी की काव्य वैभव की झलक

राम के राज्याभिषेक को सुनकर अयोध्या के नर-नारी हृदय से हर्षित हुए। विधि को अनुकूल समझकर सभी सुन्दर मांगलिक साज सजने लगे।

टिप्पणी

संपूर्ण माताएँ आनंद से उल्लसित निश्चिन्त भाव से इस मांगलिक पर्व की आयोजना में तत्पर हैं। उनकी 'तत्परता' आगे की विसंगति को घनीभूत बनाने के लिए कवि द्वारा आयोजित है। 'कोकिला बयनी', विधुबदनी, मृग सावक 'सयनी' में शुभ की व्यंजना के साथ-साथ काव्य वर्णन की परिपाटी का अनुसरण है।

तब नरनाहँ बसिष्ठु बोलाए। रामधाम सिख देन पठाए।।

गुर आगमनु सुनत रघुनाथा। द्वार आइ पद नायउ माथा।।

सादर अरघ देइ घर आने। सोरह भाँति पूजि सनमाने।।

गहे चरन सिय सहित बहोरी। बोले रामु कमल कर जोरी।।

सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगल मूल अमंगल दमनू।।

तदपि उचित जनु बोलि सप्रीती। पठइअ काज नाथ असि नीती।।

प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू। भयउ पुनीत आजु यहु गेहू।।
आयसु होइ सो करौं गोसाई। सेवक लहइ स्वामि सेवकाई।।
दो०-सुनि सनेह साने बचन मुनि रघुबरहि प्रसंस।
राम कस न तुम्ह कहहु अस हंस बंस अवतंस।। 9।।

अर्थ

तब दशरथ ने वशिष्ठ को बुलवाकर श्री रामचंद्र के महल में शिक्षा देने के लिए भेजा। गुरु वशिष्ठ का आगमन सुनते ही द्वार पर पहुँचकर चरणों पर शीश झुकाया आदरपूर्वक देखकर राम उन्हें भवन लीवा लाए तथा षोडशोपचार पूजन) द्वारा पूजा करने सम्मानित किया। पुनः सीता के साथ वशिष्ठ की चरण वंदना की और फिर हाथ जोड़कर बोले हे नाथ! सेवक के घर स्वामी का आगमन मंगल का मूल तथा अमंगल का नाशक है, फिर भी आप के लिए उचित यही था कि प्रीति पूर्वक इस दास को कार्य के निमित्त बुला भेजते, यही नीति है। हे प्रभु! आपने अपनी गरिमा का ध्यान न रखकर मुझ पर स्नेह (अनुग्रह) किया, जिससे यह भवन आज पवित्र हो गया। है गोस्वामी? जो आज्ञा हो। उसे पूरा करूँ, सेवक का लाभ (धर्म, शोभा) स्वामी की सेवा है।

▶ गुरु वशिष्ठ के प्रति श्रीरामचन्द्र का प्रेम भाव

राम की स्नेहसिक्त वाणी सुनकर मुनि राम की बढ़ाई करने लगे। हे सूर्यवंश के आभूषण राम, तुम्हारा यह कहना उपयुक्त है।

टिप्पणी

दशरथ के कहने पर वशिष्ठ राम भवन में उन्हें नीति शिक्षा देने के लिए जाते हैं। राम का आचरण कवि द्वारा इस प्रकार व्यक्त किया गया है कि उनके नैतिक सदाचरण से यह व्यंजन हो उठता है कि सर्वथा नीति निपुण हैं, और हंस वंस अवतंस से कहकर वशिष्ठ उनकी नीतिनिष्ठा की ही प्रकारान्तर भाव से सराहना करते हैं।

बरनि राम गुन सीलु सुभाऊ। बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ।।
भूप सजेउ अभिषेक समाजू। चाहत देन तुम्हहि जुबराजू।।
राम करहु सब संजम आजू। जौं बिधि कुसल निबाहै काजू।।
गुरु सिख देइ राय पहिं गयउ। राम हृदयँ अस बिसमउ भयऊ।।
जनमे एक संग सब भाई। भोजन सयन केलि लरिकाई।।
करनबेध उपबीत बिआहा। संग संग सब भए उछाहा।।
बिमल बंस यहु अनुचित एकू। बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू।।
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई। हरउ भगत मन कै कुटिलाई।।
दो०-तेहि अवसर आए लखन मगन प्रेम आनंद।
सनमाने प्रिय बचन कहि रघुकुल कैरव चंद।। 10।।

अर्थ

राम के गुण शील स्वभाव का वर्णन करके पुलकित भाव से वशिष्ठ बोले। आपके पिता

दशरथ ने राज्याभिषेक के आयोजन की सज्जा की है और आपको वह युवराज पद देना चाहते हैं। हे राम! प्रत्येक प्रकार से आज संयम रखें जिससे कि विधाता सकुशल कार्य का निर्वाह कर दे। गुरु शिक्षा देकर राजा दशरथ के पास गए, तब राम के हृदय में इस प्रकार का विस्मय (आश्चर्य तथा सन्देह) उत्पन्न हुआ। हम सम्पूर्ण भ्रातागण एक साथ उत्पन्न हुए, भोजन, शयन, बाल्य क्रीडा भी एक साथ की। कर्णवेध, यज्ञोपवीत तथा विवाह के संपूर्ण उत्स साथ-साथ हुए। उज्जवल सूर्य (विमल) वंश में यही एक अनुचित है कि लघुभ्राता के बिना बड़े भ्राता का राज्याभिषेक हो। तुलसीदास इस पर टिप्पणी देते हुए कहते हैं कि प्रभु राम का यह प्रेमपूर्वक पछतावा (न कि वंश मर्यादा के कारण)- भक्तों के मन की कुटिलता का हरण करे।

▶ तुलसी के द्वारा प्रभु श्रीरामचन्द्र का गुणगान करना

उस समय लक्ष्मण प्रेमानंद में मग्न आए। रघुवंशी रूपी कुमुद के चंद्र श्रीराम ने प्रिय वचनों के साथ उन्हें सम्मानित किया।

टिप्पणी

कवि ने इन पंक्तियों के माध्यम से अभिषेक प्रसंग की ओर संकेत किया है। राम के मन में यह संदेह उठता है कि मेरे चारों भाइयों के जन्म, कर्णवेध, यज्ञोपतीत, विवाह साथ-साथ हुए किन्तु भरत के बिना अभिषेक कैसे? 'विहाई' शब्द की व्यंजना यही निकलती है कि राम इसे समझाते हैं कि भरत को सचेष्ट हटाया गया है क्योंकि विदाई शब्द का अर्थ 'त्याग' 'छोड़ना' आदि है। दशरथ का राम को युवराज बनाना यदि षड्यंत्र भी है तो कवि विरोध करना चाह रहा है कि राम इसमें सम्मिलित नहीं थे। वे अपने भाई भरत के प्रति सहज संसक्ति का भाव रखते थे इन पंक्तियों में कवि का लक्ष्य रामचरित्र की निर्दोषिता एवं भरत के प्रति स्नेह की प्रगाढ़ता सिद्ध करना है।

3.4.2 सूरदास

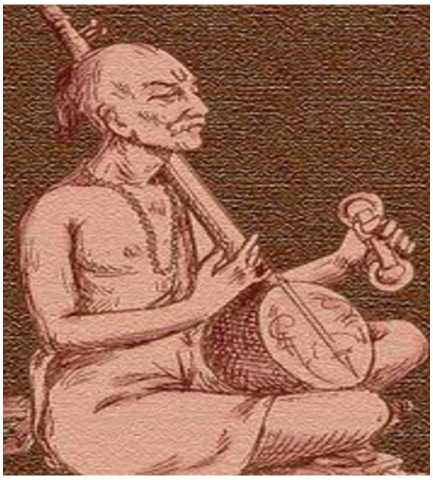

सूर साहित्य कितना है, क्या है? कैसा है? इस विषय के निर्णय करने में अभी तक केवल कपोलकल्पित कल्पनाओं का ही आधार लेना पड़ता है। वास्तविक तथ्य का अभी तक कुछ भी पता नहीं। सूरदास जी की कृतियों में से 'सूरसागर', 'सूरसारावली' और 'साहित्यलहरी' के तीन ग्रंथ विशेष प्रसिद्ध हैं। 'व्याहलो', 'नलदमयन्ती', 'पन्द्रहसंग्रह', 'नागलीला' आदि कई ग्रंथ इनके और बतलाये जाते हैं, पर जैसा ऊपर कहा जा चुका है इसका कोई प्रमाण नहीं है। न ये ग्रंथ ही उपलब्ध हैं, जिनसे इस बात का यथातथ्य निर्णय किया जा सके।

▶ तीन ग्रंथ विशेष प्रसिद्ध

सूरसागर एक गीतिकाव्य है जो श्रीमद्भागवत ग्रंथ से प्रभावित है। इस काव्य में मूलतः कृष्ण भगवान की बाल लीलाओं, गोपियों संग प्रेम, गोपियों संग विरह, उद्धव तथा गोपी संग संवाद का एक आलोकिक वर्णन मिलता है।

3.4.2.1 सूरदास- वन्दना

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल - नैन कौ छांड़ि महातम और देव कों ध्यावै।
परम गंग को छांड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबूज रस चाख्यौ, क्यों करील फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

शब्दार्थः

अनत	-	अन्य स्थान (आश्रय) के पद
महातम	-	माहात्मय, महिमा
दुर्मति	-	दुर्बुद्ध
करील	-	एक काटेदार फलयुक्त झाड़ी, छेरी बकरी

प्रसंगः

अन्य देवों का त्याग करके सूरदास श्रीकृष्ण की भक्ति सखा उपासालू के लिए यहाँ अपने व्यावहारिक तथा भाव प्रधान तर्क देते हैं। वे कहते हैं कि-

▶ श्रीकृष्ण को भगवान के रूप में प्रस्तुत

मेरा चित श्रीकृष्ण के अतिरिक्त और कहीं भी शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता है। इसके लिए वह एक उदाहरण देते हुए कहते हैं कि जैसे समुद्री जहाज पर बैठा हुआ पक्षी अन्य आश्रय की खोज के लिए उड़ता हुआ पुनः हारकर, अन्य आश्रयों को न पाकर पुनः उसी जहाज पर लौट आता है।

सूरदास पुनः कहते हैं कि कमल नेत्र वाले श्रीकृष्ण की महिमा गान को छोड़कर अन्य देवों का ध्यान कौन करे क्योंकि कौन प्यासा ऐसा नासमझ होगा जो सामने परम पावनी बहती हुई गंगा को छोड़कर (प्यास की पूर्ती के निमित्त) कुआँ खुदवाएगा। जिस भ्रमर रूपी भक्त के चित

ने कमल के रस का स्वाद चख लिया है, उसे करीले के फल का स्वाद क्यों अच्छा लगेगा।

अंततः सूरदास निष्कर्ष निकालते हुए कहते हैं कि सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करनेवाले कामधेनु जैसे श्रीकृष्ण को त्याग करके कौन-ऐसा व्यक्ति होगा जो दूध के लिए बकरी को वरीयता देगा।

विशेष - सूरदास अपने मन्तव्य को कहने के लिए उदाहरण और दृष्टान्त अंलकारों का आधार ग्रहण करते हैं।

(Video मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै। https://youtu.be/ouzTv1ObUHQ)

अबिगत गति कछु कहति न आवै।
ज्यों गूंगो मीठे फल की रस अन्तर्गत ही भावै।।
परम स्वादु सबहीं जु निरन्तर अमित तोष उपजावै।
मन बानी कों अगम अगोचर सो जाने जो पावै।।
रूप रैख गुन जाति जुगति बिनु निरालंब मन चकृत धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं, तातों सूर सगुन लीला पद गावै।।

शब्दार्थः

अविगत	-	निर्गुण (जो ज्ञेय न हो)
गति	-	ज्ञान समझ
अमित	-	अत्यधिक
तोष	-	आनन्द
आगम	-	न समझा जा सकनेवाला
अगोचर	-	दृष्टि की सीमा के बाहर (अदृश्य)
रेख	-	लक्षण
जाति	-	स्वभाव
जुगुति	-	युक्ति(उपाय)
निरालम्ब	-	आशयविहिन
चक्रित	-	चकित

प्रसंगः

निर्गुण ब्रह्म की दुरूहता की ओर संकेत करते हुए सूरदास तहते हैं कि निर्गुण ब्रह्म की समझ के विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता।

जिस प्रकार, गूँगे को मीठे फल के रस का स्वाद मन-ही-मन अच्छा लगता है, ठीक उसी प्रकार निर्गुण ब्रह्म को साधक उसका आस्वाद मन-ही-मन प्राप्त करता है। उस स्वाद के विषय में वह कुछ कह नहीं सकता। यह सत्य है कि मीठे फल रूपी निर्गुण ब्रह्म का आस्वाद परम स्वादिष्ट, सभी के लिए सर्वकालिक तथा अत्यन्त आनंद उत्पन्न करनेवाला है - फिर भी, वह मन तथा बाकी के लिए आगम्य तथा अदृश्य रूप है और जिसने उस निर्गुण का (समाधि आदि

द्वारा) अनुभव कर लिया है, वही उसे जानता भी है, सभी नहीं।

▶ निर्गुण ब्रह्म की अनुभूति सिर्भ अनभव कर सकते हैं, लेकिन मुँह से बोल नहीं सकता

निर्गुण इन्द्रिय प्रतीति का विषय नहीं है क्योंकि वह रूप, लक्षण, गुण, स्वभाव, इन्द्रियों द्वारा जानने के सम्पूर्ण साधनों आदि से रहित है, अतः यह मन आलम्बन विहिन उस ब्रह्म केलिए कहाँ-कहाँ खोजे। सूरदास कहते हैं कि इस प्रकार, सब प्रकार से, निर्गुण ब्रह्म को ज्ञानातीत समझकर ही वह सगुण ब्रह्म की लीला के पदों का गायन कर रहे हैं।

विशेष - इस पद को सूरसागर के लीला गान की प्रस्तावना के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। सूर यहाँ निर्गुण का विरोध या निषेध नहीं कर रहे हैं और न सगुण लीला भक्ति में निर्गुण ब्रह्म का कहीं विरोध मिलता है। यहाँ केवल निर्गुण ब्रह्म की उपासना की जटिलता को ही निर्देश किया गया है, उसका खंडन नहीं।

3.4.2.2 भ्रमरगीत

'भ्रमरगीत' का आशय 'भौंरें का गीत' से है। हिन्दी काव्य में भ्रमरगीत का मूल स्रोत श्रीमद्भागवत पुराण है, जिसके दशम स्कंध के छियालीसवें एवं सैतालीसवें अध्याय में भ्रमरगीत प्रसंग है। श्रीकृष्ण गोपियों को छोड़कर मथुरा चले गए और गोपियाँ विरह विकल हो गई। श्रीकृष्ण ने कंस को मार कर उग्रसेन को गद्दी पर बैठाया और अपने जनक-जननी वासुदेव-देवकी को बंधन से छुड़ाया। कृष्ण मथुरा में लोकहितकारी कार्यों में व्यस्त थे। इधर स्वयं राजमहलों में आनंद करने लगे साथ ही कुब्जा नाम की दासी की सेवा से प्रसन्न होकर उसको अपने प्रेम की अधिकारिणी बना लिया। किन्तु उन्हें ब्रज की गोपियों की याद सताती रहती थी। श्री कृष्ण ने मथुरा जाने के बाद स्वयं न लौटकर उद्धव के जरिए गोपियों के पास संदेश भेजा था कि अब वे वापस लौट कर नहीं आएँगे।

▶ भौंरें का गीत

उधर बृजवासी उनके विरह में व्याकुल थे। जब नियत समय बीत जाने पर भी श्री कृष्ण गोकुल नहीं पहुँचे तो यसोदा और गोपियों ने संदेश भेजने शुरू किए। श्री कृष्ण के एक सखा थे उद्धव। उनको अपने योग और ज्ञान का बड़ा घमंड था और प्रेम और भक्ति को अवहेलना की दृष्टि से देखते थे। निर्गुण उपासना के सामने साकार उपासना की उपेक्षा करते थे। श्रीकृष्ण को उनका घमंड चूर करना था। उनको गोपियों के प्रेम का आदर्श सामने रखकर साकार उपासना की सुगमता और सरलता समझाना था। इसलिए उन्होंने उद्धव को गोकुल भेज दिया। उद्भव गोकुल पहुँचे। वहाँ उनका वही आदर, वही सम्मान हुआ जो कृष्ण के सखा होने के कारण उनके योग्य था। कुशल-प्रश्न के अनन्तर उन्होंने नंद-यशोदा से कृष्ण का संदेश कहा, और गोपियों के पास गए। उद्धव ने श्री कृष्ण के सन्देश को गोपियों तक पहुँचाया और उन्हें निर्गुण ब्रह्म की उपासना करने का उपदेश दिया। श्री कृष्ण गोपियों का उनके प्रति मोह तोड़ना चाहते थे, इसलिए उन्होंने उद्धव के जरिए गोपियों को सन्देश भिजवाया कि ईश्वर अनादि,

निर्गुण उपासना के खंडन

अनन्त है, वह न जन्म लेता है, न मरता है, इसलिए वे मोह को त्याग दे एवं योग का सहारा ले कर अपनी विरह वेदना को शांत करने का प्रयास करें। परन्तु गोपियाँ इस तरह के ज्ञान मार्ग के बजाय प्रेम मार्ग को पसंद करती थीं। इस कारण गोपियों को उनकी रूखी ज्ञानचर्चा कुछ न रुची। इसी बीच में एक भ्रमर उड़ता हुआ आया और राधिका के चरण पर बैठ गया।

गोपियों ने भ्रमर के बहाने उद्धव का बहुत मजाक बनाया और उद्भव को सुनाते हुए, भ्रमर को संबोधन कर उपालंभ देना आरंभ कर दिया। यहीं से भ्रमरगीत का प्रारंभ होता है। उद्भव की जितनी ज्ञान-चर्चा थी, सब पर गोपियाँ ने ताने देना शुरु कर दिया। उनके योग और निर्गुण उपासना के सिद्धांतों का एक-एक करके खंडन कर अपने प्रेम मार्ग और साकार उपासना के सिद्धांतों का मंड़न किया; पर यह सब सुनाया तो गया उद्भव को और संबोधन किया गया 'भ्रमर' को इसी से इस प्रसंग को भ्रमरगीत कहते हैं। यानी गोपियों ने उस भ्रमर को प्रतीक बनाकर अन्योक्ति के माध्यम से उद्धव और कृष्ण पर जो व्यंग्य किए एवं उपालम्भ दिए उसी को 'भ्रमरगीत' के नाम से जाना गया। भ्रमरगीत प्रसंग में निर्गुण का खण्डन, सगुण का मण्डन तथा ज्ञान एवं योग की तुलना में प्रेम और भक्ति को श्रेष्ठ ठहराया गया है।

साकार उपासना के सिद्धांतों का मंड़न

3.4.2.2.1 भ्रमरगीत-काव्य परंपरा

भ्रमरगीत केवल सूर ने ही नहीं लिखा है। और भी कई एक कवियों ने इस प्रसंग को बड़े सुंदर शब्दों में लिखा है, इनमें से नंददास का भ्रमरगीत सर्वाधिक प्रसिद्ध है। ब्रजभाषा काव्य में भ्रमरगीत परम्परा के कई ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। विद्वान इस परम्परा का प्रारम्भ मैथिल कोकिल विद्यापति के पदों से मानते हैं किन्तु विधिवत रूप में भ्रमरगीत परम्परा सूरदास से ही प्रारम्भ हुई। भ्रमर को आधार मानकर हिन्दी साहित्य में कई ग्रंथ लिखे गए जिनका संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है-

3.4.2.2.2 सूरदास का भ्रमरगीत

यह भागवत के दशम स्कन्ध पर आधारित है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सूरसागर के भ्रमरगीत से लगभग 400 पदों को छांटकर उनको 'भ्रमरगीतसार' नाम से संगृहीत एवं सम्पादित किया। सूर की गोपियाँ भावुक अधिक हैं, तर्कशील कम।

3.4.2.2.2.1 नन्ददास का 'भँवरगीत'

नंददास के भँवरगीत का आधार भी सूरदास की भाँति भागवत का दशम स्कंध ही है। 'भँवरगीत' को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहले भाग में गोपी उद्धव संवाद है, दूसरे भाग में श्री कृष्ण के विरह से व्यथित गोपियों का चित्रण है।

'भँवरगीत' को दो भागों में विभक्त

भँवरगीत का पूर्वार्द्ध (पूर्वभाग) दर्शन तथा उत्तरार्ध (उत्तर भाग) भाव प्रधान है। इस प्रकार भँवरगीत एक क्रमबद्ध पद्य रचना है, जिसमें बौद्धिक तत्व का विशेष महत्व है। इसमें दार्शनिकता का पुट है। इनकी गोपियाँ तर्कशील अधिक हैं। ग्रन्थ का बौद्धिक स्तर भी उच्चकोटि का है।

3.4.2.2.2.2 सत्य नारायण कविरत्न का भ्रमरदूत

भ्रमरदूत का भ्रमर स्वयं कृष्ण

सत्यनारायण कविरत्न ने भ्रमरदूत को नई मौलिकता प्रदान की है। भ्रमरदूत का भ्रमर स्वयं कृष्ण है, जो अपनी माँ के दुखों को सुनने के लिए भागकर आ गए हैं। यह वात्सल्य वियोग का काव्य है। इसमें युगीन समस्याओं का चित्रण भी उपलब्धहै। माता यशोदा को 'भारतमाता' के रूप में चित्रित किया गया।

3.4.2.2.2.3 अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का प्रियप्रवास

▶ रसलोलुप कृष्ण का प्रतीक नहीं

राधा लोकहितकारिणी में चित्रित है। इसमें कुब्जा उल्लेख नहीं है। प्रियप्रवास में गोपियों से प्रेम करने वाले कृष्ण देश कल्याण के लिए ही सुख का त्याग करते हैं। इसमें भ्रमर का उल्लेख रसलोलुप कृष्ण का प्रतीक नहीं है, बल्कि उसे देखकर गोपियों को श्यामली मूर्ति की स्मृति हो जाती है।

3.4.2.2.2.4 जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' का उद्धवशतक

▶ कुब्जा, कृष्ण तथा उद्धव पर व्यंग्य

जगन्नाथ रत्नाकर ने उद्धवशतक को मौलिकता प्रदान करने की कोशिश की है। इसमें योग संदेश के मूल में कुब्जा, कृष्ण तथा उद्धव पर भी व्यंग्य करती है। इसके अतिरिक्त इसी परंपरा में मैथिलीशरण गुप्त का द्वापर, द्वारिका प्रसाद मिश्र का कृष्णायन और डॉ श्याम सुंदर लाल दीक्षित का श्याम संदेश का उल्लेख मिलता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भ्रमरगीत परंपरा अपने भाव वैशिष्ट्य और अभिव्यंजना कौशल के कारण उल्लेखनीय काव्यधारा के रूप में जानी जाती है।

भ्रमरगीत-काव्य परंपरा के कवि

सूरदास, नन्ददास, सत्य नारायण कविरत्न, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', जगन्नाथ दास 'रत्नाकर'

3.4.2.3 सरदास का भ्रमरगीत के कुछ पदों की व्याख्या ;

जाके गुन गावत दिनरात।
ताकौ निरगुन कहत मधुप तुम, नई सुनी यह बात।।
जौ बादर जल बरषै निसि दिन, उमड़ि भरै नद खात।
स्वाति बिना नहि कल मधुकर सुनि, खग चातक के गात।।
बंसी मधुर सुनाइ हरयौ मन, दधि खायौ लै पात।
'सूर' स्याम नृप राज भए अब, गोपिनि देखि लजात।। 31।।

खात	=	तालाब
पात	=	पत्ता
अधुप	=	भ्रमर
नहिंकल	=	शान्ति नहीं मिलती

भ्रमरगीत प्रसंग का आधार भागवत पुराण है। भ्रमर को उपलक्षित करके श्रीकृष्ण के प्रति कही गई गोपीकाओं की व्यंग्यपूर्णि उक्तियाँ यहाँ सूर की रचनात्मक विद्‌गधता को सूचित

करती है। सूर भ्रमर को बहाना बनाकर श्रीकृष्ण के प्रति व्यंग्योक्ति हैं कि–

हे भ्रमर! जिस कृष्ण के गुणों का गान हम रात दिन गाती रहती है, उसको तुम निर्गुण कहते हो, यह हमने नई बात सुनी हैं। यद्यपि बादल रात दिन जल की वर्षा करती है और उसके जल के प्रवाह से नहीं तथा तालाब उमड़कर भर जाते हैं, फिर भी हे भ्रमर! सुनो, स्वाति जल के बिना चातक पक्षी शरीर को शांति नहीं मिलती। उसी प्रकार, मधुर वंशी को सुनाकर जिस कृष्ण ने हमारे मन को हर लिया है, और पत्ते पर माँग कर (हमसे ही) जो हरी दही खाया करते थे वे कृष्ण राजाओं के राजा हो गए हैं और अब हम गोपियों को देखकर लज्जा का अनुभव करते हैं।

▶ भ्रमरगीत शैली

गोपियाँ कहती हैं, क्या वे इसी लज्जा तथा भय से यहाँ नहीं आना चाहते।

ऊधौ स्याम सखा तुम साँचे।
की करि लियो स्वाँग बीचहि ते वैसहिं लागत काँचे।
जैसी कही हमहिं आवत ही औरनि कहि पछिताते।
अपनो पति तजि और बताबत मेहमानी कछु पछिताते।
तुरत गमन की जै मधु नगरी इहां कहा यह लाए
सूर सुनत गोपिनि की बानी ऊधौ सीस नवाए।। 32।।

स्वांग	=	परिहासपूर्ण नकल
साँचे	=	सच्चे
काँचे	=	कच्चे
मेहमानी	=	अतिथि

जैसा कुछ स्वागत पाते यह अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि है जिसका बीन व्यंग्यवार अर्थ है गाली तथा अपशब्द सुनते, आपके साथ दुर्व्यवहार होता।

नवाए	=	झुका लिया

गोपिकाएँ उद्धव को संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे उद्धव! तुम स्याम कृष्ण के सच्चे साथी हो (व्यंग्यभाव से इसका अर्थ निकलता है, उन्हीं के भाँति ठग हो) लगता है आते समय मार्ग में आपने अपना परिभाषा पूर्ण रूप बना लिया क्योंकि आप कृष्ण जैसे ही कच्चे लगते हैं जैसा आपने आते ही हम लोगों को उपदेश दे डाला यदि दूसरों को ऐसा ही समझ जाते तो पछताना पड़ता है यदि नारी को अपने पति का परित्याग करके दूसरों के आश्रय ग्रहण करने की बात करते हैं तो आपकी अच्छी खातिरदारी होती। आपके लिए यही अच्छा है कि आप शीघ्र ही मथुरा के लिए प्रस्थान कर जाए वह योग के जैसी बातें कहाँ ले आए हैं।

▶ गोपी-उद्भव संवाद

सूरदास निष्कर्ष निकालते हुए कहते हैं कि गोपीयों की बात सुनकर उद्धव ने (पराजित होकर) अपना शीश झुका लिया।

विशेष - गोपियों की खीझ और व्यंग्योक्ति दोनों एक साथ व्यंगित है। 'मेहमानी' शब्द में काकु वक्रोक्ति या अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि है।

मधुकर जुबती जोग न जानैं

एक पतिव्रत हरि रस जिनकें और हृदै नहिं आनैं।
जिनके रँग रस रस्यो रैनि दिन तन मन सुख उपजायो।
जिन सरबस हरि लियो रूप धरि वहै रूप मन भायो।
तू अति चप्पल आपने रस को या रस मरम न जानैं।
पूछौ सूर चकोर चंद चातक धन केवल मानैं।। 33।।

गोपिकाएँ उद्धव से योग साधना के विषय में अपनी असमर्थता व्यक्त करती हुई कहती हैं कि उनके लिए श्री कृष्ण ही एकमात्र उपास्य हैं। वे उद्धव को संबोधित करते हुए कहती है कि– हे उद्धव! हम युवतियाँ योग नहीं जानती। हम मात्र कृष्ण का पतिव्रत धारण किए हुए हैं, अतः हमारे हृदय में अन्य आनंद कैसे आ सकता है। हम गोपिकाएँ जिनके रंग और रस में लीन हैं, उसी रस ने रात दिन हमें आनंदित किया है। श्रीहरि का रूप धारण करके जिसने (श्रीकृष्ण ने) सर्वस्व का हरण कर लिया है, वही रूप हमें अच्छा लगा है। हे भ्रमर! तू तो अत्यंत चंचल भाव से अपने रस में मस्त है। इस रस का रहस्य तुझे ज्ञात नहीं है। एक बार उस रस को चकोर से पूछो, जो केवल चंद्र को ही सर्वस्व मानता है या चातक से पूछो जो स्वाति बादल को ही एकमात्र स्वीकार करता है।

▶ गोपिकाओं के मत में श्रीकृष्ण मात्र उनके उपास्य हैं

विशेष– चकोर दादा चंद्र, स्वाति नक्षत्र के मेघ एवं चातक इन कवि समयों द्वारा कवि गोपिकाओं की श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य संसकाति का चित्रण करती हैं।

मधुकर हम अजान मति भोरि।
यह मत जाई जहाँ उपदेसो नागरि नवल किसोरी।
कंचन को मृग कौनें देख्यौ किन बाँध्यौ गहि डोरी।
कहिधौं मधुप बारि तें माखन कौनें भरी कमोरी
बिनुहीं भीत चित्र किन कीन्हों किन नख घाल्यो कोरी।
कहौ कौन पै बढ़त कनूका जिन हठि भूसी पछोरी।
निरगुन ज्ञान तुम्हारो ऊधो हम अबला मति थोरी।
चाहति सूर स्याम मुख चंदहि आँखियाँ तृषित चकोरी।। 34।।

अजान	=	अज्ञानी
वारि ते माखन	=	जल से घृत निकालना
घाल्यो	=	विनष्ट कर दिया कनूका अनन
को री	=	किसको

भ्रमर के बहाने उद्धव को संबोधित करके गोपिकाएँ कहते हैं कि– हे उद्धव! हम अज्ञानी तथा बुद्धि से भोली (नासमझ) हैं। यह ज्ञान का मत जाकर उन्हें उपदेश करो जो चतुर और नवल किशोरियाँ हैं। आपका यह उपदेश हमारे लिए छलावा है क्योंकि हम नहीं जानते कि आज तक सोने का मृग किसी ने नहीं देखा है और न उसे आज तक किसी ने डोरी में ही बाँध रखा, सुना गया है। हे भ्रमर! तुम्हीं बताओ कि आज तक किसने जल मथकर उसके माखन से अपनी कमोरी (दधिपात्र) ही भरा है। कौन सा ऐसा व्यक्ति है, जिसने बिना भित्ति के आधार

> ▶ गोपिकाएँ श्रीकृष्ण के मुखचंद्र की एकमात्र कामना करती है

के कोई चित्र बनाया हो और क्या किसी मनुष्य ने नख से विदीर्ण करके विनष्ट कर दिया है। हे उद्धव! बताएँ, जिसने हठपूर्णक (रूप में) भूसी पछोरी हो क्या उससे उसका अन्नभंडार बढ़ता है। हे उद्धव! हम अबलाएँ हैं तथा बुद्धि से मन्द हैं- हम तो मात्र इतना ही चाहती हैं कि ये हमारी चकोर रूपी आंखें तृषित हैं, हम श्रीकृष्ण के मुखचंद्र की एकमात्र कामना करती है।

विशेष- कभी विविध विषमता तथा उनके सादृश्यों का उल्लेख करके गोपियों की असमर्थता का चित्रण करता है। कवि ज्ञान चिंतन के स्थान पर लोक-आस्था अर्थात् गोपिकाओं की आस्था को प्राथमिकता देता है।

अखियाँ हरी दर्शन की प्यासी।
देख्यो चाहतिं कमल नैन कों, निसि दिन रहतिं उदासी।
आए ऊधौ फिरी गए आँगन डारि गए गर फाँसी।
केसरि तिलक मोतिनि की माला, बृंन्दाबन के बासी।
काहू के मन की कोउ जानत लोगनि के मन हाँसी।
सूरदास प्रभु तुम्हारे दरस कों, करबत लैहों कासी।। 35।।

करवत = करावर्त-आरा, काशी में आरे से शरीर चिरवाने से अत्यधिक पुण्य मिलता है।

गोपियाँ कहती हैं कि हमारी आँखें श्रीकृष्ण के दर्शन के लिए प्यासी हैं। वे कमल नयन श्रीकृष्ण को प्रतिपल देखना चाहती हैं, और उन्हें न पाकर निरंतर उदास रहती हैं। उद्धव जी श्रीकृष्ण के दूत बनकर आवश्य आए किन्तु बीच आंगन अर्थात बिना किसी निष्कर्ष के ही यहाँ से लौटकर चले गए। हम गोपिकाएँ वृंदावनवासी कृष्ण को चाहते हैं– यह कृष्ण (मथुरावासी) तो कस्तूरी का तिलक लगाते और मोतियों की माला पहनते हैं। (उद्धव जैसे ही अनेकानेक) व्यक्ति किसी के मन की बात तो समझता नहीं इसलिए लोगों के मन में हँसी आती होगी कि ये गोपिकाएँ राज पुत्र कृष्ण को छोड़कर गोप पुत्र कृष्ण को चाहती हैं।

> ▶ गोपिकाओं के मन में परिवर्तन लाने में असर्थ उद्धव का चित्रण

गोपिकाएँ अन्त में निष्कर्ष निकालती हुई कहती हैं कि यदि कृष्ण नहीं आते तो हम सब काशी नगरी में जाकर आरे से शरीर चिरवा कर मृत्यु वरण कर लेंगी ।

विशेष - हठ्योग की प्रक्रिया का मध्यकाल में बराबर उल्लेख मिलता है कि मुक्ति की कामना से साधक काशी में आरे से अपनी शरीर चिरवाते थे

निरगुन कौन देस को बासी?
मधुकर कहि समुझाइ सौंह दे, बूझति साँच न हाँसी।
को है जनक, कौन है जननी, कौन नारि, को दासी?
कैसो बरन, भेष है कैसो, किहि रस में अभिलाषी?
पावैगो पुनि कियौ आपनो, जो रे करैगी गाँसी।
सुनत मौन ह्वें रह्यौ बावरौ, सूर सबै मति नासी।। 36।।

सौंह	=	सौगंध
हँसी	=	हँसी-मजाक

बरन	=	वर्ण (शरीर का रंग)
गाँसी	=	कपट के बातें
बावरो	=	पागल सहश

भौरे के बहाने से उद्धव को संबोधित करती हुई गोपिकाएँ उनसे कहती हैं कि- यह निर्गुण किस देश का निवासी है, इसके पिता कौन है, इसकी मां कौन है, इसकी पत्नी कौन है, और इसकी दासी कौन है- मैं मजाक कर रही हूँ, सही-सही बातें जानना चाहती हूँ। उस निर्गुण के शरीर का वर्ण क्या है? उसकी वेशभूषा कैसी है और किस रस के चखने की अभिलाषा रखता है।

▶ गोपिकाओं के वाद सुनकर हतप्रभ उद्भव का चित्रण

हे समर रूपी उद्धव यदि सारी बातें बताओगे तो अपना किया हुआ तुझे अवश्य मिलेगा गोपियों की इन स्वाभाविक तर्कों से युक्त वाणी को सुनकर उद्धव पागल जैसे हो गए और सूरदास कहते हैं कि उनकी सारी बुद्धि विनिष्ट सी हो उठी।

विशेष - निर्गुण के जो भी विशेषण बताए गए हैं, गोपियाँ उन्हीं के आधार लेकर उद्धव को भली भाँति हतप्रभ कर देती हैं। निर्गुण की विशेषताएँ ही यहाँ उसके लिए लोकभावना के संदर्भ में विरोधी बन जाती हैं।

काहे को गोपीनाथ कहावत?
जो पै मधुकर कहत हमारे गोकुल काहे न आवत?
सपने की पहिचानि जानि कै हमहि कलंक लगावत।
जो पै स्याम कूबरी रीझे सो किन नाम धरावत?
ज्यों गतराज काज के औसर औरे दसन दिखावत।
कहत सुनन को हम हैं ऊधो सूर अनत बिरमावत।। 37।।

गोपीनाथ	=	श्रीकृष्ण
विटमावत	=	मोहित करना काहे को, क्यों (प्रकारांतर से व्यर्थ ही)

गोपियाँ भ्रमर के बहाने उद्धव को संबोधित करती हुई कहती हैं कि श्रीकृष्ण व्यर्थ ही अपने को गोपीनाथ कहलवाते हैं। हे भ्रमर यदि वे हमारे अर्थात् हम गोपिकाओं के कृष्ण हैं तो यहाँ गोकुल में क्यों नहीं चले आते? हमारी जान पहचान को स्वप्न जैसे हृदय में जान पहचान मानकर फिर हमें कलंकित क्यों कर रहे हैं? यदि वे श्रीकृष्ण कुब्जा पर रीझ गए हैं तो वह (गोपीनाथ का बाना यश) धारण करके अपने को क्यों गोपीनाथ कहकर बुलवाते हैं। जैसे हाथी के दाँत दिखाने के दूसरे और कार्य करने (खाने आदि) के लिए दूसरे हैं, ठीक उसी प्रकार हम गोपिकाएँ तो उनकी कहने सुनने के लिए हैं, और वे कृष्ण दूसरे स्थान पर दूसरों को (कुब्जादि) मोहित कर रहे हैं।

▶ अलंकारयुक्त काव्यमय भाषा

विशेष - संपूर्ण व्यंजना का आधार 'गोपीनाथ' शब्द है। सूर अपने यहाँ अर्थ संदर्भ को गोपिनाथ शब्द से जोड़कर स्पष्ट करते हैं। लोकोक्ति रूप में प्रचलित 'हाथी के दांत खाने को और दिखाने को और' को तोड़कर वे उसका उदाहरण अलंकार के रूप में काव्यमय प्रयोग कर रहे हैं।

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहे।

यह ब्योपार तिहारो ऊधौ, ऐसोई फिरि जैहै।।

यह जापे लै आये हौ मधुकर, ताके उर न समैहे।

दाख छांडि कैं कटुक निबौरी को अपने मुख खैहे।।

मूरी के पातन के कैना को मुकताहल देहै।

सूरदास, प्रभु गुनहिं छांड़िकै को निरगुन निरबैहै।। 38।।

ठगोरी	=	ठगमाया
मूरी	=	मूली म
दाख	=	द्राक्षा-किसमिस
कटुक निबौरी	=	कड़वी नीम की कली
निरबैहें	=	निर्वाह करेगा
मुक्ताहाम	=	मोती

गोपिकाएँ उद्धव को संबोधित करती हुई कहती है कि- हे उद्धव! तुम्हारे योग की ठग माया इस ब्रज प्रदेश में न बिकेगी। मूली के पत्तों के बदले भला यहाँ कौन तुम्हें मोती देगा। हे उद्धव! तुम्हारा यह व्यापार यहाँ जैसा- का- तैसा ही रखा रह जाएगा या फिर आप जिन से लेकर इसे यहाँ आए हों उन्हीं के पेट में (मन में) यह बात समाएगी। हम गोपियों के पल्ले नहीं पड़ेगी। क्या यह संभव है, द्राक्षा (किसमिस जैसे मेवे) का परित्याग करके कोई कड़वी नीम की फली खाएगा। गुण को आधार बनाकर श्याम कृष्ण ने हमें मुग्ध (स्व वश) कर रखा है, अब भला निर्गुण का निर्वाह कौन कर पाएगा।

▶ गोपिकाएँ द्वारा उद्भव और उनकी योग-साधना का तिरस्कार

विशेष- गोपीकाएँ क्रय-विक्रय का संदर्भ रखकर उद्धव द्वारा ले आए योग का तिरस्कार करती हुई गुण से समन्वित श्रीकृष्ण को स्वीकार करने की बात करती है। निर्गुण या गुण विहीन कि नहीं निर्गुण तो एवं सगुण अतुल को भी गोपीओं के इस कदर में भरपूर व्यंजना मिलती है।

दाख छाँड़िके ....खैहें- दृष्टांत अलंकार तथा गुन निरगुन में श्लेष अलंकार गुन-गुणयुक्त, सगुण, निरगुन-बिना किसी गुण के निर्गुण ब्रह्म।

मधुकर स्याम हमारे ईस।

तिनकौ ध्यान धरैं निसि बासर, औरहिं नवै न सीस।।

जोगिनि जाइ जोग उपदेसहु, जिनके मन दस बीस।

एकै चित एकै वह मूरति, तिन चितवति दिन तीस।।

काहे निरगुन ग्यान आपनौ, जित कित डारत खीस।

'सूरदास' प्रभु नंदनँदन बिनु, हमरें को जगदीस।। 39।।

खींस	=	नष्ट करना (बरबाद करना)
दिनतीस	=	निरन्तर

भ्रमर को संबोधित करती हुई गोपिकाएँ उद्धव से कहते हैं कि- उद्धव! श्री कृष्ण ही हमारे स्वामी हैं। हम तो रात दिन उन्हीं के ध्यान में डूबी रहती हैं- और किसी के प्रति हमारा स्नेह समर्पित नहीं हो सकता। इस योग का उपदेश योगिनियों को करें जिनके चित्त में अनेक (दस बीस) व्यक्ति या अनेक वासनाएँ तथा आकांक्षाएँ हैं। हमारे लिए तो वही श्रीकृष्ण ही एकमात्र ध्यानमूर्ति हैं, उनके लिए हमारा चित्त भी एकमेव (एकाग्र) है और उन्हीं को हम तीसों दिन अर्थात् निरंतर देखती रहती हैं।

▶ श्रीकृष्ण के बिन गोपियों के लिए अन्य स्वामी नहीं

हमारी इस स्थिति को देखते हुए हे उद्धव! अपने इस निर्गुण ब्रह्म के ज्ञान को जहाँ-तहाँ क्यों नष्ट करते हो। निष्कर्ष निकालती हुई कहती हैं कि श्रीकृष्ण के बिना हमारे और दूसरे जगदीश (स्वामी) और कौन है?

विशेष - गोपिकाएँ श्रीकृष्ण के प्रति अतिशय अनन्यता का चित्रण करती हुई कहती हैं, उनके प्रति ही हमारी अनन्य गति हैं। सूर भ्रमरगीत में भागवत कथा के मर्म श्रीकृष्ण के प्रति सर्वस्व समर्पण को यहाँ व्यंजित कर रहे हैं। गोपिकाओं के प्रेमी श्रीकृष्ण और भगवान श्रीकृष्ण यहाँ दोनों एकमेव हो गए हैं।

उधो, मन न भए दस बीस।
एक हुतो सो गयौ स्याम संग, को अवराधै ईस।।
सिथिल भईं सबहीं माधौ बिनु जथा देह बिनु सीस।
स्वासा अटकिरही आसा लगि, जीवहिं कोटि बरीस।।
तुम तौ सखा स्यामसुन्दर के, सकल जोग के ईस।
सूरदास, रसिकन की बतियाँ पुरवौ मन जगदीस।। 40।।

हुतौ	=	था
अवराधैं	=	आराधना करे
देही	=	चैतन्यात्मा

उद्धव को संबोधित करती हुई गोपिकाएँ कहती हैं हे उद्धव! किसी के दस-बीस मन नहीं होते, एक ही होता है। हम गोपिकाओं का वह मन अकेला था- वह श्याम कृष्ण के साथ मथुरा चला गया और कौन सा मन शेष है, जो तुम्हारे निर्गुण ब्रह्म की उपासना करे।

▶ श्रीकृष्ण के प्रति गोपिकाओं के मन में अटूट संबन्ध

बिना श्री कृष्ण के इंद्रियाँ शिथिल हैं, उसी प्रकार जैसे चैतन्यात्मा शून्य सिर वह केवल दिखावे के लिए है। जब तक श्रीकृष्ण के प्रति (मिलने की) आशावृति है तभी तक इस शरीर में श्वास चल रही है और (इसी आशा में) हम करोड़ो वर्ष भी जी लेंगी। तुम तो श्याम कृष्ण के साथी हो, सम्पूर्ण में योग विद्याओं के स्वामी (ज्ञाता) भी किंतु हम गोपियों के पास तो अपने नंद पुत्र श्रीकृष्ण के अतिरिक्त और कोई जगदीश नहीं है।

विशेष- गोपिकाएँ अपने तर्क द्वारा अपने प्रिय कृष्ण में ईश्वरदत्त का भी आरोपण कर देती हैं। क्योंकि कवि का यहाँ मंतव्य भी यही है। 'और जगदीश' शब्द में आर्थी व्यंजना है जिसमें प्रेमी को ही सर्वस्व मारने का भाव सन्निहित है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

हिन्दी काव्य में भ्रमरगीत अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। सूरदास, नन्ददास, रत्नाकर, हरिऔध तथा सत्यनारायणजी ने इस सम्बन्ध में बड़े सुन्दर काव्य की रचना की है।। भ्रमरगीत परम्परा अब उस काव्य के लिए रूढ़ प्रयोग हो गया है जिसमें उद्धव-गोपी संवाद होता है। भ्रमरगीत का तात्पर्य उस उपालम्भ काव्य से है जिसमें नायक की निष्ठुरता एवं लम्पटता के साथ-साथ नायिका की मूक व्यथा, विरह वेदना का मार्मिक चित्रण करते हुए नायक के प्रति नायिका के उपालम्भों का चित्रण किया जाता है। रामचरितमानस में श्रृंगार रस का शिष्ट एवं मर्यादित वर्णन है। इस ग्रन्थ में वे एक श्रेष्ठ कवि के साथ-साथ एक उपदेशक के रूप में भी सामने आते हैं। रामचरितमानस में सर्वत्र समन्वय की विराट चेष्टा की गई है। शैव और वैष्णव का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, ज्ञान और भक्ति का समन्वय, राजा और प्रजा का समन्वय सब कुछ इस ग्रन्थ में है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. लोकनायक तुलसीदास।
2. भ्रमरगीत परंपरा में सूरदास।
3. तुलसीदास के काव्यसौष्ठव पर आलेख लिखिए।
4. रामचरितमानस पर टिप्पणी लिखिए।
5. सूरदास के काव्यसौष्ठव पर आलेख लिखिए।
6. विनय पद पर आलेख लिखिए।
7. सगुण और निर्गुण के साम्य-वैष्म्य पर टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
2. हिंदी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
3. हिंदी साहित्य का इतिहास - संपादक -डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. श्री रामचरितमानस द्वितीय सोपान - अयोध्याकाण्ड - सं योगेन्द्र प्रताप सिंह, लोकभारती प्रकाशन
2. प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य भारती - सं योगेन्द्र प्रताप सिंह, लोकभारती प्रकाशन

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

रीतीकालीन काव्य

BLOCK-04

Block Content

Unit 1: रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ, प्रमुख कवि, रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ

Unit 2: केशवदास (3 Dohas) Detailed Study

Unit 3: बिहारी (5 Dohas) Detailed Study

Unit 4: भूषण (3 Dohas) Detailed Study

इकाई : 1

रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ, प्रमुख कवि, रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- रीतिकालीन काव्य से परिचित होता है
- रीतिकालीन कवियों से परिचित होता है
- रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ समझता है
- रीतिकालीन प्रवृत्तियों से अवगत होता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकाल को दो भागों-(पूर्वमध्य काल और उत्तर मध्यकाल)-में विभक्त किया गया है। 'पूर्व मध्यकाल' 'भक्तिकाल' के नाम से जाना जाता है और उत्तर मध्यकाल को 'रीतिकाल' के नाम से अभिहित करते हैं। रीतिकाल की कालावधि सं० 1700 से 1900 अर्थात सन 1645 ई से 1845 ई तक मानी जाती है। दो सौ वर्ष के इस काल को इतिहासकारों ने विविध नाम दिये। मिश्रबंधुओं ने इसे 'अलंकृत काल', आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'रीतिकाल', पं विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'श्रृंगारकाल' और राम शंकररसाल ने 'कलाकाल' नाम से अभिहित किया। 'रीतिकाल' नाम आज अधिक मान्य और प्रसिद्ध है।

रीतिकालीन काव्य धारा का विकास कविता की रीति के आधार पर हुआ। यहाँ 'रीति' शब्द का अर्थ संस्कृत के काव्य शास्त्रीय 'रीति' शब्द से भिन्न है। संस्कृत में रीति को काव्य की आत्मा सिद्ध करने और रीति के आधार पर काव्य की श्रेष्ठता सिद्ध करने की वकालत की गयी। किन्तु विवेच्य युग में रीति को काव्य-रचना की प्रणाली के रूप में ग्रहण करने की अपेक्षा, प्रणाली के अनुसार काव्य-रचना करना ही रीति का अर्थ माना गया। वस्तुतः रीति काव्य ऐसा काव्य है जो अलंकार, रस-गुण, ध्वनि, नायिका-भेद आदि काव्यशास्त्रीय प्रणालियों के आधार पर रचा गया हो। विभिन्न लक्षणों के आधार पर काव्य-रचना करने की पद्धति ही रीति नाम से प्रसिद्ध हुई और यह पद्धति जिस काल में प्रमुखता से ग्रहण की गयी वह काल 'रीतिकाल' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

Keywords / मुख्य बिन्दु

काव्याङ्ग निरूपण, लक्षणग्रंथ, आश्रित कवि, रीतिबद्ध, रीतिमुक्त, रीतिसिद्ध।

Discussion / चर्चा

रीतिकाल में 'रीति' शब्द का प्रयोग काव्याङ्ग निरूपण के अर्थ में हुआ है। हिन्दी साहित्य में रीतिकाल सं० 1700 से 1900 तक स्वीकार किया जाता है। इस संपूर्ण कालावधि में निरंकुश राजतंत्र का बोलबाला रहा रीतियुग में नारी, विलास का साधन मानी जाती थी। नारी-जीवन की सार्थकता पुरुष को रिझाकर उसकी विलास-क्रीड़ा का साधन बनने में समझी जाती थी। समाज में सती-प्रथा, पर्दा-प्रथा और बाल-विवाह को प्रश्रय मिल रहा था। जन-साधारण में अंध-विश्वास तथा रूढ़ियाँ घेर कर गई थी। जनता प्रायः अशिक्षित थी।

4.1.1 रीतिकालीन काव्य

काव्याङ्ग चर्चा इस काल की सामान्य प्रवृत्ती थी। रीतिकाल में यद्यपि भक्ति, नीति, वीरता आदि अनेक विषयों पर कविताएँ लिखी गई, किन्तु प्रधानता श्रृंगारिक रचनाओं की रही। वस्तुतः इस श्रृंगाराधिक्य के मूल में तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक परिस्थितियाँ कार्य कर रही थीं। संक्षेप में राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियों ने रीतियुग के काव्य के श्रृंगारपरक, शौर्यपरक, प्रेमपरक आदि वर्ण्य-विषयों की पृष्ठभूमि तैयार की।

> ▶ संस्कृत लक्षणों के अनुरूप साहित्य सृजन

4.1.2 रीति काल का वर्गीकरण

रीतिकाल का वर्गीकरण 'रीति' को आधार बनाकर तीन भागों में किया गया है-

1. रीतिबद्ध, 2. रीतिमुक्त, 3. रीतिसिद्ध।

1. **रीतिबद्ध-** इस वर्ग में वे कवि आते हैं जो रीति के बंधन में बंधे हुए हैं, अर्थात् जिन्होंने रीति ग्रंथों की रचना की। लक्षण ग्रन्थ लिखने वाले इन कवियों में प्रमुख हैं- चिन्तामणि, मतिराम, देव, जसवंतसिंह, कुलपति मिश्र, मंडन, सुरति मिश्र, सोमनाथ, भिखारीदास, दूलह, रघुनाथ, रसिकगोविंद, प्रतापसिंह, ग्वाल कवि आदि।
2. **रीतिमुक्त-** इस वर्ग में वे कवि आते हैं जो रीति के बंधन से पूर्णतः मुक्त हैं अर्थात् इन्होंने काव्यांग निरूपण करने वाले ग्रंथों, लक्षण ग्रंथों की रचना नहीं की तथा हृदय की स्वतंत्र वृत्तियों के आधार पर काव्य रचना की। इन कवियों में प्रमुख हैं- घनानन्द, बोधा, आलम और ठाकुर।
3. **रीति सिद्ध-** इस वर्ग में वे कवि आते हैं जिन्होंने रीति ग्रन्थ नहीं लिखे किन्तु रीति की उन्हें भली-भांति जानकारी थी। वे रीति में पारंगत थे। इन्होंने इस जानकारी का पूरा-पूरा उपयोग अपने काव्य ग्रंथों में किया। इस वर्ग के प्रतिनिधि कवि हैं- बिहारी। उनका एकमात्र ग्रन्थ 'बिहारी-सतसई' है।

> ▶ रीतिकालीन कवियों का वर्गीकरण 3 रूपों में

4.1.3 प्रमुख रीतिकालीन कवि

रीतिवादी कवि राज्याश्रित था। कवि केवल कवि नहीं था। शास्त्रीय परम्पराओं और ज्ञान का बोझ भी उसे ढोना पड़ रहा था। रीति के बंधन में बंधे हुए और रीति परंपरा का अनुसरण कर लक्षण ग्रंथों की रचना किए गए। रीतिबद्ध कवियों में प्रमुख चिंतामणि त्रिपाठी, केशवदास, देव, मंडन, मतिराम, सुरति मिश्र, कुलपति मिश्र, पद्माकर, भिखारी दास, ग्वाल कवि आदि।

> ▶ राज्याश्रित रीतिकालीन कवि

4.1.3.1 चिंतामणि त्रिपाठी

चिंतामणिजी का जन्मकाल संवत 1666 के लगभग और कविता-काल संवत 1700 के

आसपास ठहरता है। इनका 'कविकुलकल्पतरु' नामक ग्रंथ सं० 1707 में लिखा है। इनके संबंध में शिवसिंहसरोज में लिखा है कि ये 'बहुत दिन तक नागपुर में सूर्यवंशी भोसला मकरंद शाह के यहाँ रहे और उन्हीं के नाम पर 'छंदविचार' नामक पिंगल का बहुत भारी ग्रंथ बनाया और 'काव्य-विवेक', 'कविकुल-कल्पतरू', 'काव्यप्रकाश', 'रामायण' ये पाँच ग्रंथ इनके बनाए हमारे पुस्तकालय में मौजूद हैं। इसके अलावा रसविलास, श्रृंगार मंजरी, कृष्ण चरित आदि रचनाएँ चिन्तामणि के हैं। ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि चिंतामणि ने काव्य के सब अंगों पर ग्रंथ लिखे। इनकी भाषा ललित और सानुप्रास होती थी। ये वास्तव में एक उत्कृष्ट कवि थे।

▶ रीतिकाल के उत्कृष्ट कवि चिंतामणि

4.1.3.2 आचार्य केशवदास

▶ आचार्य रामचंद्र शुक्लजी ने केशवदास को 'कठिन काव्य का प्रेत' कहा

आचार्य केशवदास को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने समय विभाग की दृष्टि से भक्तिकाल में स्थान दिया है, लेकिन प्रवृति की दृष्टि से वे रीतिकाल के अंतर्गत आते हैं। आचार्य केशव 'रीतिकाल का प्रवर्तक' और राजा रूद्रप्रताप के आश्रित थे। सनाढ्य ब्राह्मण पं. कृष्णदत्त के पौत्र और राजा मधुकर शाह से सम्मानित पं. काशीनाथ के पुत्र थे। ओरछा नरेश इन्द्रजीत सिंह इन्हें गुरु मानते थे। इनके द्वारा रचित ग्रन्थ हैं- रसिकप्रिया (1591), रामचन्द्रिका (1601), कविप्रिया (1601), रतनबावनी (1607 ई. के लगभग), वीरसिंहदेवचरित (1607), ज्ञानगीता (1610), जहाँगीर जसचन्द्रिका (1612), नखशिख और छन्दमाला। इन्होंने ब्रज भाषा में रचना की। ये संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे तथापि उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ हिन्दी है। इसमें बुन्देली, अवधी और अरबी-फारसी शब्दों का समावेश है। अधिक छन्द प्रयोग के लिए 'रामचन्द्रिका' को 'छन्दों का अजायबघर' कहा जाता है।

▶ 'रीतिकाल का प्रवर्तक'

4.1.3.3 देव

देव कवि रीति-काल के श्रेष्ठ कवि थे। उनका पूरा नाम देवदत्त द्विवेदी था। उनका जन्म सन् 1673 ई. में उत्तर प्रदेश के इटावानगर में हुआ था। देव एक प्रतिभावान कवि होने के साथ-साथ श्रेष्ठ आचार्य भी थे। औरंगजेब का पुत्र आजमशाह, भवानीदत्त वैश्य, कुशलसिंह,

सेठ भोगीलाल, राजा उद्योतसिंह, सुजानमणि, अली अकबर खाँ, मोतीलाल आदि अनेक आश्रयदाताओं के मध्य अपना काव्य-जीवन व्यतीत किया। शिवसिंह 'सरोज' के अनुसार देव के ग्रंथों की संख्या 72 है। भावविलास, अष्टयाम, भवानीविलास, सुजानविनोद, प्रेमतरंग, रागरत्नाकर, कुशलविलास, देवचरित, प्रेमचंद्रिका, जातिविलास, रसविलास, काव्य रसायन आदि इनमें प्रमुख हैं। देव रसिक और श्रृंगारी कवि थे। कवि देव की रचनाओं में भाव सौंदर्य और काव्य-कौशल दोनों का समन्वय है। इनके रचनाओं में एक ओर रूप सौंदर्य का अलंकारिक चित्रण देखने को मिलता है तो दूसरी ओर प्रेम और प्रकृति के प्रति कवि के भावों की अतरंग अभिव्यक्ति देखने को मिलती है।

▶ एक श्रेष्ठ आचार्य, प्रतिभावान, रसिक एवं श्रृंगारी कवि

4.1.3.4 भिखारी दास

रीतिकाल के श्रेष्ठ हिन्दी कवि और आचार्य भिखारीदास का जन्म प्रतापगढ़ के निकट टेंउगा नामक स्थान में सन् 1721 ई० में हुआ था। भिखारीदास द्वारा लिखित सात कृतियाँ प्रामाणिक मानी गईं हैं- रस सारांश, काव्य निर्णय, श्रृंगार निर्णय, छन्दोर्णव पिंगल, अमरकोश या शब्दनाम प्रकाश, विष्णु पुराण भाषा और सतरंज शासिका हैं। भिखारी दास ने साहित्यिक और परिमार्जित भाषा का व्यवहार किया है। श्रृंगार ही उस समय का मुख्य विषय था। भिखारी दास में देव की अपेक्षा अधिक रसविवेक था। इनका 'श्रृंगारनिर्णय' अपने ढंग का अनूठा काव्य है।

▶ 'श्रृंगारनिर्णय' अनूठा काव्य

काव्यांगों के निरूपण में भिखारी दास को सर्वप्रधान स्थान दिया जाता है क्योंकि इन्होंने छंद, रस, अलंकार, रीति, गुण, दोष शब्दशक्ति आदि सब विषयों का औरों से विस्तृत प्रतिपादन किया है। इनकी विषय प्रतिपादन शैली उत्तम है और आलोचनाशक्ति भी इनमें कुछ पाई जाती है; जैसे हिन्दी काव्यक्षेत्र में इन्हें परकीया के प्रेम की प्रचुरता दिखाई पड़ी, जो रस की दृष्टि से रसाभास के अंतर्गत आता है। बहुत से स्थलों पर तो राधाकृष्ण का नाम आने से देव काव्य का आरोप हो जाता है और दोष का कुछ परिहार हो जाता है, पर सर्वत्र ऐसा नहीं होता।

▶ काव्यांगों के निरूपण में प्रमुख

4.1.3.5 ग्वाल कवि

ग्वाल कवि मथुरा निवासी सेवाराम भट्ट के पुत्र थे। इनका जन्म वृंदावन में हुआ। ये नाभा-नरेश महाराज जसवंतसिंह, महाराज रणजीतसिंह तथा अंत में रामपुर के नवाब के आश्रय में रहे। कहते हैं गुरु कृपा से ये एक ही समय में आठ काम कर सकते थे- ग्रंथ रचना, कविता बनाना, नाम जपना, शतरंज खेलना, बातचीत करना, अदृष्ट कथन तथा समस्या पूर्ति करना। ग्वाल ने प्रचुर काव्य रचना की है। इन्होंने पिंगल, रस, अलंकार आदि सभी विषयों पर रचना की है। इनके मुख्य ग्रंथ हैं- 'जमुना-लहरी', 'रसिकानंद', 'हमीर-हठ', 'राधाष्टक', 'कविदर्पण' और 'रसरंग'। उत्तर रीतिकालीन कवियों में ग्वाल विख्यात हैं। इनकी कविता में चमत्कार है।

▶ विद्वान एवं कुशल कवि

4.1.3.6 मतिराम

मतिराम का जन्म तिकवाँपुर, ज़िला कानपुर में संवत 1674 के लगभग हुआ था। मतिराम बूँदी के महाराव भावसिंह के यहाँ बहुत समय तक रहे और उन्हीं के आश्रय में अपना 'ललित ललाम' नामक अलंकार का ग्रंथ संवत 1716 और 1745 के बीच किसी समय बनाया। बिहारी सतसई के ढंग पर इन्होंने एक 'मतिराम सतसई' भी बनाई, जो हिन्दी पुस्तकों की खोज में मिली है। इसके दोहे सरसता में बिहारी के दोहों के समान ही हैं। 'रसराज' और 'ललित ललाम' मतिराम के ये दो ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध हैं, क्योंकि रस और अलंकार की शिक्षा में इनका उपयोग होता आया है। अपने विषय के ये अनुपम ग्रंथ हैं। उदाहरणों की रमणीयता

▶ 'ललित ललाम', 'मतिराम सतसई' -रस एवं अलंकार ग्रंथ

से अनायास रसों और अलंकारों का अभ्यास होता चलता है।

4.1.3.7 घनानन्द

रीतिकाल की तीन मुख्य काव्यधाराओं- रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त में से घनानंद रीतिमुक्त स्वच्छंद काव्यधारा के प्रसिद्ध और जाने माने कवि हैं। घनानंद के जन्म के संबंध में अनेक विद्वानों के अपने-अपने मत हैं। श्री आचार्य शुक्ल और अधिकतर विद्वानों के मतानुसार घनानंद का जन्म संवत 1746 में दिल्ली में है। घनानंद एक कायस्थ परिवार से सम्बन्ध रखते थे। घनानंद को साहित्य और संगीत में महारथ हासिल थी। कुछ विद्वानों के मतानुसार आप कवि अबुल फज़ल के शिष्य थे। आप दिल्ली नरेश मोहम्मद शाह के दरबार में मीर मुंशी के पद पर थे। घनानंद ने फारसी भाषा को बहुत ही अच्छे ढंग व बहुत ही जल्दी फारसी भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। कवि घनानंद दिल्ली नरेश मोहम्मद शाह के दरबार में मीर मुंशी थे।

▶ दिल्ली नरेश मोहम्मद शाह के दरबार में मीर मुंशी

कहा जाता है कि वे मोहम्मद शाह के दरबार की 'सुजान' नामक वेश्या से अत्यधिक प्रेम करते थे। उनके प्रेम से निराश होने पर इन्हें संसार से वैराग्य हो गया।

▶ स्वच्छंद प्रेम व्यंजना और रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रमुख कवि

घनानंद को 'आनंदघन' के नाम से भी जाना जाता है। लोगों का मानना है कि घनानंद का मूल नाम आनंदघन था। लेकिन छंदात्मक लय-विधान की वजह से यह कवि आनंदघन की जगह घनानंद नाम से आम लोगों के बीच जाने गए। इनके कारण घनानंद प्रसिद्ध हुए। घनानंद रीतिमुक्त स्वच्छंद काव्यधारा के प्रसिद्ध और जाने माने कवि है। इस काव्यधारा में इनका प्रमुख स्थान है। 'सुजान सागर', 'विरहलीला', 'कोकसार', 'कृपाकन्द', 'रसकेलिवल्ली' आदि इनके प्रमुख ग्रंथ हैं।

4.1.3.8 बोधा

बोधा 'राजापुर' ज़िला, बाँदा के रहने वाले सरयूपारी ब्राह्मण थे। पन्ना के दरबार में इनके संबंधियों की अच्छी प्रतिष्ठा थी। उसी संबंध से ये बाल्यकाल में ही पन्ना चले गए। इनका नाम 'बुद्धिसेन' था, पर महाराज इन्हें प्यार से 'बोधा' कहने लगे और वही नाम इनका प्रसिद्ध हो गया। इन्हें संस्कृत और फारसी का भी अच्छा ज्ञान था। 'शिवसिंह सरोज' में इनका जन्म संवत 1804 दिया हुआ है। इनका कविताकाल संवत 1830 से 1860 तक माना जा सकता है। बोधा एक बड़े रसिक जीव थे। 'विरहवारीश' के अतिरिक्त 'इश्कनामा' भी इनकी एक प्रसिद्ध पुस्तक है। इनके बहुत से फुटकल कवित्त, सवैये, इधर उधर पाए जाते हैं। बोधा एक रसोन्मत्त कवि थे, इससे इन्होंने कोई रीतिग्रंथ न लिखकर अपनी मौज के अनुसार फुटकल पद्यों की रचना की है। 'प्रेम की पीर' की व्यंजना भी इन्होंने बड़े मर्मस्पर्श युक्ति से की है।

▶ रीति कालीन रसिक कवि

4.1.3.9 आलम

रीतिकाल की रीतिमुक्त काव्य-धारा के प्रमुख कवियों में से एक है आलम। 'ब्रजभाषा' हेतु 'ब्रजभाषा ही न अनुमानों' को प्रमाणित करने के लिए भिखारी दास ने अपने 'काव्यनिर्णय' में जिन कवियों के नाम गिनाए हैं उनमें रहीम, रसखान, और रसलीन से पूर्व आलम को स्थान दिया है। 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' 'कविता कौमुदी', 'मिश्रबंधु विनोद', 'हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' आदि हिन्दी के अनेक ग्रंथों में अब तक यह प्रतिपादित किया जाता रहा है कि आलम नाम के दो कवि हुए हैं। एक आलम अकबर के समकालीन

▶ परिमार्जित भाषा के रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रेमोन्मत्त कवि

सूफ़ी कवि थे जिन्होंने 'माधवानल कामकंदला' की रचना की और दूसरे आलम औरंगजेब के पुत्र मुअज्जमशाह के आश्रित थे। यह दूसरे आलम ही रीतिकालीन प्रसिद्ध कवित्त-सवैया में श्रृंगारिक मुक्तकों के रचयिता थे। 'शेख' वाली किंवदंती भी इन्हीं के साथ संबद्ध है।

ब्रजभाषा साहित्य में आलम की स्त्री तथा स्वयं एक श्रेष्ठ कवयित्री के रूप में शेख की पर्याप्त मान्यता रही है। आलम के कवित्त-संग्रह 'आलमकेलि' में कतिपय छंद 'शेख' छाप के भी उपलब्ध होते हैं। आलम की तीन कृतियाँ 'माधवानल कामकंदला', 'श्याम सनेही', और 'आलम के कवित्त' प्रामाणिक मानी जाती हैं। एक चौथी कृति 'सुदामाचरित्र' का भी उल्लेख मिलता है पर वह संदिग्ध ही लगता है। 'माधवानल कामकंदला' में माधवानल और कामकंदला के पारस्परिक प्रेम की कथा प्रेमाख्यानक शैली में सूफी प्रभाव के साथ वर्णित की गयी है

- मुक्तकों के कारण ख्याति प्राप्त कवि

4.1.3.10 कवि भूषण

कवि भूषण जी रीतिकाल के मुख्य दो कवि बिहारी और केशव में से मात्र एक कवि थे। कवि भूषण जी को भारतीय संस्कृति का प्रमुख भक्त माना जाता है। जब सब रीतिकाल युग के कवि अपने राजाओं के लिए श्रृंगार रस में रचनाएँ कर रहे थे उसी समय भूषण जी ने अपनी ओजस्वी वाणी से राष्ट्रीयता का सिंहनाद किया और उन्होंने अपने काव्य ग्रंथो में राष्ट्रीयता के प्रति जो प्रेम भाव जागृत किया इसके लिए वे आज भी लोगों के द्वारा सराहे जाते हैं। भूषण जी वीर रस के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। शिवराज भूषण, शिवाबावनी, छत्रसाल दशक आदि महाकवि भूषण के द्वारा लिखे हुए प्रमुख तीन ग्रन्थ हैं। ये रचनायें वीर रस से युक्त हैं। इन ग्रंथो में वीर रस के कवि शिवाजी और छत्रसाल की वीरता का वर्णन किया गया है। इनके अन्य ग्रन्थ भूषण उल्लास, भूषण हजारा, दूषनोल्लासा भी हैं।

- रीतिकाल में वीर काव्य रचने का श्रेय

4.1.3.11 ठाकुर

ठाकुर कवि-ठाकुर रीतिकालीन रीतिमुक्त स्वछंद प्रेम परिपाटी के कवि थे। ये जैतपुर (बुंदेल-खंड) के राजा केसरी सिंह के दरबारी कवि थे। इनका जन्म सन् 1770 के आसपास माना जाता है और देहावसान सन् 1827 के आसपास हुआ था। इनके पिता का नाम गुलाबराय था, जो ओरछा नरेश के ओहदेदार थे। पद्माकर के आश्रयदाता हिम्मत बहादुर ने भी इन्हें आमंत्रित और सम्मानित किया था। ठाकुर का साहित्य मात्रा में अधिक नहीं है। इनके दो संग्रह उपलब्ध हैं- 'ठाकुर ठसक' और 'ठाकुर शतक'। जिनमें से 'शतक' के कुछ पद्य 'ठसक' में भी आ गए हैं।

- रीतिकालीन रीतिमुक्त स्वछंद प्रेम परिपाटी के कवि

रीतिकालीन समाज में दरबारी वातावरण में जहाँ कवि रीति की बंधी बधाई परिपाटी पर काव्य रचना कर रहे थे और कवि प्रतिभा के अभाव में काव्य रचना कर धनोपार्जन कर रहें थे, वहीं ठाकुर रीतिकाल की रीतिमुक्त काव्यधारा के कवि थे, इन्होने रीति की बधी बंधाई पद्धति का निर्वाह नहीं किया और अपने काव्य के माध्यम से ऐसे कवियों का उपहास उड़ाया, जिनमें काव्य प्रतिभा नहीं थी और जो केवल धनोपार्जन के लिए पारंपरिक उपमानों को लेकर ही काव्य रचना करते हैं।

- उमँगी और महामौजियों के महाराज

आचार्य शुक्ल इनके सम्बन्ध में लिखते हैं- "ठाकुर बहुत ही सच्ची उमंग के कवि थे। इनमें कृत्रिमता का लेश नहीं। न तो कहीं व्यर्थ का शब्दाडम्बर है न कल्पना की झूठी उडान और न अनुभूति के विरुद्ध भावों का उत्कर्ष। भावों को यह कवि स्वभाविक भाषा में उतार देता है। बोलचाल की चलती भाषा में भावों को ज्यों का त्यों सामने रख देना इस कवि का लक्ष्य

- रीतिमुक्त प्रेमी कवियों की महत्वपूर्ण भावधारा के एक विख्यात कवि

रहा है। ब्रज भाषा की श्रृंगारी कविता प्रायः स्त्री पात्रों के ही मुख की वाणी होती है। अतः स्थान-स्थान पर लोकोक्तियों का जो सुंदर विधान इस कवि ने किया है इससे उक्तियों में और भी स्वभाविकता आ गई है।"

4.1.3.12 बिहारी लाल

बिहारी लाल

कवि बिहारीलाल हिन्दी साहित्य के रीति काल के प्रसिद्ध कवि रहे है। ये मूलतः श्रृंगार रस के कवि रहे हैं। इन्होंने सौंदर्य, प्रेम, श्रृंगार एवं भक्ति से परिपूर्ण काव्य रचना की। मुगलकालीन युग के कवि होने के कारण इनकी काव्य भाषा ब्रजभाषा रही है। कवि बिहारीलाल ने जयपुर नरेश सवाई राजा जयसिंह के दरबार के कवि के रूप में अनेक काव्य रचनाएँ की। बिहारीलाल की एकमात्र रचना 'बिहारी सतसई' है। यह मुक्तक काव्य है। इसमें 719 दोहे संकलित हैं। 'बिहारी सतसई' श्रृंगार रस की अत्यंत प्रसिद्ध और अनूठी कृति है। इसका एक-एक दोहा हिन्दी साहित्य का एक-एक अनमोल रत्न माना जाता है। बिहारीलाल की कविता का मुख्य विषय श्रृंगार है। उन्होंने श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का वर्णन किया है। संयोग पक्ष में बिहारीलाल ने हाव-भाव और अनुभवों का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण किया हैं।

▶ रीतिकाल के सर्वश्रेष्ठ श्रृंगार कवि

ऐसा कहा जाता है कि राजा जयसिंह अपनी रानी के प्रेम के कारण महल से बाहर नहीं निकलते थे और राज-काज पर कोई ध्यान नहीं देते थे, तब कवि बिहारी ने एक दोहा लिखकर उसके माध्यम से उन्हें पुनः राजकार्य के लिए प्रेरित किया वो दोहा इस प्रकार है-

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल.
अली कली ही सौं बंध्यो, आगे कौन हवाल।।"

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

रीतिकाल में वास्तव में साहित्य निर्माण के साथ-साथ रस, अलंकार, आदि काव्यांग पर विवेचना हुई। रीतिकालीन कविता में लाक्षणिक-प्रयोग अधिक मात्रा में दिखाई देते हैं। विषयों का संकोच-सा हो गया था। रीतिकालीन कवियों के प्रमुख वर्ण्य विषय प्रायः एक से थे। इसमें राज्य विलास, राज्य प्रशंसा, दरबारी कला विनोद, मुगलकालीन वैभव, अष्टयाम संयोग, वियोग वर्णन, ऋतु वर्णन, किसी सिद्धांत के लक्ष्य लक्षणों का वर्णन, श्रृंगार के अनेक पक्षों के स्थूल एवं मनोवैज्ञानिक चित्रों की अवधारणा आदि रहे। इसलिए कवियों को अपनी व्यक्तिगत प्रतिभा दिखलाने का मौका बहुत कम था।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. रीतिकालीन कवियों के बारे में टिप्पणी लिखें।
2. रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ क्या-क्या हैं ?
3. 'रीति सिद्ध काव्याधरा' के प्रमुख कवि कौन-कौन हैं ?
4. 'रीति' का अर्थ क्या है? रीतिकालीन काव्य पर टिप्पणी लिखें।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिंदी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त
3. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास - गुलाबराय

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिंदी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह - वाणी प्रकाशन, दिल्ली

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 2

केशवदास (3 Dohas)

Detailed Study

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- रीतिकालीन कवि आचार्य केशवदास के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त होता है
- केशव के प्रसिद्ध दोहों से परिचित होता है
- केशवदास की काव्यागत विशेषताएँ समझता है
- 'रामचंद्रिका' से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

रीतिकालीन कवि सचेत रूप से कविता लिख रहे थे जो उनके जीविकोपार्जन से जुड़ी हुई थी। द्रव्योपलब्धि राजाओं, महाराजाओं, सामंतों, जागीरदारों से ही हो सकती थी। इनमें से कुछ स्वयं कविता करते थे और काव्यप्रेमी थे। लेकिन कुछ के लिए कवि दरबार की शोभा थी। श्रृंगार की अदम्य लिप्सा इस युग के जीवन और साहित्य, दोनों में स्पष्ट प्रतिबिंबित है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

आचार्यत्व, कठिनकाव्य का प्रेत, अलंकारवादी कवि, हृदयहीन कवि

Discussion / चर्चा

आचार्य केशव दास को हिन्दी साहित्य के पहले आचार्य के रूप में भी ज्यादा लोग पहचानते हैं। केशवदास को शास्त्रों का बहुत ज्ञान था। हिन्दी साहित्य में उनका एक अलग ही स्थान माना जाता है। केशव का जीवन दरबार के ठाठ-बाट में बीता था। राजविलास की चटक-मटक और विलासिता में रहकर वे स्वयं भी विलासी हो गये थे, इसीलिए उनकी कविता में हृदय की अपेक्षा बुद्धि पक्ष की प्रबलता है।

4.2.1 आचार्य केशवदास

केशव हिन्दी के प्रथम आचार्य और रीति मार्ग के प्रवर्तक माने जाते हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास में उनका महत्त्व कवि के रूप में नहीं, आचार्य के रूप में है। हिन्दी में काव्यशास्त्र लिखने की परम्परा को जन्म देने वाले आचार्य केशव ही हैं। हिन्दी की रीतिकाव्य परम्परा को

जन्म देकर केशव ने एक युग प्रवर्तक का कार्य किया है। संस्कृत के महान पंडित, काव्यशास्त्र के ज्ञाता और राजगुरु होने के कारण सहज ही आचार्यत्व का गुण उनमें प्रतिष्ठित हो गया था। 'रसिक प्रिया' और 'कविप्रिया' उनके आचार्यत्व के स्पष्ट प्रमाण हैं। शुक्ल जी के अनुसार केशव में वह सहृदयता एवं भावुकता नहीं थी जो कि एक कवि में होनी चाहिए। वे संस्कृत साहित्य से सामग्री लेकर अपने पाण्डित्य और रचना कौशल की धाक जमाना चाहते थे। और कहीं-कहीं अनुवाद अच्छा न होने के कारण उक्ति विकृत हो गयीं। यही कारण था कि उनका काव्य जनसामान्य के लिए कठिन है।

▶ 'कठिन काव्य का प्रेत' नाम से प्रसिद्ध

4.2.2 केशवदास की काव्यागत विशेषताएँ

केशव अलंकारवादी कवि थे। केशवदास जी की शिक्षा संस्कृत विषय से प्रारम्भ हुई थी इन्होंने संस्कृत विषय से पांडित्य प्राप्त किया था। अलंकारों में दब कर उनकी कविता बोझिल हो गयी है। अतः उनकी कविता में रस परिपाक सुन्दर नहीं हो सका है। अपने 'रसिकप्रिया' ग्रन्थ में केशव ने यद्यपि नौ रसों का वर्णन किया है किन्तु उनका मूल प्रतिपाद्य श्रृंगार है। दरबारी कवि केशव अपने पांडित्यपूर्ण कार्य के कारण जाने जाते हैं। रसिकप्रिया, कविप्रिया, रामचंद्रिका, रतन बावनी, विज्ञान गीता, जहांगीर जस चंद्रिका, नख-शिख, वीरसिंहदेव चरित, आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ है।

जदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरस सरस सुवृत्त।
भूषण बिनु न बिराजई, कविता बनिता मित्त।।

(कविप्रिया)

हिन्दी साहित्य में सूर एवं तुलसीदास के बाद उनकी गणना की जाती है। इस प्रकार की एक उक्ति है-

सूर सूर तुलसी ससि उडूगन केशव दास।
अब के कवि खद्योत सम, जहं तहं करत प्रकास।।

4.2.3 दोहा 1, 2, 3 (रीति काव्य संग्रह से)

हिन्दी साहित्य में जितनी प्रताड़ना केशवदास को सहनी पड़ी, इतनी संभवतः अन्य किसी कवि को नहीं उन्हें कभी 'क्लिष्टकाव्य का प्रेत' कहा गया कभी पंडिताऊपन का आरोप उनपर लगाया गया और कभी उन्हें हृदयहीन कवि बताया गया। परंतु इस सबके बाद भी यह निर्विवाद है कि केशव अपने क्षेत्र में अद्वितीय है।

▶ 'क्लिष्टकाव्य' का प्रेत कहा गया

केशवदास की कृतियों में 'रामचंद्रिका' सर्वाधिक प्रसिद्ध है, जिसका रचनाकाल 1601 ई. है। इसमें रामकथा का वर्णन एवं रामकथा के प्रमुख प्रसंगों को चुनकर और उन्हें विभिन्न छंदों में क्रम देकर छंदबद्ध कर दिया गया है। 'रामचंद्रिका' में केशवदास ने रामकथा को नए तरीके से प्रस्तुत किया है। इसमें केशवदास ने उचित संबंध-निर्वाह नहीं किया है। इसमें मार्मिक प्रसंगों का ध्यान ठीक से नहीं रखा गया है। जैसे एक छंद में राम का राज्याभिषेक, दूसरे छंद में राम को वनवास व भरत को राज देने का वरदान मांगना चित्रित कर दिया है। शुक्ल जी ने कहा है कि केशव में संबंध निर्वाह की क्षमता नहीं थी। केशवदास को रामचंद्रिका के संवाद योजना, कथानक योजना में अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई है। इनके जैसा संवाद दुर्लभ है किंतु छंद योजना एवं कथा के मार्मिक प्रसंगों को केवल सूचना मात्र के रूप में प्रस्तुत करने के कारण

▶ संस्कृत के महान पंडित, काव्यशास्त्र के ज्ञाता और राजगुरु

'रामचंद्रिका' 'रामचरितमानस' की तरह लोक ग्राही न हो सकी।

1. **बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल,**
कठिन कराल त्यों अकाश दीह दुख कों।
विपति हरत इठि पद्मिनी के पात सम,
पंक ज्यों पताल पेलि पठ्वै कलुष कों।
दूरि कै कलंक-अंक भव-सीस-ससि सम,
राखत हैं 'केसोदास' के वपुष कों।
साँकरे की साँकरनि सन्मुख होत तोरै,
दसमुख मुख जोवें गजमुख मुख कों।। 1।।

शब्दार्थ

बालक	=	हाथी का बच्चा (प्रस्तुत पद में)
मृणालनि	=	कमलनाल
दीह	=	लंबा
कलुष	=	मलिन
कलंक अंक	=	कलंक का चिह्न
भवशीश शशि	=	महादेव जी के मस्तक पर स्थिर चंद्रमा
साँकरे	=	कष्ट
दशमुख	=	दसों दिशाओं के लोगों के मुख
मुख जोवें	=	मुख देखते हैं

सप्रसंग व्याख्या - इस वंदना में कठिन काव्य के प्रेत आचार्य 'केशवदास' ने गणेश जी की महिमा का बखान किया है। केशवदास श्री गणेश को प्रणाम करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार हाथी का बच्चा किसी भी समय कमल नाल को आसानी से तोड़ देता है, उसी प्रकार गणेश जी अपने भक्तों की भयानक विपत्तियों को किसी भी समय आसानी से दूर कर देते हैं। गणेश जी अपने भक्तों की विपत्तियों और संकटों को इस प्रकार दूर कर देते हैं, जिस प्रकार हाथी का बच्चा कमलिनी के पत्तों को आसानी से तोड़ देता है। गणेश जी अपने भक्तों के दुखों और संकटों को इस प्रकार पाताल लोक भेज देते हैं, जिस प्रकार हाथी का बच्चा आसानी से कीचड़ को मसल देता है। जिस प्रकार भगवान शिव ने चंद्रमा को अपने सिर पर धारण कर उसे कलंक से मुक्त कर दिया है, ठीक उसी प्रकार गणेश जी अपने भक्तों को कलंक मुक्त कर देते हैं। वे अपने भक्तों की सदैव रक्षा करते हैं तथा उनके संकट और विपत्तियों को दूर करते देते हैं। गणेश जी अपने भक्तों के संकटों की जंजीर को सामने आकर सरलता से तोड़ देते हैं। इसलिए चतुर्मुख अर्थात् चार मुख वाले ब्रह्मा, एक मुख वाले विष्णु और शिव दया भाव की दृष्टि से भगवान श्री गणेश की ओर देखते हैं।

▶ प्रस्तुत वंदना में कवि केशव के भाव पक्ष और कलापक्ष दोनों का समुचित समन्वय है

2. **बानी जगरानी की उदारता बखानी जाय,**
ऐसी मति कहौ धौं उदार कौन की भई।
देवता प्रसिद्ध सिद्ध ऋषिराज तपवृद्ध,

कहि कहि हारे सब कहि न केहूँ लई।
भावी भूत वर्तमान जगत बखानत है,
केशौदास केहू ना बखानी काहू पै गई।
पति वर्णे चार मुख पूत वर्णे पाँच मुख,
नाती वर्णे षटमुख तदपि नई नई।।

शब्दार्थ

बानी	=	वाणी या माँ सरस्वती
जगरानी	=	जगत की स्वामिनी
उदारता	=	महिमा या बड़प्पन
बखानी जाइ	=	वर्णन करना
मति	=	बुद्धि
उदित	=	प्रगट
तपवृद्ध	=	अधिक तपस्या करने वाले
भावी	=	भविष्य काल
भूत	=	बीता चुका काल
जगत	=	संसार
पति	=	ब्रह्मा जी
पूत	=	शिव जी
नाती	=	कार्तिकेय जी
तदपि	=	फिर भी

व्याख्या- आचार्य केशवदास जी कहते हैं, कि इस संपूर्ण संसार में किसकी बुद्धि ऐसी है, जो जगत की स्वामिनी माँ सरस्वती की उदारता (महिमा) को शब्दों में प्रकट कर सके और इसका उचित बखान कर सके। अर्थात ऐसा कोई नहीं है। बड़े-बड़े देवता, प्रसिद्ध सिद्ध, संत, महात्मा, विद्वान, अधिक तपस्या करने वाले ऋषि-मुनि आदि ने भी माँ सरस्वती की उदारता का बखान करने का प्रयत्न किया किंतु वे भी यह कार्य करने में असफल हो गए। भूतकाल, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों में माँ सरस्वती की महिमा का बखान करने का प्रयास किया गया है।

▶ सरस्वती की वर्णनातीत उदारता का वर्णन प्रभावोत्पादक

किंतु उनकी महानता का उचित वर्णन नहीं हो पाया है। अन्य संसारी मनुष्यों के साथ-साथ महाकवि केशवदास ने भी माँ सरस्वती की उदारता का बखान करने का प्रयास किया किंतु वे भी इस कार्य को करने में असफल रहे। माँ सरस्वती के निकट संबंधी भी उनकी महिमा का उचित वर्णन नहीं कर पाए। उनके पति ब्रह्मा अपने चार मुखों से, पुत्र शिव अपने पाँच मुखों से और उनके पौत्र कार्तिकेय अपने छह मुखों से माँ सरस्वती की उदारता का वर्णन करने का प्रयास करते हैं। फिर भी उनकी महिमा का उचित वर्णन नहीं हो पाया है। प्रत्येक क्षण माँ सरस्वती की उदारता में नए-नए परिवर्तन होते रहते हैं। उनकी उदारता चिर नूतन और अभिनव है।

▶ सरस्वती की कालातीत वंदना

3. **पूरण पुराण अरु पुरुष पुराण परिपूरण**
बतावै न बतावैं और उक्ति को।
दरशन देत जिन्हें दरशन समुझैं न
नेति नेति कहैं वेद छाँड़ि आन युक्त को।
जानि यह केशौदास अनुदिन राम राम
रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।
रूप देहि अणिमाहि गुण देहि गरिमाहि
भक्ति देहि महिमाहि नाम देहि मुक्ति को।

शब्दार्थ

पूरण	=	संपूर्ण, समस्त।
पूराण	=	प्राचीन। परिपूर्ण सब प्रकार से पूर्ण।
उक्ति	=	बात, कथन।
दरशन देत	=	दर्शन देते हैं।
दरशन	=	दर्शन, षट्शास्त्र।
नेति-नेति	=	यह भी नहीं, अर्थात अगम्य।
युक्त	=	युक्ति, उपाय।
अनुदिन	=	प्रतिदिन, नित्य।
पुनरुक्ति	=	किसी एक शब्द की अथवा कथन की पुनरावृत्ति काव्यशास्त्र में पुनरुक्ति दोष माना जाता है।
रूप	=	सौन्दर्य।
अणिमा	=	आठ सिद्धियों में से पहली सिद्धि जिसके द्वारा साधक अणुरूप ग्रहण करके अदृश्य हो जाता है।
गरिमा	=	इस सिद्धि के द्वारा साधक यथेच्छा अपना देह-भार बढा सकता है।
महिमा	=	इस सिद्धि से साधक यथेच्छा अपनी देह का विस्तार कर सकता है।

प्रसंगः- इन पंक्तियों में कवि केशव ने राम की महिमा का वर्णन करते हुए बताया है कि राम भक्त-वत्सल और समस्त सिद्धियों को प्रदान करने वाले हैं।

अर्थः- समस्त पुराण और प्राचीन लोग राम के विषय में इसके अतिरिक्त और कोई बात नहीं कहते कि वह सब प्रकार से पूर्ण है, अर्थात् राम की परिपूर्णता शास्त्र और लोक दोनों ही आधारों से निर्विवाद सिद्ध है। जिस राम के स्वरूप को दर्शन नही समझ पाते और वेद भी अन्य युक्ति को छोडकर उनके स्वरूप के विषय में 'यह भी नहीं यह भी नहीं' कहकर अपनी अरूपर्थता प्रकट करते हैं, वे ही राम भक्त-वत्सलता के कारण अपने भक्तों को सहज ही दर्शन दे देते हैं। उनकी इस अपार महत्ता एवं भक्त-वत्सलता को जानकर, कवि केशव कहते हैं, कि

▶ पुनरुक्ति दोष का भय त्याग कर प्रतिदिन राम-राम रटना

मैं पुनरुक्ति दोष का भय त्याग कर प्रतिदिन राम-राम रटता रहता हूँ। राम का सौन्दर्य-वर्णन अणुरूप सिद्धि को, गुण-वर्णन गरिमा सिद्ध को, भक्ति महिमा सिद्धि को और नाम-स्मरण मुक्ति को प्रदान करता है।

4.2.4 केशवदास का हिन्दी साहित्य में स्थान

▶ कठिन काव्य का प्रेत

केशवदास जी को हिन्दी साहित्य का प्रमुख आचार्य और रसिक कवि माना जाता है। ये एक निर्भीक एवं स्पष्ट वादी कवि थे। और यही इनकी सबसे बड़ी विशेषता थी। ये एक रीतिकाल के प्रवर्तक कवि भी थे। उनकी समस्त रचनाएँ शास्त्रीय रीतिबद्ध है। केशवदास जी लक्षण ग्रन्थों के लिए सदैव स्मरणीय रहेंगे। हिन्दी विषय में सर्वप्रथम केशवदास जी ने ही काव्य के विभिन्न अंगों का शास्त्रीय पद्धति से विवेचन किया था। उनके काव्य में भले ही भावपक्ष की अपेक्षा कला पक्ष की प्रधानता रही है। पांडित्य प्रदर्शन के कारण इन्हें कठिन काव्य का प्रेत कह कर भी बुलाया जाता है। इनकी रचनाओं में सूरदास, और तुलसीदास जैसी सरलता ना हो परंतु उन्होंने काव्यांगों का विशेष परिचय अपने काव्य में कराया है। इसलिए सूरदास जी और तुलसीदास जी से उनकी गणना की जाती है।

सूर सूर तुलसी ससि उडूगन केशव दास।
अब के कवि खद्योत सम, जहं तहं करत प्रकास।।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

रामचंद्रिका में राम की कथा है। इस में अनेक स्थल ऐसे हैं जिनसे कवि की वर्णन विस्तारप्रियता स्पष्टत:परिलक्षित होती है। तुलसी और केशव के भावों की तुलना करने पर मालूम होगा कि केशव की भावाभिव्यक्ति वास्तविक और भावमय है। आचार्य केशव की विविधता के साथ-साथ शिल्प के विविध प्रयोग के कारण हिन्दी साहित्य में अन्य कवि आचार्यों से भिन्न स्थान रखते है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. केशव को 'कठिन काव्य का प्रेत' क्यों कहते हैं?
2. केशव के आचार्यत्व पर टिप्पणी लिखें?
3. हिन्दी साहित्य में केशवदास का स्थान क्या है?
4. केशवदास की काव्यगत विशेषताएँ क्या-क्या हैं?

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त
3. रीति काव्य संग्रह - सं. विजयपाल सिंह

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 3

बिहारी (5 Dohas)

Detailed Study

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- बिहारी की काव्यगत विशेषताएँ पाता है
- बिहारी की बहुज्ञता के बारे में समझता है
- बिहारी सतसई के बारे में जान पाता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी रीतिकाल की कविता समान्यतः दो भागों में विभक्त की जाती है- प्रथम, रीति बद्ध कविता और द्वितीय रीति सिद्ध कविता। बिहारीलाल का संबंध हिन्दी रीति काल की रीतिसिद्ध कव्य परम्परा से है। बिहारी ने यद्यपि रस, अलंकार, गुण, रीति आदि पर कोई लक्षण ग्रंथ नहीं लिखा है- फिर भी, उनके सृजन को इस शास्त्रीय अंतर्मुखता ने आद्यंत प्रभावित किया है। उनकी कविता की संवेदना बिन्दु शास्त्रीय कलात्मक विलक्षणता है, जबकि किसी शास्त्रीय ग्रंथ की उन्होंने कोई रचना नहीं की है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

श्रृंगार कवि, गागर में सागर भरना, रस स्निग्धता, वाग्विदग्ध

Discussion / चर्चा

बिहारी लाल एक बहुत ही प्रसिद्ध श्रृंगारिक कवि थे। वे रीतिकाल के प्रमुख कवि थे। बिहारीलाल की गणना उस समय के सर्वश्रेष्ठ श्रृंगारिक कवियों में की जाती है। बिहारीलाल की रचनाओं की भाषा समाज शक्ति एवं कल्पना की होती थी। इसीलिए कहा जाता है कि उनकी रचनाओं के लिए उन्होंने गागर में सागर समा दिया था। बिहारीलाल रीतिकाल के एक बहुत ही बड़े कवि थे। बिहारी लाल जयपुर के राजा जय सिंह के दरबारी कवि थे। उनकी काव्य प्रतिभा के कारण राजा जयसिंह के दरबारी कवि के रूप में सम्मान मिले। उनकी प्रतिभा से राजा मुग्ध हुए।

4.3.1 बिहारी की काव्यकला

श्रृंगारी काव्य रचना परम्परा में 'बिन्दु में सिन्धु' और 'गागर में सागर' भरनेवाले रीतिकाल

के कवि बिहारीलाल का महत्वपूर्ण स्थान है। 'बिहारी सतसई' भावपक्ष तथा कलापक्ष दोनों में अत्यधिक लोक रंजक बन गई है। कहा जाता है कि उनकी पत्नी एक कुशल कवयत्री थी। वे राजाओं और सामन्तों के दरबारों में कुछ दोहे सुनाकर पुरस्कार तथा दक्षिणा प्राप्त करते थे। बिहारी ने यह दोहा सुनाया -

'नहिं परग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास इहि काल।
अली कली ही सौ बाँध्यो, आगे कौन हवाल।।'

▶ रीतिकाल के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि और उत्कृष्ट काव्यकला के शिल्पी

राजा जयसिंह इस दोहे का प्रतीकार्थ समझ गये। उन्होंने बिहारी को अपने दरबार में कवि के रूप में सम्मान किया। जीवन-बिहारी वहीं रहें और अपने रसिकतापूर्ण विभिन्न दोहों से दरबार को रंजित करते रहे।

4.3.1.1 युग की परिस्थितियाँ

बिहारी का युग बिलकुल विलासपूर्ण था। मुसलमानी शासन का बोलबाला था। मुसलमानों की संस्कृति के सामने हिन्दू संस्कृति कुछ झुकी हुई थी। बादशाह, राजा, अमीर आदि विलासिता में डूबे हुए थे। धार्मिक संप्रदाय भी चलते थे। लेकिन सारा वातावरण श्रृंगारी रस व्यंजना में अधिक डूबा हुआ था। संस्कृत साहित्य को आधार बनाकर व्यावहारिक ज्ञान से काव्य का निर्माण होता था। बिहारी के व्यापक परिवेश में नारी भावना केन्द्रित थी। नारी की चमक, दमक, हँसी, दीरघनयन, भौहें, नख-शिख वर्णन, वयः सन्धि, नारी के विविध अनुभाव आदि का बिहारी ने रसमय वर्णन किया।

▶ तत्कालीन समाज की विलासिता का वर्णन

4.3.1.2 श्रृंगारी भावना

बिहारी लाल हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठतम श्रृंगारी कवि हैं। लौकिक भाषा में प्रेम को श्रृंगार कहते हैं। लेकिन वास्तव में श्रृंगार प्रेम की व्यापक भावना है। इसी प्रकार नायक और नायिका के बीच होनेवाले अनुभाव पूर्ण चमत्कार को बिहारी प्रस्तुत करते हैं। नायिका की सौंदर्य विशेषता बिहारी अतिशियोक्ति के साथ प्रस्तुत करते हैं। वियोग श्रृंगार और संयोग का वर्णन अधिक स्वभाविकता से किया है। कवि की मत में वियोग में कहीं नायिका का शरीर जलता है। गुलाब का जल एक बूँद भी उसके शरीर पर नहीं गिरता। साँस लेते विरहिणी नायिका दुर्बलता के कारण आगे-पीछे होती रहती है।

▶ सतसई में श्रृंगार संबंधी सुंदर एवं मार्मिक चित्रण

4.3.1.3 भक्ति भावना

बिहारी लाल वस्तुतः श्रृंगारी कवि है। साथ ही उन में माधुर्य, सख्य, हास्य आदि सभी प्रकार की भक्ति के तत्व समन्वित हुये हैं। वे बाह्याडम्बरों का निराकरण करके मन की पवित्रता की आवश्यकता बताते हैं। कविवर बिहारी जी ने अपनी काव्य कृति 'सतसई' के प्रारंभ में ही अपनी आराध्य देवी 'राधानागरी' के प्रति अपनी भक्ति-भावना को अभिव्यक्त किया है। बिहारी ने प्रधानतया भगवान कृष्ण को अपना आराध्य माना है। यद्यपि कुछ दोहों में अन्य देवी-देवताओं की भी अर्चना की है। किन्तु उनका मूल उद्देश्य भगवान श्रीकृष्ण की उपासना ही है।

▶ भक्ति के उत्कृष्ट रचनाकर

4.3.1.4 प्रकृति चित्रण

प्रकृति सदा मानव की सहचर रही है। प्रकृति के बिना कोई जीव-जन्तु पनप नहीं सकता। अतः सौन्दर्यानुभूति तथा ललिंत अभिव्यक्ति के लिए प्रकृति अत्यन्त आवश्यक है। अतः हम यह कह सकते हैं कि प्रकृति चित्रण के बिना कविता ही नहीं। बिहारी प्रकृति चित्रण में मानवीयता की ओर अधिक झुकते हैं। उद्दीपन और अलंकारों की अद्भुत समन्वयता के लिए

▶ प्रकृति का आलम्बन एवं उद्दीपक वर्णन

प्रकृति को ले लेते हैं। वे कहीं-कहीं प्रकृति के मानवीकरण की सूक्ष्मता तक जाते हैं।

4.3.1.5 अलंकार योजना

बिहारी की 'सतसई' में उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकारों का अधिक प्रयोग बिहारी ने किया है।

"जदपि सुजाति सुलच्छनि सुवरन सरस सुवृत्त।

भुषण बिनु न विरजहि कविता वनिता मित्त"।।

उपर्युक्त केशवदास जी का दोहा, बिहारी कविता माधुरी अतिशयोक्ति का यह दोहा, बिहारी लाल की भाव पटिमा, मनोहर सौकुमार्य का वर्णन तथा नायिका की शोभा का वर्णन चित्रित करता है। बिहारी की अलंकार योजना व्यापक है। कोमलांगी नायिका तन पर भूषणों का भार कैसे संभाल सकती है। उसके पाँव तो पहले ही शोभा के भार से डगमगा रहें हैं। इस प्रकार की भावना कुशल कवि ही कर सकता है।

4.3.1.6 भाषा शैली

▶ चुस्त प्रवाहपूर्ण साहित्यिक ब्रजभाषा का प्रयोग

बिहारी की भाषा ब्रज है। अन्य भाषाओं के शब्द प्रयोग भी बिहारी ने किया है। बिहारी ने तत्कालीन प्रचलित साहित्यिक ब्रज का प्रयोग किया है। भाषा को कहीं-कहीं उन्होंने तोड-मरोड़कर दोहों में जमाया है। संस्कृत शब्दों का समाहार भी बिहारी सतसई में प्राप्त होता है। अरबी और फारसी शब्दों का प्रयोग भी बिहारी ने किया है। बिहारी की भाषा शैली माधुर्य गुण प्रधान है। शब्द चयन तथा मुहावरों लोकोक्तियों के प्रयोग ने भाषा शैली को सुसज्जित किया है। कभी कहीं व्याकरण संबन्ध कुछ इने गिने दोष भी कुछ पण्डित बिहारी में ढूँढ़ने का प्रयत्न करते हैं। - बिहारी की भाषा सशक्त, चुस्त प्रवाहपूर्ण साहित्यिक ब्रज है। उनकी वाक्य रचना व्यवस्थित और शब्द चयन अनूठा है। समास शक्ति वाग्विदग्ध अलंकारों का समावेश बिहारी की भाषा शैली के परिपोषक हैं।

4.3.2 बिहारी सतसई

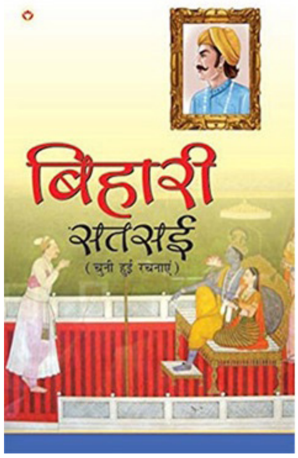

बिहारी सतसई एक मुक्तक काव्य है जिसे कवि बिहारी द्वारा रचा गया था। 'जगनाथ दास रत्नाकर' ने बिहारी सतसई का संपादन किया था। बिहारी सतसई मुक्तक काव्य, में लगभग 713 दोहे संकलित हैं। इसमें नीति, श्रृंगार और भक्ति से संबंधित दोहों की आलोचना का संकलन है। कवि बिहारी जी का पूरा नाम बिहारी लाल है, हिन्दी साहित्य में रीति काल के

> ▶ बिहारी सतसई-मुक्तक काव्य

प्रमुख कवि बिहारी लाल की लिखी बिहारी सतसई ने बड़ी प्रसिद्धि पायी है। उस समय में कवि के मामले में बिहारी लाल को टक्कर देने वाला कोई नही था। बिहारी सतसई का मूल्यांकन मुक्तक काव्य की दृष्टि से हम कर सकते हैं।

4.3.2.1 कल्पना और भाषा की शक्ति

> ▶ श्रृंगार रस की अधिकता होने पर भी अनुभूति की गहनता का अभाव

बिहारी सतसई 'मुक्तक काव्यकला' का हिन्दी साहित्य में अद्वितीय उदाहरण है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है- "मुक्तक कविता में जो गुण होना चाहिए वह बिहारी के दोहों में अपने चरम उत्कर्ष को पहुँचा है, इसमें सन्देह नहीं कल्पना की समाहार शक्ति और भाषा की समास शक्ति की क्षमता बिहारी में पूर्ण रूप से वर्तमान थी। इसी से वह दोहे ऐसे छोटे छंद में इतना रस भर सके हैं। इनमें दोहे क्या हैं रस के छोटे-छोटे छींटे हैं।

4.3.2.2 रस स्निग्धता

> ▶ माधुर्य गुण से पूरित कविता

बिहारी के मुक्तकों की सर्वप्रथम विशेषता उनकी रस-स्निग्धता है। यद्यपि बिहारी ने सूक्तियाँ भी लिखी हैं और चमत्कारपूर्ण दोहे भी लिखे हैं, जिनकी रचना की बारीकी पर कला पारखी वाह-वाह कर सकते हैं, किन्तु उनकी सतसई की कीर्ति का प्रमुख आधार उनकी रसोक्तियाँ ही हैं जो सहृदय के मन को घायल करती हैं।

4.3.2.3 भाव व्यंजना

भाव व्यंजना या रस व्यंजना बिहारी की विदग्धता का फल है। एक सजग कलाकार की भाँति कवि ने भावों का स्तवक चुना है, उन्हें अपनी वाग्विभूति से सजाया है, पालिश की है, कांट-छांट कर तरतीब से रखा है। बिहारी की रचना की इतनी मार्मिकता और प्रभाव शक्ति का बहुत-कुछ श्रेय उनकी इस चयन पद्धति और कांट-छांट को है। भावों को गुलदस्ते-सा सजा कर सभा-समाजों में उपस्थित करने की निपुणता बिहारी में है। बिहारी हर भाव, हर स्थिति को अपने काव्य का विषय नहीं बनाते। उनमें हर वस्तु का चुनाव पूर्ण अपनाव है। उनमें गिनी-चुनी मार्मिक स्थितियों को ही कला से सजा-संवार का प्रस्तुत करने की पारखी दृष्टि है। इसलिए बिहारी केवल सतसई ही लिख सके हैं। सतसई से यह सिद्ध कर दिया है कि किसी कवि का यश उसकी रचनाओं के परिमाण से नहीं गुणों के हिसाब से होता है।

> ▶ अनुभावों तथा भावों की बेजोड़ योजना

4.3.2.4 रमणीय खण्ड दृश्य

बिहारी के दोहों की रमणीयता और कवि द्वारा खण्ड-दृश्य को चित्रांकितं करने की विशेषता उच्च कोटि की है। आचार्य शुक्ल ने इसे ही वाग्विदग्धता कहा है और विश्वनाथ मिश्र ने वाग्विभूति। इन रमणीय खण्ड दृश्यों में यद्यपि अधिकांश भाव-व्यंजना ही प्रमुख है। लेकिन कहीं-कहीं वस्तु-व्यंजना भी मिलती है। यह वस्तु व्यंजना जब तक विरह-ताप, सुकुमारता, शोभा तथा क्रांति आदि का सहज निरूपण करती है, वहाँ तक तो दृश्य की रमणीयता बनी रहती है।

> ▶ रमणीयतापूर्ण दृश्य वर्णन

4.3.2.5 संक्षिप्तता

बिहारी के काव्य में भले ही भाव-चित्र हो या वस्तु-चित्र, नखशिख वर्णन हो या नायिका-भेद निरूपण, अलंकार योजना हो या सूक्ति कथन श्रृंगार की मधुरता हो या भक्ति की पावनता, रसमय उक्ति हो या सुभाषित, सर्वत्र- बिहारी ने चित्र की सामग्री का अल्पतम प्रयोग किया है। संक्षिप्ति की इस विशेषता के कारण ही उनके दोहे को गागर में सागर भरने वाला कहा गया है।

> ▶ गागर में सागर भरने वाली शैली

4.3.2.6 विदग्धता

बिहारी में तथाकथित संक्षिप्तता कुछ दोहे जैसे छोटे छंद के व्यवहार के कारण, कल्पना की समाहार शक्ति के कारण, भाव-चित्रों की संक्षिप्ति के कारण और भाषा की समास शक्ति के कारण है। इसमें संदेह नहीं कि बिहारी के काव्य में इन चारों विशेषताओं ने मिलकर बिहारी की विदग्ध वाणी का कवि बना दिया है और उनकी सतसई को गंभीर घाव करने की अभूतपूर्व क्षमता प्रदान कर दी है। ऐसी समस्त और समाहार शक्ति से युक्त बिहारी के असंख्य दोहे मिलते हैं।

▶ अनुपम वागविदग्धता की कला

4.3.3 बिहारी सतसई में विरह वर्णन

▶ विरह की विभिन्न स्थितियों का सूक्ष्म वर्णन

बिहारी ने 'बिहारी-सतसई' में विरह की विभिन्न स्थितियों का अत्यंत सूक्ष्मता से वर्णन किया है। बिहारी विरह का चित्रण करने में जितने सफल हुए हैं, उतने वे संयोग के वर्णन में नहीं हुए हैं। बिहारी ने उस अनुराग का भी वर्णन किया है जो प्रत्यक्ष रूप दर्शन से उत्पन्न नायिकायें नायक का रूप देखती हैं। उनका हृदय उस रूप सौन्दर्य के प्रति व्याकुल हो उठता है।

बिहारी मूलतः श्रृंगारी कवि हैं। उनके संयोग श्रृंगार में कहीं-कहीं अश्लीलता के समावेश होते हुए भी स्वाभाविकता का संदेश मिलता है। संयोग पक्ष में आलम्बन, आश्रय आदि होते हैं। हास्य तथा विनोद के साथ प्रेमियों के नाना प्रकार की क्रीडाएँ होती हैं। साहित्य शास्त्र में संयोग की पृष्ठभूमि पूर्वराग है। संयोग में कवि नायक तथा नायिका के बाह्य पक्ष तक ही सीमित रहता है। वियोग पक्ष में अधिकांश कवियों की मर्म वेदना प्रकट होती है। नायक और नायिका को आलम्बन बनाकर कवि अपनी अन्तर्वेदना प्रकट करता है। वियोग श्रृंगार में आत्म प्रसार होता है। अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुण, कंपन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जडता और मरण वियोग के फल माने जाते हैं। सतसई के दोहों का शब्द-शब्द और अक्षर-प्रत्यक्षर वियोग श्रृंगार के लिए भरमार है।

▶ रीतिकालीन श्रृंगार रस सम्राट बिहारी

4.3.4 बिहारी दोहा

बिहारी ने अपने मुक्तकों की रचना दोहों में की है। बिहारी सतसई में प्रायः समग्र प्रकार के दोहों का प्रयोग हुआ है। बिहारी के दोहे मुक्तक भक्ति संबंधी भी हैं और नीति संबंधी भी वीरता संबंधी भी हैं और श्रृंगार संबंधी भी, रीति-बद्ध भी हैं और रीति-मुक्त भी। बिहारी में कविजनोचित प्रतिभा, अध्ययन और अभ्यास- तीनों गुण पाए जाते हैं। दोहों की सरसता उनकी प्रतिभा की परिचायिका है, बहुलता एवं विविध परम्पराओं का निर्वाह उनके व्यापक अध्ययन का द्योतक है तथा उनके दोहों की परिष्कृति एवं उनका भाषाधिकार उनके गहन अभ्यास का परिचायक है।

1) 'मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ।

जा तन की झांई परे, श्याम हरित दुति होई'।।

शब्दार्थ

भव बाधा = सांसारिक बाधाएँ या कष्ट

हरौ	=	दूर कर दो
नागरि	=	चतुर
सोइ	=	वही
जा तर	=	जिनके शरीर
झाँई	=	झलक (छाया)
परे	=	पड़ने से
श्याम	=	श्रीकृष्ण, पाप
हरित दुति	=	हरी कांति वाले, प्रभावहीन, प्रसन्न

संदर्भ- प्रस्तुत दोहा 'बिहारी सतसई' से लिया गया है जिसका रचनाकार बिहारी है।

प्रसंग- ग्रंथ रचना आरंभ में मंगलाचरण के रूप में कवि ने अपने आराध्य देव कृष्ण एवं राधा की स्तुति करते हैं।

व्याख्या- यह दोहा बिहारी सतसई के मंगलाचरण से लिया गया है, जिसके रचनाकार विख्यात कवि बिहारी जी हैं। इस दोहे के माध्यम से बिहारी जी ने राधा और कृष्ण का प्रेम पूर्वक स्मरण किया है। इस दोहे में बिहारी लाल अपने आराध्य राधा-कृष्ण की स्तुति करते हैं। वे देवी राधा से अपने सभी कष्टों को दूर करने की प्रार्थना करते हैं। वे कहते हैं कि हे राधिका जिस प्रकार तुम्हारी एक झलक मात्र से श्रीकृष्ण प्रसन्न हो जाते हैं। उसी प्रकार अपनी एक झलक दिखाकर मेरे सांसारिक जीवन को भी हरा-भरा कर दो अर्थात् मेरे सभी कष्टों को दूर कर दो। प्रस्तुत दोहे में श्लेष अलंकार का प्रयोग हुआ है।

▶ मार्मिक तथा सूक्ष्म अनुभूतियों का मर्मस्पर्शी चित्रण

विशेषता- इस दोहे में श्लेष अलंकार है। जब एक ही शब्द से हमें विभिन्न अर्थ मिलते हों तो उस समय श्लेष अलंकार होता है। यानी जब किसी शब्द का प्रयोग एक बार ही किया जाता है लेकिन उससे अर्थ कई निकलते हैं तो वह श्लेष अलंकार कहलाता है।

2) तो पर वारौं उरबसी, सुनि राधिके सुजान।

तू मोहन के उर बसी, है उरबसी समान।।

शब्दार्थ

सुजान	=	चतुर
उरबसी	=	हृदय में
तो पर	=	तुझ पर
बारौं	=	न्यौछावर करता हूँ
उरबसी	=	उर्वशी, एक अति सुन्दर मानी गई अप्सरा
सुजान	=	चतुर
मोहन	=	श्रीकृष्ण, मोहित करने वाले
उरबसी	=	हृदय में बसी हुई है
हवै	=	होकर

उरबसी	=	उर्वशी अप्सरा के समान अथवा मन को वश में करने वाली बनकर

संदर्भ- प्रस्तुत दोहा 'बिहारी सतसई' से लिया गया है जिसका रचनाकार बिहारी है।

प्रसंग- राधिका जी ने यह सुना कि श्रीकृष्ण किसी अन्य नायिका से प्रेम करने लगे हैं तो उन्होंने मौन धारण कर लिया है।

▶ राधा का मन बहलाने की कोशिश में सखी

व्याख्याः राधिका जी ने यह सुना कि श्रीकृष्ण किसी अन्य नायिका से प्रेम करने लगे हैं तो उन्होंने मौन धारण कर लिया है। प्रस्तुत दोहे के द्वारा सखी इसी मौन को छुड़ाने के प्रयास करते हैं। राधा जी को लगता है कि श्री कृष्ण किसी और अन्य स्त्री के प्रेम में पड़ गए है। राधा जी की सहेली उन्हें समझा रही है कि हे राधिका! अच्छे से जान लो, कृष्ण तुम पर उर्वशी अप्सरा को भी न्योछावर कर देंगे। राधा तुम श्री कृष्ण के हृदय में उरबसी आभूषण के समान बसी हुई हो। तुम्हें जलन और डरने की जरूरत नहीं है।

विशेषता - प्रस्तुत दोहे में 'उरबंसी' शब्द द्वारा यमक अलंकार का चमत्कार कवि ने दिखाया है। प्रथम 'उरबसी' शब्द का अर्थ 'उर्वशी अप्सरा' है। दूसरे 'उरबसी' शब्द का अर्थ है- हृदय में बसी हुई तथा तीसरे 'उरबसी' शब्द का अर्थ उर्वशी और हृदय को वश में कर लेने वाली है। इस प्रकार इस शब्द में यमक अलंकार है।

3) कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात।

भरे भौन में करत हैं, नैननु ही सब बात।।

शब्दार्थ

कहत	=	कहते हैं
नटत	=	माना करते हैं
रीझत	=	खीझ उठते हैं
मिलात	=	मिला लेते हैं
ख़िलत-गद	=	गद हो जाते, प्रसन्न हो जाते हैं
लजियात	=	लज्जित हो जाते हैं
भरे	=	लोगों से भरा हुआ
भौन	=	भवन
नैन	=	नेत्रों से
स	=	से

संदर्भ- प्रस्तुत दोहा 'बिहारी सतसई' से लिया गया है जिसका रचनाकार बिहारी है।

प्रसंग- परकीया नायिका और नेत्रों द्वारा प्रेम के आदान-प्रदान का चित्रण किया गया है।

व्याख्याः सखी कह रही है कि नायक अपनी आँखों के इशारे से कुछ कहता है अर्थात् रति की प्रार्थना करता है, किंतु नायिका उसके रति विषयक निवेदन को अस्वीकार कर देती है। वस्तुतः उसका अस्वीकार स्वीकार का ही वाचक है तभी तो नायक नायिका के निषेध पर भी

रीझ जाता है। जब नायिका देखती है कि नायक इतना कामासक्त या प्रेमासक्त है कि उसके निषेध पर भी रीझ रहा है तो उसे खीझ उत्पन्न होती है। ध्यान रहे, नायिका की यह खीझ भी बनावटी है। यदि ऐसी न होती तो पुनः दोनों के नेत्र परस्पर कैसे मिलते? दोनों के नेत्रों का मिलना परस्पर रति भाव को बढ़ाता है। फलतः दोनों ही प्रसन्नता से खिल उठते हैं, किंतु लज्जित भी होते हैं। उनके लज्जित होने का कारण यही है कि वे यह सब अर्थात् प्रेम-विषयक विविध चेष्टाएँ भरे भवन में अनेक सामाजिकों की भीड़ में करते हैं।

▶ अनुपम रस विधान का उदाहरण

विशेषता- यहाँ संयोग श्रृंगार रस का वर्णन है। प्रस्तुत दोहे में कवि ने भाव-विभाव, अनुभाव और संचारी भाव आदि रस के सभी अंगों का सफल निर्वाह किया है।

4) नहिं परागु नहिं मधुर मधु, नहिं बिकासु इहिं काल।

अली कली ही सौं बंध्यौ, आगें कौन हवाल।।

शब्दार्थ

नहिं	=	नहीं
परागु	=	पराग
बिकासु	=	खिलना
इहिं	=	यह
अली	=	भ्रमर
सौं	=	इस प्रकार
हवाल	=	हालत

संदर्भ- प्रस्तुत दोहा 'बिहारी सतसई' से लिया गया है जिसका रचनाकार बिहारी है।

प्रसंग- राजा जयसिंह अपने विवाह के बाद अपनी नव-वधू के प्रेम में राज्य की तरफ बिलकुल ध्यान नहीं दे रहे थे तब बिहारी ने उन्हें यह दोहा सुनाया था।

व्याख्याः बिहारी शाहजहाँ के समकालीन थे और राजा जयसिंह के राजकवि थे। राजा जयसिंह अपने विवाह के बाद अपनी नव-वधू के प्रेम में राज्य की तरफ बिलकुल ध्यान नहीं दे रहे थे तब बिहारी ने उन्हें यह दोहा सुनाया था। अर्थात् इस काल में फूल में न पराग है, न तो मीठी मधु ही है। अगर अभी से भौंरा फूल की कली में ही खोया रहेगा तो आगे न जाने क्या होगा। दूसरे शब्दों में, 'हे राजन अभी तो रानी नई-नई हैं, अभी तो उनकी युवावस्था आनी बाकी है। अगर आप अभी से ही रानी में खोए रहेंगे, तो आगे क्या हाल होगा'।

▶ राजा को कर्तव्यनिष्ठ बनाने की चेष्टा

विशेषता- प्रस्तुत काव्य पंक्तियों में अन्योक्ति अलंकार का प्रयोग किया गया है। जहाँ अप्रस्तुत के द्वारा प्रस्तुत पर व्यंग्य किया जाय या अपनी बात को सीधे न कहकर किसी और को लक्ष्य कर कहा जाये तो वहाँ अन्योक्ति अलंकार होता है। यहाँ भौरे को प्रताड़ित करने के बहाने बिहारी ने राजा जयसिंह की काम लोलुपता पर व्यंग्य किया है।

5) कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय।

या खाए बौराए जग, वा पाए बौराए।

शब्दार्थ

कनक	=	स्वर्ण
ते	=	वह
मादकता	=	नशा
अधिकाय	=	बहुतायत
बौराए	=	पागल होना
जग	=	दुनिया

सप्रसंग व्याख्याः यहाँ पर कनक से अभिप्राय स्वर्ण और भांग से है और भाव है कि भांग (धतूरा) के नशे से भी अधिक नशा माया का होता है। माया का नशा होता है जिससे व्यक्ति नशे का शिकार हो कर अपने हित और अहित पर विचार नहीं कर सकता है। यह व्यक्ति को बावरा कर देता है और जीव अपने मूल उद्देश्य हरी सुमिरण को बिसार देता है। माया भ्रम पैदा करती है जिससे जीव हरी सुमिरण से विमुख हो जाता है। प्रस्तुत पंक्ति में यमक अलंकार का प्रयोग हुआ है। जबकि एक शब्द का प्रयोग दो बार होता है और दोनों बार उसके अर्थ अलग-अलग होते हैं, तब यमक अलंकार होता है।

▶ मनुष्य को दिशाहीन बनाते हैं

विशेषता- प्रस्तुत दोहे में यमक अलंकार है। जहाँ शब्दों की पुनरावृत्ति हो और अर्थ अलग हो वहाँ यमक अलंकार होता है। इसमें कनक के दो अर्थ हैं- सोना व धतूरा। "कनक-कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय"।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

'बिहारी सतसई' श्रृंगारप्रधान रचना है। लेकिन श्रृंगारप्रधान सतसईयों में श्रृंगार के साथ नीति तथा भक्ति और वैराग्य के दोहे भी मिलते हैं। बिहारी 'सतसई' के दोहे का प्रभाव 'नावक' से निकलने वाले तीर यानी काँटेदार बाण जैसी असरदार है। वह बाहर से देखने में तो छोटा दिखाई देता है परन्तु इसके चोट के घाव बहुत ही गहरे होते हैं। उसी तरह बिहारी के दोहे देखने में छोटे और सरल लगते हैं किन्तु इसके अर्थ का भाव बहुत ही गहरा होता है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. बिहारी की काव्यगत विशेषताएँ क्या-क्या हैं ?
2. बिहारी की काव्यकला के बारे में टिप्पणी लिखें?
3. बिहारी सतसई का महत्व बताओ।
4. कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात।
   भरे भौन में करत हैं, नैननु ही सब बात।।- सप्रसंग व्याख्या कीजिये?

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
4. प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्यभारती - योगेन्द्र प्रताप सिंह

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई : 4

भूषण (3 Dohas)

Detailed Study

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- वीर कवि भूषण के बारे में जानकारी प्राप्त होता है
- रीतिकाल में राष्ट्रीय भावनावाले कवि भूषण से परिचित होता है
- शिवभूषण में वर्णित पद शैली समझता है
- भूषण की काव्यगत विशेषताएँ समझता है

Background / पृष्ठभूमि

भारतीय इतिहास का उत्तर मध्यकाल जिसे हिन्दी साहित्य का रीतियुग अथवा उत्तर मध्यकाल कहा जा सकता है। इतिहास और साहित्य दोनों ही अनेक दृष्टियों से विचारणीय है। अधिकतर देशी राज्य स्वतन्त्रता के साथ विलासिता और सत्ता की अनैतिकता का भोग कर रहे थे। देशी राज्यों के आश्रय में रहने वाले कवि अपने आश्रय दाता और राजाओं की वीरता या यश का जो वर्णन कर रहे थे वह कविकर्म था, सतन्त्र काव्य चेतना नहीं। श्रृंगार के अतिरिक्त कुछ ईश्वर भक्ति और राजाओं की प्रशस्तिपरक कविता की प्रवृत्ति बन गयी थी। लेकिन भूषण स्वतंत्र काव्य चेतना के अंतर्गत सच्ची देशीय भावना से प्रेरित होकर ऐसा काव्य लिख रहे थे जिसे वास्तविक अर्थ में वीर काव्य कहा जा सकता है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

युगांतरकारी कवि, आश्रय दाता राजा, राष्ट्रीय भावना, रस सिद्ध कवि

Discussion / चर्चा

- विलासिता के काल में राष्ट्रीय भावना का जागरण

रीतिकालीन कवियों में भूषण विशिष्ट स्थान के अधिकारी हैं। भूषण की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंने घोर विलासिता के युग में शिवाजी एवं छत्रसाल की वीरता, शौर्य एवं पराक्रम का वर्णन करके सुप्त राष्ट्रीयता की भावना को जागृत किया और जन-जन में वीरता के भावों का संचार किया। वस्तुतः भूषण का काव्य वह अमर काव्य है, जो युग-युग तक लोगों में बल, पारुष एवं साहस भरता रहेगा। ये हिन्दी-साहित्य के प्रथम राष्ट्रीय कवि हैं और इनका काव्य हिन्दी में रचित सर्वप्रथम राष्ट्रीय काव्य हैं।

4.4.1 वीररस के कवि भूषण

वीर रस के सर्वश्रेष्ठ कवि भूषण का जन्म संवत 1670 (सन् 1613 ई०) में कानपुर के तिकवांपुर ग्राम में हुआ था। भूषण ने मुक्तक शैली में काव्य की रचना की। इन्होंने अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया है। इनके पिता का नाम पंडित रत्नाकर त्रिपाठी था। चित्रकूट के राजा रुद्र ने इनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर इन्हें 'भूषण' की उपाधि दी। हिन्दी के रस सिद्ध कवि चिंतामणि त्रिपाठी और मतिराम इनके भाई थे। इनके दूसरे आश्रय दाता महाराज छत्रसाल थे। इन्होंने अपने काव्य में इन्हीं दोनों की वीरता और पराक्रम का गुणगान किया है। इसके बाद वे जीवन के अंतिम दिनों तक शिवाजी के दरबार में रहे।

▶ अनेक राजाओं के आश्रित कवि

4.4.2 राष्ट्रीय भावना के कवि भूषण

आचार्य कवि भूषण का व्यक्तित्व जातीय स्वतन्त्रता और राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत रहा। इसलिए उन्हें सर्व प्रथम राष्ट्रकवि माना जाता है। भूषण सारा भारत देश का ध्यान न देकर केवल अपने आश्रय दाताओं के शौर्य एवं स्वार्थ भाव का चित्रण करने के कारण कुछ विद्वान भूषण को संकुचित दृष्टिकोणवाला कवि कहते हैं। कविवर भूषण ने अपने काव्य में ऐसे योद्धाओं की चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन किया है जो वस्तुतः जातीय एवं राष्ट्रीय चेतना के ज्वलंत प्रतीक है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल भूषण की इन विशेषताओं के कारण लिखते हैं- भूषण ने जिन दो नायकों को अपने वीर काव्य का विषय बनाया वे अन्याय दमन में तत्पर, हिन्दू धर्म के संरक्षक, दो इतिहास प्रसिद्ध वीर महाराज शिवाजी एवं छत्रसाल बुंदेला थे।

▶ एक स्वाभिमानी एवं राष्ट्रप्रेमी कवि

निस्संदेह भूषण प्रथम राष्ट्रीय कवि हैं। कहा जाता है कि उन्होंने पूरे भारत भ्रमण के बाद शिवाजी महारज की नीति में निहित राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक प्रेम को नमन किया था। उनकी दृष्टि में राष्ट्र, राष्ट्राभिमान, सर्वोपरि था अतः उसकी जतन करनेवाले शिव, छत्रपति और छत्रसाल को उन्होंने अपना काव्य का नायक चुना। इसके फलस्वरूप भूषण की राष्ट्रीय चेतना पर हिन्दुत्व का आरोपण किया जाता है। वास्तव में भूषण मुसलमानों के विरोधी नहीं थे। उन्होंने हिन्दुओं के सगुण और मुस्लिम के निर्गुण को समान रूप से दान दिया।

▶ हिन्दु और मुसलमानों से ताल-मेल रखते थे

4.4.3 भूषण (कवित्त- शिवराज भूषण- 1, 2, 3)

महाकवि भूषण के वास्तविक नाम से हिन्दी जगत अब तक अनभिज्ञ है। कवि ने अपने वंश तथा जन्मस्थान के विषय में अपने काव्य ग्रंथों में जो संक्षिप्त परिचय दिया है, और ग्रंथ निर्माण की जो तिथि दी है बस उनका उतना ही परिचय प्रामाणिक माना जाता है। शिवराज भूषण के छन्द संख्या 25 से 27 तक में भूषण अपना परिचय देते हैं। ऐसा प्रसिद्ध है कि भूषण के पिता रत्नाकरजी देवी के बड़ा भक्त थे और उन्हीं की कृपा से इनके चार पुत्र उत्पन्न हुए- चिंतामणि, भूषण, मतिराम और नीलकंड उपनाम जटाशंकर।

▶ 'शिवराज भूषण' में छन्द 25 से 27 तक स्वयं परिचय

शिवसिंह सरोज में भूषण के बनाए चार ग्रंथों के नाम लिखे हैं- शिवराजभूषण, शिवाबावनी, छत्रसालदशक भूषण उल्लास। शिवराज भूषण एक विशालकाय ग्रन्थ है जिसमें 385 पद्य हैं। इनकी सम्पूर्ण कविता वीर रस और ओज गुण से ओत-प्रोत है जिसके नायक शिवाजी हैं और खलनायक औरंगज़ेब। भूषण ने मुक्तक शैली में काव्य की रचना की। इन्होंने अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया है।

▶ बहुमुखी प्रतिभा के धनी एवं आचार्य

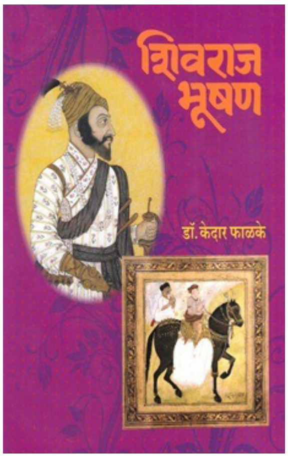

1. **तेरौ तेज, सरजा समरथ दिनकर सो है,**
दिनकर सोहै तेरे तेज के निकर सो।
भौंसिला भुवाल, तेरौ जस हिमकर सो है,
हिमकर सोहै तेरे जस के अकर सो।
भूषन भनत तेरो हियो रतनाकर सो,
रतनाकरो है तेरो हिय सुखकर सो।
साहि के सपूत सिव साहिदानी ! तेरो
कर सुरतरु सोहै, सुरतरु तेरे कर सो।।

शब्दार्थ

समरथ	=	समर्थ
सो है	=	समान है, सुशोभित है
भुवाल	=	पुत्र
हिमकर	=	चंद्रमा
आकार	=	समूह
सुरतरु	=	कल्पवृक्ष

सप्रसंग व्याख्या- प्रस्तुत पद हिन्दी साहित्य के रीतिकाल के वीर काव्य परंपरा के श्रेष्ठ कवि भूषण द्वारा रचित 'शिवराज भूषण' में संकलित है। छत्रपती शिवाजी महाराज के समकालीन कवि भूषण ने उनकी प्रतिभा, यश एवं दानशीलता का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है।

▶ अतिशयोक्तिपूर्ण रचना का उदाहरण

तेरा तेज है शिवाजी, दिनकर अर्थात् सूर्य के समान है। या फिर यह कहना उचित होगा कि दिनकर यानी सूर्य तेरे तेज के प्रभाव से ही सुशोभित है। कवि भूषण अपने आश्रय दाता राजा शिवाजी के वर्णन करते हुए आगे कहते हैं कि - हे भौंसिला-भूपाल यानि भौंसिला नरेश के सुपुत्र, तेरा यश चंद्रमा के समान है। या फिर यह कहना उचित होगा चंद्रमा तेरे यश के कारण इतना शोभित है। वे आगे कहते हैं कि तेरा हृदय रत्नाकर यानि सागर जैसा विशाल है या फिर यों कहना उचित होगा कि रत्नाकर तेरे हृदय के समान सुखकारी है। हे रही के

सपूत, हे दानियों के बादशाह तेरा हाथ कल्पवृक्ष सा दानी है या फिर यों कहना उचित होगा कि कल्पवृक्ष तेरे हाथ से है।

2. इंद्र जिमि जंभ पर बाड़व सुअंभ पर,
रावन सदंभ पर, रघुकुल राज हैं।
पौन बारिबाह पर, संभु रतिनाह पर,
ज्यों सहस्रबाह पर राम-द्विजराज हैं।
दावा द्रुम दंड पर, चीता मृगझुंड पर,
भूषन वितुंड पर, जैसे मृगराज हैं।
तेज तम अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर,
त्यौं मलिच्छ बंस पर, सेर सिवराज हैं।।

शब्दार्थ

जिमी	=	जैसे
जंभ	=	राक्षस
बाड़व	=	समुद्र में रहने वाली आग जो जल को जलाया करती है
सुअंभ	=	समुद्र
सदंभ	=	अहंकार
बारिबाह	=	बादल
रतिनाह	=	कामदेव
राम-द्विजराज	=	पारशु राम
द्रुम	=	वृक्ष
मृग झुंड	=	हरिणों का समूह
वितुंड	=	हाथी
तेज	=	प्रकाश

▶ म्लेच्छ वंश पर शिवाजी शेर के समान

सप्रसंग व्याख्याः प्रस्तुत पद हिन्दी साहित्य के रीतिकाल के वीरकाव्य परंपरा के श्रेष्ठ कवि भूषण, शिवाजी महाराज की वीरता का वर्णन करते हुए रचित शिवराजभूषण से संकलित किया गया है। भूषण कहते हैं कि जैसे इंद्र ने जंभासुर नामक राक्षस का वध किया और जल की अग्नि जल को नष्ट करती है और घमंडी रावण पर रघुकुल के राजा ने राज किया और जिस प्रकार पवन जल युक्त बादलों को उड़ा ले जाता है। और शिव शंभू ने रती के पति कामदेव को भस्म किया था तथा सहस्रबाहु अर्जुन को मारकर परशुराम ने विजय प्राप्त की तथा जिस प्रकार जंगल की अग्नि जंगल को जला देती है और चीता हिरणों के समूह पर और जंगल का राजा शेर हाथियों पर अपना अधिकार कायम रखता है और रोशनी अंधकार को समाप्त करती है उसी प्रकार कृष्ण ने अत्याचारी कंस का वध किया। ठीक उसी प्रकार म्लेच्छवंश पर वीर शिवाजी महाराज शेर के समान है।

विशेषः-

- वीरता के पूर्ण सेना संगठन का वर्णन
- राष्ट्रीयता की भावना
- अत्याचार के विरोध में कविता
- श्रृंगार रस (रस राज)
- श्लेष अलंकार
- चमत्कारी उक्तियां
- अरवी फारसी शब्दों का प्रयोग

> - वीर रस की कविता के लिए ब्रज भाषा का सर्वप्रथम प्रयुक्ति

3. तेरे ही भुजान पर भूतल को भार,
कहिबे को सेसनाग दिगनाग हिमाचल है।
तेरो अवतार जग पोसन भरनहार
कछु करतार को न तामधि अमल है
साहिन में सरजा समत्थ सिवारज कवि,
भूषन क़हत जीबो तेरोई सफल है।
तेरो करवाल करे म्लेच्छन को काल,
बिनु काज होत काल बदनाम धरातल है।।

शब्दार्थ

भुजान	=	हाथों में
भूतल	=	पृथ्वी
भार	=	बोझ
सेसनाग	=	एक सहस्र फन वाले, विशाल सर्प माने जाते हैं, जो धरती को धारण करते हैं।
दिगनाग	=	चारों दिशाओं में धरती को धारण करनेवाले हाथी
पोसन भरनहार	=	भरन-पोषण करनेवाला
करतार	=	ईश्वर/ विधाता
तामधि	=	उसमें
अमल	=	प्रयत्न/ कार्य/ अधिकार
साहिन	=	शाह
सरजा	=	शिवाजी की उपाधि
समत्थ	=	समर्थ /शक्तिशाली
जीबो	=	जीना
करवाल	=	तलवार
म्लेच्छन का	=	अत्याचारी मुगलों का
काल	=	अंत या नाश
काज	=	कारण

सप्रसंग व्याख्याः प्रस्तुत पद रीतिकाल के वीरकाव्य परंपरा के श्रेष्ठ कवि भूषण की शिवराजभूषण से संकलित किया गया है। कवि अनेक उदाहरणों द्वारा अन्यायी मुगल शासकों पर शिवाजी के आतंक का वर्णन कर रहा है। कवि के अनुसार पृथ्वी का भार धारण करना और संसार का भरण-पोषण वास्तव में शिवाजी ही करते हैं। शेष नाग, दिगनाग आदि ईश्वर का नाम ही नाम है। कवि भूषण कहते हैं- हे शाह पुत्र सरजा शिवाजी! इस संसार का भार वास्तव में आप ही उठाए हुये हैं। शेष नाग, दिगनाग तथा हिमालय आदि पर्वत तो कहने केलिए 'भूधर' हैं। हे शिवाजी! तुम्हारे अवतार ही सारे जगत की सुरक्षा और पालन पोषण केलिए हुआ है। इस काम में ईश्वर की कोई भूमिका नहीं है। हे सर्वसमर्थ शिवाजी महाराज! सच कहें तो आज के राजाओं में आपका ही जीना सार्थक है। हे शिवाजी! तुम्हारी तलवार ही अत्याचारी मुगलों का अंत करने वाली है। बेचारा काल तो जान लेने केलिए व्यर्थ ही बदनाम चला आ रहा है।

▶ छत्रपति शिवाजी देशभक्त और न्याय के प्रति अटूट आस्था रखनेवाले महानायक

विशेषः-

- कवि ने शिवाजी महाराज को एक कर्तव्यनिष्ठ शासक सिद्ध किया है।
- समर्थ ओज पूर्ण और साहित्यिक व्रज भाषा का प्रयोग है।
- शैली उत्साह भरने वाली और वीर रस को जगाने वाली है।
- 'साहिन मै सरजा', 'समत्थ सिवराज' में अनुप्रास अलंकार है।

▶ तत्कालीन समाज की विषमावस्था का चित्रण

4.4.4 भूषण की काव्यगत विशेषताएँ

अन्य रीतिकालीन कवि श्रृंगार की गन्दी गलियों में भटकते समय कराहते हुए राष्ट्र के संजीवनी दाता कविवर भूषण ने वीर रस की पवित्र गंगा बहाकर भगवती भारती को समुज्ज्वल किया। कवियों ने अपने आश्रयदाताओं की चाटूकारिता एवं नायिकाओं के नख-शिख वर्णन करते समय भूषण ने शिवाजी और छत्रसाल जैसे राष्ट्रनायकों एवं लोकरक्षक वीरों को अपने काव्य का विषय बनाकर उस कुत्सित परम्परा का विरोध किया। यह जनता में उत्साह एवं शक्ति का संचार किया। इस प्रकार भूषण ने उस समय की काव्यधारा में न बहकर अपने लिए नया मार्ग निश्चित किया था। श्रृंगार-प्रधान रीतिकाल में रहते हुए भी भूषण ने वीर रस से ओतप्रोत काव्य की रचना की है। इन्होंने युद्धवीर, दानवीर, कर्मवीर तथा दयावीर, सबका शिवाजी और छत्रसाल के वर्णन में सुन्दर निर्वाह किया है, किन्तु महत्त्व दिया है युद्धवीर को ही।

▶ जनता में उत्साह एवं शक्ति का संचार

4.4.4.1 वीर रस की प्रधानता

भूषण वीरकाव्य के श्रेष्ठ कवि है। इनके काव्य में कल्पना और पुराण की तुलना में इतिहास से अधिक सहायता ली गई है। कल्पना का प्रयोग कवि ने उतना ही किया गया है जिससे किसी तथ्य को प्रकाश में लाया जा सके। पौराणिक काव्य का प्रयोग कवि ने उपमाओं के रूप में किया है। इनके काव्य-नायक छत्रपति शिवाजी और छत्रसाल बुंदेला हैं। ये इतिहास प्रसिद्ध वीर नायक हैं। कवि ने इन्हीं वीर नायकों की वीरता का जयगान और इनके कर्मों की व्याख्या की है उनका नायक किसी से प्रेम करता हुआ नहीं दिखाया गया है। वह सदैव अन्याय दमन आदि में तत्पर दिखाया गया है। उनके काव्य में वीर भावना की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है। यह अभिव्यक्ति उस युग की वीरता का आदर्श और उदात्त रूप है।

▶ भूषण के काव्य में वीर भावना की व्यापक अभिव्यक्ति

4.4.4.2 राष्ट्रीय भावना की प्रधानता

भूषण हिन्दू जाति के प्रति एक संवेदनशील, स्पष्टवादी, निर्भीक एवं स्वामिभक्त कवि थे।

औरंगजेब के धार्मिक अत्याचार, एवं हिन्दू जनता की दुर्गति को देखकर उनका मन विद्रोह कर उठा था। इसी कारण वे एक श्रेष्ठ एवं आदर्श लोकनायक की खोज में आगरा से रायगढ़ गए और शिवाजी के आश्रय में रहकर उनके गौरवयुक्त चरित्र को अमरता प्रदान की। ये हिन्दी-साहित्य के प्रथम राष्ट्रीय कवि हैं और इनका काव्य हिन्दी में रचित सर्वप्रथम राष्ट्रीय काव्य हैं।

- हिन्दी-साहित्य के प्रथम राष्ट्रीय कवि

4.4.4.3 देश प्रेम

इस देश की धरती ने ऐसे कई महापुरुषों को जन्म दिया जिनके भीतर शेर का साहस था, चीते की तेज़ी थी और बाज़ की नज़र। जिन्होंने अपने शौर्य और पराक्रम के बल पर भारत का परचम लहराया। उन्हीं में एक नाम हैं शिवाजी महाराज। कवि भूषण की इस कविता से उनके पूरे व्यक्तित्व की कल्पना की जा सकती है।

- कवि भूषण की व्यक्तित्व की झलक

4.4.4.4 जन नायकों के प्रति श्रद्धा

पहले शिवाजी के दरबार में चले गए और जीवन के अंतिम दिनों तक वहीं रहे। इनके दूसरे आश्रय दाता महाराज छत्रसाल थे। इन्होंने अपने काव्य में इन्हीं दोनों की वीरता और पराक्रम का गुणगान किया है। कहते हैं कि भूषण से प्रभावित होकर ही महाराज छत्रसाल ने एक बार इनकी पालकी में कंधा लगाया था। शिवाजी ने इन्हें बहुत-सा धन और मान देकर समय-समय पर कृतार्थ किया था। छत्रसाल और शिवाजी के इन्हीं गुणों से प्रभावित होकर भूषण ने इनके गुणगान किया करते थे।

4.4.4.5 उचकोटि का कलापक्ष

भूषण ने कवित्त, सवैया, छप्पय आदि छंदों को अपने काव्य का आधार बनाया है। इन्होंने अनुप्रास, रूपक, यमक, उपमा, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का प्रमुखता एवं प्रचुरता से प्रयोग किया है। रीतिकालीन कवियों की भांति भूषण ने अलंकारों को अत्यधिक महत्व दिया है। उनकी कविता में प्रायः सभी अलंकार पाए जाते हैं।

- विभिन्न छन्द एवं अलंकारों का प्रयोग

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

भूषण अलंकारवादी आचार्य कवि थे। रीतिकाल के आचार्य कवियों ने लक्षण एवं उदाहरण की परिपाटी पर अपने ग्रन्थ की रचना की है। भूषण ने अलंकार के लक्षण बताते हुए उदाहरणस्वरूप शिवाजी एवं छत्रसाल के चरित्र का वर्णन किया है। आचार्य के रूप में अलंकार शास्त्र का विवेचन करते हुए किसी मौलिक सिद्धांत का प्रतिपादन उन्होंने भले ही नहीं किया है। किन्तु एक कवि के रूप में उनकी प्रतिभा असंदिग्ध है। वे रीतिकाल में वीर रस के सबसे बड़े कवि हैं। वीर रस के कवि के रूप में उन्होंने जो ख्याति अर्जित की थी, उसके आधार पर ही मिश्रबंधुओं ने उन्हें हिन्दी के नवरत्नों में महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. रीतिकाल के वीररसवाले कवि कौन है? उनके बारे में टिप्पणी लिखें।
2. राष्ट्रीय भावनावाले कवि भूषण का परिचय दीजिये।
3. शिवराज भूषण का महत्व क्या है?
4. भूषण की काव्यगत विशेषताएँ क्या-क्या है?

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल - हजारीप्रसाद द्विवेदी
2. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - गणपतिचंद्र गुप्त
3. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास - गुलाबराय

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का अतीत - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
4. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास- श्री गुलाबराय

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

സർവ്വകലാശാലാഗീതം

വിദ്യയാൽ സ്വതന്ത്രരാകണം
വിശ്വപൗരരായി മാറണം
ഗ്രഹപ്രസാദമായ് വിളങ്ങണം
ഗുരുപ്രകാശമേ നയിക്കണേ

കൂരിരുട്ടിൽ നിന്നു ഞങ്ങളെ
സൂര്യവീഥിയിൽ തെളിക്കണം
സ്നേഹദീപ്തിയായ് വിളങ്ങണം
നീതിവൈജയന്തി പാറണം

ശാസ്ത്രവ്യാപ്തിയെന്നുമേകണം
ജാതിഭേദമാകെ മാറണം
ബോധരശ്മിയിൽ തിളങ്ങുവാൻ
ജ്ഞാനകേന്ദ്രമേ ജ്വലിക്കണേ

കുരീപ്പുഴ ശ്രീകുമാർ

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Regional Centres

Kozhikode
Govt. Arts and Science College
Meenchantha, Kozhikode,
Kerala, Pin: 673002
Ph: 04952920228
email: rckdirector@sgou.ac.in

Thalassery
Govt. Brennen College
Dharmadam, Thalassery,
Kannur, Pin: 670106
Ph: 04902990494
email: rctdirector@sgou.ac.in

Tripunithura
Govt. College
Tripunithura, Ernakulam,
Kerala, Pin: 682301
Ph: 04842927436
email: rcedirector@sgou.ac.in

Pattambi
Sree Neelakanta Govt. Sanskrit College
Pattambi, Palakkad,
Kerala, Pin: 679303
Ph: 04662912009
email: rcpdirector@sgou.ac.in

प्राचीन और मध्यकालीन हिन्दी काव्य

Course Code: M23HD02DC

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

YouTube

ISBN 978-81-966843-1-0

9 788196 684310

Sreenarayanaguru Open University
Kollam, Kerala Pin- 691601, email: info@sgou.ac.in, www.sgou.ac.in Ph: +91 474 2966841